॥ ओ३म् ॥

यन्ति लोकम् ॥ अथर्व० १८।४।२ ॥

[illegible]ात्म-सुधा-४

अर्थात्

सामाजिक यज्ञ-पद्धतियां

यज्ञ प्रमाणित कृति

लेखक तथा संग्रहकर्ता :

श्री स्वामी विज्ञानानन्द सरस्वती

मूल्य : ७-५०

॥ ओ३म् ॥

निवेदन

स्वर्गीय श्री महात्मा प्रभुआश्रित जी महाराज आधुनिक युग के परम-तपस्वी, कर्मठयोगी एवं वैदिक मिशनरी थे जिन्होंने अपना सारा जीवन गायत्री अनुष्ठान, वेद, यज्ञ तथा योग के प्रचार-प्रसार में लगा दिया। आपकी प्रेम भरी वाणी बड़ी कोमल मधुर तथा सरल थी और लेखन अत्यन्त प्रभावशाली। जटिल से जटिल तथा गूढ़ विषयों को महात्मा जी ने बड़ी सुगम ... रोचक भाषा में सुलझाया है। यही कारण है कि सर्व-साधारण ही नहीं, विद्वान् भी आपकी रचनाओं का सम्मानपूर्वक अध्ययन करते हैं।

श्री महाराज जी १६-३-६७ ई० को ब्रह्मलोक सिधार गये हैं किन्तु उनका साहित्य आज भी हमारा पथ-प्रदर्शन कर रहा है। महाराज जी कृत लगभग ६ दर्जन पुस्तकों में आध्यात्मिक मार्ग का निरूपण किया गया है तथा हर पुस्तक के कई-कई संस्करण छप चुके हैं और मांग सदा बनी रहती है। इन पुस्तकों का मूल्य केवल लागत मात्र रह गया है ताकि सर्व-साधारण इससे अधिकाधिक लाभ उठा सकें। हमारा ध्येय धर्म-प्रचार है, धन कमाना नहीं।

अतः सब-प्रेमियों से प्रार्थना है कि इन पुस्तकों का अध्ययन करें तथा दूसरों तक पहुंचाकर पुण्य के भागी बनें।

स्वामी विज्ञानानन्द सरस्वती की पुस्तकें भी तैयार मिलती हैं।

विशेष सूचना :— आप महाराज जी द्वारा लिखित सभी पुस्तकें नीचे लिखे पते से भी ले सकते हैं।

१. ज़वाहर ग्लास कम्पनी, कुतुब रोड, दिल्ली।
२. गोविन्दराम हासानन्द, नई सड़क, दिल्ली।

निवेदक :— वैदिक भक्ति साधन आश्रम, रोहतक। फोन : ३२२६

॥ ओ३म् ॥

उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते देवान् यज्ञेन बोधय ।
आयुः प्राणं प्रजां पशून् कीर्तिं यजमानं च वर्धय ॥ अथर्व०

अध्यात्म-सुधा ४

(सामाजिक यज्ञ-पद्धत्तियाँ)

लेखक तथा संग्रहकर्ता :

स्वामी विज्ञानानन्द सरस्वती

वैदिक भक्ति साधन आश्रम, रोहतक ।

—: रचियता :—

'देवयज्ञ मर्यादा, 'गायत्री माता' 'सन्ध्या प्रभाकर' 'अध्यात्म सुधा १ से ५' 'मेरी मां' 'कुलीन स्त्री' 'परमेश्वर के अनुदान' 'प्रार्थना प्रदीप' गृहस्थ दुःख निवारण कायाकल्प यज्ञ

—: प्रकाशक :—

वैदिक भक्ति साधन आश्रम, रोहतक

सप्तम् संस्करण—११००

प्रकाशक :

वैदिक भक्ति साधन आश्रम, रोहतक ।

मुद्रक :
पं० परशराम शर्मा
लोकचेतना प्रिंटिंग प्रैस,
दिल्ली रोड, रोहतक ।

शुभ सम्मति

पूज्यपाद ब्रह्मलीन महात्मा
आनन्द स्वामी जी महाराज

श्री आचार्य सत्यभूषण जी महाराज ने यज्ञ के सम्बन्ध में बड़ी खोज करके गृहस्थियों के कल्याणार्थ लगभग हर प्रकार के यज्ञ की विधि एक ही पुस्तक में लिखकर बड़ा उपकार किया है। पुस्तक का नाम है "अध्यात्म सुधा" अर्थात् सामाजिक पद्धतियां। इसके द्वारा सर्वसाधारण भी सब अवसरों पर यज्ञ करा सकेंगे

हर मन्त्र का अर्थ भी साथ ही दे दिया है तथा क्रिया का कारण भी बतला दिया है। स्थान-स्थान पर उस मौके के गीत लिखकर पुस्तक को और भी उपयोगी बना दिया है। यह पुस्तक हर समय अपने पास रखनी चाहिये।

व्यास महिला आश्रम,
हरिद्वार

आनन्द स्वामी
सरस्वती

९-४-१९६०

शुभ सम्मति

श्री पूज्य आचार्य स्वामी सच्चिदानन्द जी अधिमात्र योगी

आर्यजनों को वाग्दान, जन्मदिवस, मिलनी, व्यापार मुहूर्त, शिलान्यास, पगड़ी पौर्णमास, अमावस्या यज्ञ, पाक्षिक यज्ञ, वर्षेष्टि यज्ञ आदि व्यवहारिक विधियाँ करने कराने में बड़ा संकोच और असमञ्जस होता था, इनकी कोई पद्धति आज तक बनाई नहीं गई। अन्य समारोहों में, संस्कारों आदि में भी सब वैदिक वाङ्मय में होने से जनसाधारण की समझ में कुछ नहीं आता, इस लिये वे ऐसे अवसरों पर उदासीन हो या गप्पें मारने लगते थे, या यज्ञ के होते-२ ही उसी स्थल पर खाने पीने की शैली आरम्भ करने लगे थे। जिससे यज्ञों संस्कारों और वैदिक कर्म काण्ड की लोक प्रियता घटने लगी। यज्ञों और संस्कारों को शीघ्र ही संक्षेप रूप कर समाप्त करने की मांग बढ़ने लगी, संक्षिप्त वैदिक संस्कारविधि तक भी ऋषि की संस्कारविधि को काट छांट कर छापी गई, और उसी का प्रचार भी हुआ। जिस से आचार्य दयानन्द की महत्ता घटी, और अश्रद्धालुओं की बन पड़ी श्री स्वामी विज्ञानानन्द जी सरस्वती(आचार्य सत्यभूषण
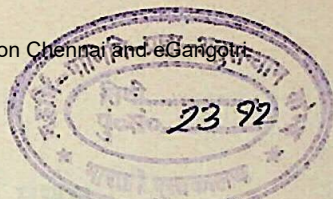
जी) ने बड़े परिश्रम से ऋषि भाष्य एवं अन्य भाष्यों का मंथन कर इन पद्धतियों के वैदिक स्वरूप को उपस्थित किया है। सामान्य प्रकरण और सामान्य विधि के सब मन्त्रों के अर्थ और भावार्थ भी इससे संकलित किये हैं। यजमान की दीक्षा, व्रतियों की दीक्षा, पूर्णाहुति क्रिया, सामग्री के विविध रोग निवारक तथा ऋतु अनुकूल प्रयोग भी दिये हैं। क्रियाओं की समाप्ति पर भावपूर्ण प्रार्थनाएं जन्म दिवस आदि विधियों के साथ भावपूर्ण समयोचित कविताएं गानरूप में देकर विधियों की रोचकता और उपकारिता को बढ़ा दिया है। वर्षेष्टि कारीर याग की अनुभूत सफल पद्धति को भी इसमें समाविष्ट कर दिया। हर प्रकार से सामाजिक पद्धतियों का यह संकलन सफल है। "अध्यात्म सुधा" नाम सार्थक हो गया है। प्रत्येक परिवार के लिए संग्राह्य है पुरोहितों के लिये अत्यन्त उपयोगी है। संस्कारी जीव इसका हृदय से स्वागत करेंगे। आचार्य जी इस सफल प्रयास के लिए बधाई के पात्र हैं। १५-२-१९६८

—:o:—

प्रथम संस्करण की भूमिका

उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते देवान् यज्ञेन बोधय ।
आयुः प्राणं प्रजां पशून् कीर्तिं यजमानं च वर्धय ॥
अ० १६-६३-१

प्यारे सज्जनो ! संसार में यदि निरोगतापूर्वक जीने की कामना है, यदि ऐश्वर्य, सुसन्तान और मान प्रतिष्ठा की इच्छा है, यदि सर्वप्रकार से समृद्धिशाली बनने की लालसा है तो यज्ञ द्वारा देवों को प्रसन्न करो। देवता ही सुख और ऐश्वर्य के देने वाले हैं। देवता उस सच्चे पिता की ओर ले जाने का मार्ग दर्शाने वाले हैं। यही वेद की आज्ञा है और भगवान कृष्ण भी इसी की साक्षी दे रहे हैं। गीता में आया है :—

देवान्भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः ।
परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ ॥ गीता ३-११

अर्थ—इस यज्ञ के द्वारा देवों को उन्नत करो। वे देवता तुम लोगों की उन्नति करेंगे । इस प्रकार परस्पर उन्नति करते हुवे परम कल्याण को प्राप्त होवोगे

इष्टान्भोगाह्नि वो देवा दास्यन्ते यज्ञभाविताः ।
तैर्दत्तानप्रदायैभ्यो यो भुंक्ते स्तेन एव सः ॥ गी० ३-१२

यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्विषैः।
भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात् ॥

गी० ३-१३

अर्थ—यज्ञ से प्रभावित हो कर वे देवता तुम्हें इष्ट भोगों को देंगे। देवता का भाग दिए बिना जो अन्न खाता है, वह देवताओं का चोर है ॥ १२ ॥

यज्ञ शेष खाने वाले सब पापों से मुक्त हो जाते हैं जो केवल अपने लिए पकाते हैं. वे पाप खाते हैं ॥ १३

इससे सिद्ध हुआ कि यज्ञ ही परम कल्याण और सुखों की खान है। जब भारतवर्ष में बड़े-बड़े यज्ञों का प्रचार था तो यह देश सब प्रकार के सुखों से पूरित था, महाभारत काल से यज्ञों की प्रथा लुप्त सी होती चली आ रही थी और देश निरन्तर रसातल को प्रगति करता जा रहा था, परन्तु दयालु भगवान् ने महर्षि स्वामी दयानन्द जी को जन्म देकर भारत का ही नहीं, प्राणी मात्र का उद्धार किया। उस योगी ने भारत के पतन के कारण का ठीक निदान करके मानव को पांच महायज्ञों के दैनिक करने का आदेश दिया और बृहद् यज्ञों की ओर ध्यान दिलाया। थोड़े काल में देश का संवार सुधार हुआ, यह सूर्य की भांति स्पष्ट है। जीवन

ने साथ न दिया, नहीं तो आज देश के कोने कोने से वेद की ध्वनि और बृहद् यज्ञों का धूआ निकलता दिखाई देता

ऋषि दयानन्द ने आर्य समाज का छठा नियम बनाया " संसार का उपकार करना आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य है" संसार का उपकार बिना यज्ञ के अन्य किसी भी साधन से सम्भव नहीं। आर्यसमाज ने महर्षि के देहावसान के बाद मानव जाति के कल्याण के लिए बहुत ही सराहनीय कार्य किया परन्तु बृहद् यज्ञों अर्थात ब्रह्मपरायण यज्ञों की ओर बहुत कम ध्यान दिया।

यह श्रेय इने गिने व्यक्तियों को प्राप्त हुआ; जिन में त्यागी, तपस्वी तथा योगी पूजनीय श्री महात्मा प्रभु आश्रित स्वामी जी महाराज का नाम विशेष रूप व वर्णनीय है। आपकी यह शैली सर्व साधारण को बहुत ही पसन्द आई। सहस्रों भूले भटके युवकों और परिवरों को, बच्चों और बूढ़ों को सन्मार्ग पर चलाकर आप ने देश भर में ऋषि के नाम और काम को सुप्रसिद्ध कर दिया। विनीत को आप के चरणों में रहने का सौभाग्य बाईस (१९६७ तक २५ वर्ष हो गए) वर्ष तक रहा है, आपके साथ रहकर बड़े-२ यज्ञों के कराने का सुअवसर

प्राप्त हुआ और अब भी हो रहा है जिसके लिए मैं गुरुदेव जी का अत्यन्त आभारी रहूँगा।

यह पुस्तक केवल और केवल उन्हीं के पवित्र विचारों और शैली पर निर्धारित है।

यज्ञों की कार्यवाही और पद्धति को रोचक तथा सर्व ग्राह्य बनाने के लिए कुछ काल से अध्यात्म-सुधा ट्रैक्ट माला छपवा कर वितरण का कार्य यज्ञों के सु-अवसर पर होता रहा। अध्यात्म सुधा का यह चौथा नम्बर है और इसने एक विस्तृत रूप धारण कर लिया है। धनी मानी यजमानों ने यह क्रम जारी कराया। इस अध्यात्म-सुधा के लिए श्रीयुत सेठ द्वारका प्रसाद जी बजाज रानी गंज (बंगाल) ने अपने पवित्र यजुर्वेद यज्ञ की पुण्य स्मृति में १५१) रुपया रानी गंज से भेजा। अनुमान यह था कि ४० पृष्ठ का ट्रैक्ट होगा और एक सहस्र प्रति के लिए यह राशि पर्याप्त होगी परन्तु पुस्तक को जब मित्रों तथा यज्ञ प्रेमी कई सज्जनों ने देखा तो उसे पूरा करने का परामर्श दिया; जिस के फल स्वरूप पुस्तक का आकार एक सौ पृष्ठ से भी बढ़ गया, इसलिए इसका मूल्य निश्चित करना पड़ा।

पुस्तक में आपकों प्रायः सब प्रकार के आवश्यक यज्ञों की पद्धति अर्थ सहित मिलेगी, इसमें पवित्र यजुर्वेद का परिचय, श्री महाराज के एक उपदेशामृत का सार, भक्ति के रसीले भजन, प्रार्थनाएं, हवन सामग्री के नुस्खे और अनेकों उपयोगी बातें मिलेंगी। दैनिक, सामाजिक तथा नैमित्तिक यज्ञों की विधि सरल, स्पष्ट और सुचारु रूप से मिलेगी। ध्यानपूर्वक पढ़ने से आपको यज्ञों से प्राप्त होने वाला आध्यात्मिकता का प्रवाह इसके अन्दर प्रतीत होगा। अधिक क्या लिखें, पढ़ने पर ही पुस्तक की उपयोगिता सिद्ध हो सकती है।

अन्त में श्री सेठ द्वारकाप्रसाद जी का धन्यवाद है जिन्होंने उदारता से इस पुस्तक के प्रकाशन में सहयोग दिया है। सामाजिक पद्धतियों के लिखने में हमने श्री मदनजीत जी आर्य की पुस्तक से बहुत सहायता ली है उनका भी धन्यवाद है।

वैदिक भक्ति साधन आश्रम
रोहतक
१३-८-१९५६

विनीत—
सत्यभूषण वानप्रस्थी
आचार्य

—:०:—

ओ३म्

छठा संस्करण

इस पुस्तक पर श्री पूज्य महात्मा प्रभु आश्रित जी ने १९६० में अपनी शुभ सम्मति प्रदान की और यज्ञों में इस पुस्तक को सदा साथ रखा।

चतुर्थ संस्करण ९-८-१९६८ ई० को और पांचवां सम्वर्धित संस्करण ३-५-१९७३ को प्रकाशित हुआ।

अध्यात्म सुधा का यह छठा संस्करण संशोधित तथा संवर्धित याजक जनता की भेंट किया जा रहा है। यज्ञों पर यह एक प्रमाणिक और सर्व प्रिय पुस्तक का रूप धारण कर चुकी है क्योंकि जितने विधि विधान इस के अन्दर दिए गए हैं अथवा बढ़ाए गए हैं प्रायः परीक्षण और अनुभव के बाद वेद के प्रमाण सहित लिखे गये हैं सम्भव है कई बातों से कोरे ज्ञानी जो कर्म काण्ड से शून्य हैं। हम से सहमत न हों। ऐसे प्रश्नों का इस नए संस्करण में समाधान किया गया है देखो यजुर्वेद ३-५१ ४-७।। कई एक अत्यन्त उपयोगी परिशिष्ट बढ़ाए गए हैं। जैसे यज्ञ से योग की सिद्धि, सूक्ष्म शरीर को जगाओ

जगाने के लाभ, यज्ञ में ज्योतिष, विविध रोगों के यज्ञ द्वारा उपचार, भिन्न-भिन्न औषधियों के यज्ञ में प्रयोग से चमत्कारिक लाभ, सोम रस के अनुपम गुण, बनाने की विधि—अब की९ औषधियों का और संमिश्रण किया गया है, आर्थिक संकट व अकाल मृत्यु, जरा आदि को हटाने और बुद्धि की समृद्धि यश कीर्ति और स्वामित्व की प्राप्ति और जीवन को सुखद बनाने के लिए चारों वेदों के चुने हुए मन्त्रों के आधार पर श्री सुक्त लिखा गया है जिसका समर्थन श्री० पं० वीरसैन वेदश्रमी अपनी श्री सुक्त नाम की लघु पुस्तिका में कर चुके हैं, हमने चन्द एक मन्त्रों का हेरफेर अपने अनुभव के आधार पर किया है; विधि भी साथ दे दी है।

पांचवां संस्करण २ वर्ष के भीतर समाप्त हो गया था। नये संस्करण का क्रमशः मिशाला बढ़ता गया अब लगभग ४०० पृष्ठ की यह विशद विधि विधान सहित अध्यात्म सुधा, हमारा विश्वास है, बहुत उपयोगी सिद्ध होगी। गृहस्थियों के आये दिन की विपत्तियों को दूर करने का पर्याप्त समाधान इसके अन्दर पाया जाएगा।

कागज़ और छपाई की मंहगाई के बावजूद मूल्य लागत मात्र जितना ही रख गया है। किसी आर्थिक लाभ को सन्मुख रखकर इस पुस्तक का निर्माण नहीं किया गया था। गुरुदेव स्वर्गीय महात्मा प्रभुआश्रित जी के परीक्षण तथा शैली और अनुभव के आधार पर सर्वसाधारण के लाभार्थ वैदिक भक्ति साधन आश्रम रोहतक की ओर से इसका प्रकाशन तथा वितरण किया जाता है।

जितना कार्य महात्मा जी ने महर्षि की शैली के आधार पर क्रियात्मिक रूप में किया और सहस्रों परिवारों का संवार सुधार किया। आर्य समाज एक संघटित संस्था होते हुए भी भक्ति मार्ग में इतना कार्य नहीं कर पाई। प्रचार कार्य बहुत किया परन्तु अपना व्यक्तित्व सुधार की ओर ध्यान न दे सकी, अब आवश्यकता क्रियात्मिक जीवन की है, अतः हम आशा करते हैं कि वैदिक धर्म के सच्चे शैदाई इसे अपना कर लाभ उठायेंगे और अपने तदनुकूल अथवा नवीन विचारों व अनुभवों से हमें सूचित कर अनुगृहीत करेंगे।

जहां जहां कोई त्रुटि न हो, सुधार के भाव से जिताए जाने पर यथा सम्भव संशोधन किया जा सकेगा।

प्रभुदेव आर्यों को सुमति प्रदान करें कि वह संसार के उपकार के लिये पहले अपने आप को बनायें और फिर आर्य समाज के छठे नियम का पालन कर चक्रवर्ती राज्य ला समस्त संसार को सुखद मार्ग पर चला सकें यही हमारी मंगल कामना है ! प्रभुदेव स्वीकार करें।

***

ओ३म्

सप्तम संस्करण की भूमिका

प्रिय याजक वृन्द ! प्रभु की असीम कृपा से आज अध्यात्म सुधा-४ (सामाजिक यज्ञ पद्धतियां) नामी पुस्तक का सातवां संस्करण आप महानुभावों के सन्मुख उपस्थित करने चला हूँ। गत छः संस्करणों से जनता जनार्दन और माननीय पुरोहित गण ने क्या लाभ व सन्मार्ग पर चल कर सिद्धि प्राप्ति का रस आस्वादन किया है यह वह स्वयं अनुमान लगा सकते हैं। प्रिय सज्जनों गत ४० वर्ष से सेवक इस क्रम के पीछे लगा रहा, और अब तक अन्तिम पग के समीप पहुँचते हुए भी बड़े २ यज्ञ इसी पुस्तक व शैली के आधार जो मेरे

पूज्यतम गुरुदेव ब्रह्मलीन महात्मा प्रभु आश्रित जी के चरणों में २५ वर्ष रहकर शिक्षा प्राप्त की और अनुभूतियों का लाभ उठाया और उनके स्वर्गारोहण के पश्चात मंगलमयी वेद वाणी के आधार पर नवीन २ अनुभूतियां अथवा सफल परीक्षण प्राप्त किए वह पुस्तक के ध्यानपूर्वक स्वाध्याय व तत्र प्रदर्शित शैली को अक्षरत श्रद्धा पूर्वक अपनाते हुए आप लोग पायेंगे तो भगवान का कोटिशः धन्यवाद अदा करेंगे।

परन्तु प्यारे सज्जनों ! यह याद रखें कि यज्ञ सफल नहीं होता जब तक --

(१) स्वाहा शब्द का उच्चारण स्पष्ट न हो।

(२) अग्नि प्रचण्ड न हो, धुमिल अग्नि आहुति का सतत विश्लेषण नहीं कर सकती।

(३) सामग्री और घृत जलती अग्नि पर न डाला जाए। समिधाओं पर डाली आहुति सिसक २ अग्नि का दम घूंट लेती है।

(४) जल में पड़ी सामग्री सड़ गई—कुण्ड के वाहर पड़े बेवक्त की मौत मर गई—कुण्ड में ही डालनी चाहिए।

(५) बाहर पड़ी सामग्री चुनकर कुण्ड में मत डालो जैसे मुख से निकल पड़ा ग्रास फिर मुख में नहीं दिया जाता, ऐसे यह यज्ञ का अपमान

है। वह सामग्री वृक्षों की जड़ में डाल दें खाद का काम करेगी।

(६) भाव सहित आहुति दें।

वेद भगवान् बार २ पुकार २ कर कह रहा है :—

(१) इयं यज्ञो देवया—यह यज्ञ परमेश्वर तक पहुँचता है।

(२) शुद्धा पूता भवत यज्ञियासः—यज्ञ जीवन को शुद्ध पवित्र बना देता है।

(३) इष्टकामधुक—सब कामनाओं को पूर्ण करते हैं।

(४) यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नोऽस्तु—जो तुम्हारी कामना है यज्ञ करो पूरी हो जायगी।

(५) हमारा यहां धर्म यज्ञ करना है—यजुर्वेद। अतः सावधानी से किया यज्ञ व्यर्थ नहीं जाता।

इस संस्करण में कई नवीन २ अनुभव व विधि विधान लिखा है समय-२ पर आप परीक्षा कर देख लेंगे।

पुस्तक को छपवाते २४ मास से अधिक समय लगा। कागज छपाई बहुत मंहगी हो गई। ४०, ५०% मंहगाई की पुकार यत्र, तत्र, सर्वत्र सुनी जा रही है अतः सब हालात व परेशानियों व लागत को सम्मुख रखते हुए मूल्य में वृद्धि करनी पड़ी जो समय के अनुकूल ही है।

प्रत्येक आर्य सज्जन और पुरोहित को यह पुस्तक अपने पास अवश्य रखनी चाहिए। आशा है भद्र जन लेखक का उत्साह बढ़ाएंगे। ॥ ओ३म् शम् ॥

वैदिक भक्ति साधन आश्रम — विज्ञानानन्द सरस्वती
रोहतक, १८–६–८० — सम्पादक

विषय-सूची

ओ३म् भूर्भुवः स्वः । तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि ।
धियो यो नः प्रचोदयात् ॥

स्व० महात्मा प्रभुआश्रित स्वामी जी महाराज

* ओ३म् *

देवताओं को वश में करना हो तो अग्निहोत्र करें

यज्ञ के महत्व को कैसी सरल भाषा में समझाया गया है यह जानना है तो नीचे लिखे उपदेश जो श्रीयुत वन्दनीय महात्मा प्रभुआश्रित स्वामी जी महाराज ने पिलानी में चौधरी रामचन्द्र जी के गृह पर २५-६-५५ को प्रातः के सत्सङ्ग में दिया, पढ़िये और लाभ उठाइये।

स्वामी विज्ञानानन्द सरस्वती
(सत्यभूषण आचार्य)

यज्ञ कौन करता है:—

प्रत्येक व्यक्ति का भाग्य कहां जो यज्ञ करे। यज्ञ को यजमान ही करता है। यजमान बनना तो बड़े भाग्यशाली का काम है। प्रभु का यज्ञ अखण्ड रूप से प्रतिक्षण चल रहा है। सब से बड़ा और अनुकरणीय यजमान भगवन् आप है। अतः जो भी यज्ञ करता है वह अवश्य प्रभु के प्रेम का पात्र होगा। वस्तुतः— परमेश्वर जिससे स्नेह करता है वही यज्ञ करता है।

गुरु नानक ने कहा है:—

सोई गाविन जो तुद भाविन ।
सै सिमरे जिन आप सिमराये ॥

जिनसे परमेश्वर आप स्मरण करता है वही स्मरण करते हैं। परमेश्वर उन्हीं से स्मरण कराता है जिन के पूर्व जन्म के संस्कार हों।

परमेश्वर के स्मरण का अर्थ है कि परमेश्वर उन को बल देता है। पूर्व संस्कारों के बदले में बल देता है जिस से वह उत्तेजित हो कर कर्म करता है। यदि कर्म करते उसको कोई अनुभूति न हो तो वह कर्म क्षीण हो जायेंगें ।

बच्चों के संस्कार बच्चों में बल पैदा करते हैं।

वेद पढ़ने का फल:—

बच्चे वेद पढ़ते हैं ज्ञान रहित यदि उनको यह ज्ञान हो जाये कि वेद मन्त्र के अर्थ क्या हैं तो उनका पढ़ना बीज के समान है। यदि पढ़ना ज्ञान रहित है तो खाद के समान, निर्थक किसी भी अवस्था में नहीं। महर्षि दयानन्द ने भी ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में वेद का केवल मात्र पढ़ना उत्तम बताया है। यदि भूमि को

तय्यार कर के बीज बोया जावे तो वह बढ़ेगा।

पं० गिरधारी लाल आर्यसमाज के उपदेशक थे। १८६७–६६ ई० की बात है। पं० गिरधारी लाल ने माँस भक्षरण पर ऐसा उपदेश दिया कि सब ने मांस छोड़ दिया, हम भी खाते थे। हम ने भी छोड़ दिया। उन्होंने गायत्री का भी उपदेश दिया, मुझे पूरा याद नहीं परन्तु इतना याद है कि गायत्री का उपदेश था, स्वर्गवासी श्री मास्टर दरबारी लाल जी, जो मेरे अध्यापक थे, उन्होंने मुझे बैठे-बैठे गायत्री मन्त्र लिखा दिया। मेरा कोई संस्कार पूर्व जन्म का था, जिस से उत्तेजित होकर मैंने जाप शुरु कर दिया। अब वह संस्कार आगे फैलने लगा।

कुएं की मुण्ड़ेर पर जाकर कुएं की ध्वनि में मैं तन्मय हो जाता था। कभी भय नहीं होता था। उसके बाद जब मैं जतोई गया तो सब के चरण स्पर्श करता था। माता के मुहल्ले में नानी के मुहल्ले में सब को नमस्कार करता था। एक वृद्धा ८० वर्षीया को मैंने नमस्कार किया। उसको फोड़ा निकला हुआ उसने मुझे कहा, बेटा ! (श्री महाराज जी का प्रसिद्ध नाम टेकचन्द था) कलाम पढ़ो। मैंने गायत्री मन्त्र पढ़ा।

ग्रौर हाथ फेर कर फूंक देता रहा, उसको ग्राराम ग्रा गया। मेरा विश्वास बढ़ गया। दूसरे दिन एक ग्रौर स्त्री के फोड़े पर कलाम पढ़ी। फिर मैंने पं० गंगाराम का गायत्री मन्त्र का ग्रर्थ पढ़ा। उस में लिखा था "सब सागर से पार करे।" सागर का ग्रर्थ मैं नहीं जानता था। परन्तु मैंने समझा कि सब को पार करती है। विश्वास बढ़ गया।

इस गायत्री द्वारा ग्रनुभूतियां हुईं। २६ वर्ष के बाद १९२४ ई० में इसके ग्रर्थ मेरे सामने ग्राये। उस के बाद मैंने ग्रफ्रीका में "गायत्री रहस्य" लिखी।

जब तक ग्रनुभूति नहीं होती ग्रोर उसको बार-२ स्मरण नहीं करता तो वह भूल जाती है।

शास्त्रों ने कहा, "श्रद्धा वीर्यं स्मृति समाधि प्रज्ञा" श्रद्धा सब से पहले है। फिर (वीर्यं) बल ग्राता है। फिर उसको बार-बार याद करे, फिर जब स्मरण करता है तो स्मरण करते करते समाधि लग जाती है ग्रौर नया ज्ञान प्राप्त होता है।

बूढ़ा एक बालक से स्नेह करता है, यदि वह बालक बूढ़े का निरादर कर दे, कभी डाढ़ी हिलाये, कभी कुछ करे, तो चूंकि बच्चा बूढ़े का निरादर करता है

इसलिए वह बालक बूढ़े को नहीं भाएगा। इसी प्रकार परमेश्वर के स्नेह के मार्ग में निरादर बड़ी भारी रुकावट है।

पररमेश्वर के स्नेह से जो जो वस्तु मिलेगी, वह है ज्ञान। ज्ञान न बढ़े तो राग और द्वेष बढ़ता जायेगा। परमेश्वर का निरादर देवों का निरादर है।

सब से पहला निरादर है वायु का बिगाड़ना। धूम्रपान करने वाला उसे प्यारा नहीं लगता। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने पवित्र यजुर्वेद के प्रथम अध्याय के सताईसवें मन्त्र के भावार्थ में लिखाः—
वेद का प्रकाश करने वाला ईश्वर हम लोगों के प्रति कहता है कि हे मनुष्यो! जो इस वायु जल तथा औषधियों को दूषित करने वाले दुर्गन्ध, अवगुण तथा दुष्ट मनुष्य हैं, वे सर्वदा निवारण करने चाहियें।" सिग्रेट तम्बाकू वायु को विषैला करते हैं, वायु के बिना कोई मनुष्य जीवित नहीं रह सकता। परमात्मा तो प्राणप्रद सुखद वायु दान करें और मानव उसको विषैला करके प्राण घातक बनाए तो प्रभु उससे कैसे प्यार करें?

दूसरा निरादर है अग्नि के द्वारा:—

अग्नि अपनी गर्मी से संसार का कल्याण करने वाली है। मेघ और विद्युत न कड़के तो वर्षा कैसे होगी संसार का कल्याण कैसे होगा ? अग्नि से तो प्राणियों का जीवन है। अग्नि प्रत्येक प्राणी और पदार्थ के अन्दर विद्यमान है। अग्नि पर मांस पकाना, हुक्का पीना आदि आदि सब अग्नि का निरादर है। अग्नि और वायु देवता कभी ऐसे मनुष्य का भला नहीं करते और न ही करेंगे। मैं यदि किसी के मुख में थूक दूं तो क्या मेरा कभी आदर होगा ? नहीं कदापि नहीं।

यदि हमने इस जन्म में कुछ किया भी और बिगाड़ दिया तो हमने कुछ न मिला।

इसलिये तम्बाकू सेवन करने वाले अथवा मांसाहारी को यज्ञ से कोई लाभ नहीं पहुँच सकता। प्रकरणान्तर से इस विषय को पुनः समझाते हैं।

यज्ञ का देवता इन्द्र है:—

वह देगा धर्मात्मा खजाञ्ची को। हम हैं अमीन्न (अमानतदार); परमेश्वर ने धन दिया, मकान, मोटर गाड़ी, मान, शान, सब कुछ मनुष्य को दिया। सब कुछ जो मनुष्य देता है वह अपने पुत्र को देता है, हम

थे उसके अमृत पुत्र । अमानत में हस्तक्षेप करने से वह हमें कुछ नहीं देगा । यज्ञ का देवता इन्द्र है, वह अग्नि के द्वारा सब ऐश्वर्य, सब पदार्थ, सोना, चांदी, फल-फूल मेवा आदि देता है ।

हाथ का देवता इन्द्र है तो परमेश्वर उस हाथ को देगा । उसके देवताओं ने अग्नि द्वारा सब कुछ दिया । यदि हमने बददियानती की तो हमारा हाथ छिन जाएगा ।

कितने आदमी ऐसे हैं जो मासिक वेतन मिलने से पूर्व ही व्यय कर बैठते हैं और ऋणी बन जाते हैं । एक के हाथ निस्तेज हैं, एक ऐसे हैं जिनको पैसा दिया, उसका नाश हो गया । एक माता के हाथ में बरकत है । वह रोटी बनाती है, खाने वाले तृप्त हो जाते हैं ।

जो लोग इन्द्र के साथ इमानदारी नहीं करते, उन से परमेश्वर हाथ छीन लेता है । अब हाथ को इमानदार कैसे बनाएं ?

हमारे हाथ और वाणी दोनों चीजें काम करने वाली हैं । शरीर का बल हाथ से और बुद्धि का बल वाणी से प्रकट होगा । शरीर के लिए जो कुछ चाहिए उसको हाथ प्रकट करेंगे । वाणी में शक्ति है तो बुद्धि बल को प्रकट करेगी । वाणी का देवता अग्नि है । हाथ

का देवता इन्द्र है, इससे मालूम हुआ कि संसार के प्राणियों को वश में करना हाथ का काम है। भगवान् कृष्ण ने गीता में कहा है:—

देवान्भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः।
परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ ॥ गी० ३—११

अर्थात् इस यज्ञ द्वारा देवताओं को प्रसन्न करो और वे देवता तुम लोगों को प्रश्न करेंगे, इस प्रकार आपस में कर्तव्य समझ कर उन्नति करते हुए परम कल्याण को प्राप्त होवोगे।

इष्टान्भोगान्हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञभाविताः।
तैर्दत्तानप्रदायैभ्यो यो भुङ्क्ते स्तेन एव सः ॥३—१२॥

अर्थ—यज्ञ द्वारा बढ़ाये हुए देवता लोग तुम्हारे लिए (बिना मांगे ही) प्रिय भोगों को देंगे, उन के द्वारा दिए हुए भोगों को जो पुरुष उनके बिना दिये ही भोगते हैं वे निश्चय चोर हैं।

अतः प्रत्येक मनुष्य को जिसको परम सुख की चाह है, उसे अग्निहोत्र द्वारा देवों को वश में करना चाहिए। बच्चों को अभी से ही इन बातों का ज्ञान कराना और उन में प्रवृत्त करना चाहिए।

भगवान् करे कि हम वेद के पवित्र आशय को

समझें और यज्ञ द्वारा उसकी पूजा करना सीखें।

ओ३म् शम्

प्रार्थना

नमस्कार

उपत्वाग्ने दिवेदिवे दोषावस्तर्धिया वयम्।
नमो भरन्त एमसि॥ ऋ० मं० १ सू० १ मं० ७

प्रभो! मैं तेरे द्वार पर आया हूँ। इतना निर्धन और कंगाल कि कुछ ठिकाना नहीं। न मेरे पास अन्न है न धन, न कपड़ा लत्ता, न व्यवहार कुशलता (मति) इतना कंगाल हूँ कि यह तन रूपी चोला जो ओढा हुआ है यह भी अपना नहीं। सारे संसार के धन सम्पत्ति, वैभव, ऐश्वर्य और शक्ति का तू स्वामी है। तू महाराजाओं का महाराज, सम्राटों का महा सम्राट है। और मैं हूँ भूखा भक्त।

फिर भी एक वस्तु मेरे पास ऐसी है जो तेरे पास नहीं। तुझे अपनी सम्पत्ति का गर्व हो सकता है, मुझे

भी इस बात का गर्व हो सकता है कि अन्ततः मैं भी गया गुजरा नहीं। मेरे पास भी कुछ ऐसी वस्तु हैं जिस से तू शून्य है और जिसकी सदा तुझे आवश्यकता रहती है। आवश्यकता यदि नहीं तो तू इच्छा तो जरूर करता है कि यह निर्धन कंगाल जीव मेरी भेंट करे।

मैं आया हूँ और प्रातः सायं आता हूँ तेरे पवित्र चरणों में। तू स्रष्टा है, द्रष्टा है, निर्माता है, विधाता है तू राजा है महाराजा है।

मैं आता हूं कि याचक बनकर और इसी में अपना सौभाग्य समझता हूँ कि मैं तुझ जैसे अद्भुत अनुपम महाराज के द्वार पर आया हूं। डरता, कांपता, रोता, चिल्लाता हुआ भी द्वार पर आ गया हूँ। तेरी ही पवित्र वाणी में अपने विचार रखने और भेंट करने—

उप त्वाग्ने दिवेदिवे दोषावस्तर्धिया वयम्।
नमो भरन्त एमसि ॥ ऋ० मं० १—१—७

मैं नमस्कार की भेंट लाया हूँ जैसे सुदामा ने तण्डुल भगवान् कृष्ण की भेंट किये थे। और श्रद्धा और प्रेम से लाया हूँ बस यही कृपा करो। इसे स्वीकार करो भगवन्! मैं सच्च कहता हूं और मेरे पास कोई चीज़ नहीं

जिसे मैं अपनी कह सकूं और जिसको मैंने छिपा रखा हो। मेरे पास केवल यही नमस्कार है और यही तेरे चरणों में भेंट करता हूं, निःशेष अर्पण करता हूं। स्वीकार कर! स्वीकार कर!! स्वीकार कर!!! मैं बदला नहीं मांगता हूं तू महान् दाता है, बिना मांगे ही दिये जाता है तो फिर मुझे मांगने की जरूरत ही क्या है।

मगफरत पर है तेरी मुझ को नाज़।
ऐ मेरे कारसाज़ो बन्दा नवाज़॥
तू अनीसे दिले गरीबां है,
मरहमे जख़्मे सीना रेशां है॥

तू दाता है मैं भिक्षुक, जब तू स्वभाव से लाचार है देने को, तो मेरा भी स्वभाव बनादे कि मैं तुझे ही नमस्कार करता और झुकता रब। यही कुछ मुझे यज्ञ से अथवा यज्ञों से प्राप्त हो जाए तो मैं अपना जीवन सफल समझूंगा। बस, यही मेरी आशा है और प्रार्थना है कि इस स्वल्प-सी अरदास को, नमस्कार को आप स्वीकार करें।

ओ३म् शम्

ब्रह्मनिष्ठ सेवा का फल

१—यत्र देवा ब्रह्मविदो ब्रह्म जेष्ठमुपासते ।
वो वै तान् विद्यात् प्रत्यक्षं स ब्रह्मा वेदिता स्यात् ॥
अ० १०—७—२४

भा०—(यत्र) जिसके आश्रय पर (देवाः) समस्त देवगण हैं, उस (ज्येष्ठं ब्रह्म) सर्वोत्कृष्ट परब्रह्म की (ब्रह्मविद) ब्रह्मवेत्ता ऋषि (उपासते) उपासना करते हैं। (यः) जो (वै) भी (पान्) उन ब्रह्मवादियों का (प्रत्यक्षम्) साक्षात् (विद्यात्) सत्संग लाभ करे (सः वेदिता) वह भी ज्ञानी (ब्रह्मा) ब्रह्मवेत्ता (स्यात्) हो जाये ।

२—होता यक्षत्सुबर्हिषं पूषण्वन्तममर्त्यं सीदन्तं बर्हिषि प्रियेऽममृतेन्द्रं वयोधसम् बृहतीं छन्दऽइन्द्रियं त्रिवत्सं गां गां वयो दधद्वेत्वाज्यस्य होतर्यज ॥ यजु० २८-२७॥

भा०—जो मनुष्य वेद पाठी ब्रह्मनिष्ठ योगी पुरुष का सेवन करते हैं, वे सब अभीष्ट सुखों को प्राप्त होते हैं।
(दयानन्द)

पञ्च महा यज्ञों की आवश्यकता

मनु भगवान् ने मनुस्मृति में गृहस्थियों के पांच प्रकार के पाप गिनाए हैं:—

पञ्च सूना गृहस्थस्य चुल्ही पेषणपस्करः ।
कण्डनी चोदकुम्भश्च बध्यते यास्तु वाहयन् ।। ३-६८

ये पांच वस्तु गृहस्थ की हिंसा का मूल हैं:—

१. चूल्हा, २. चक्की, ३. झाड़ू, ४. उलूखल, ५. जल का घड़ा । इनको अपने कामों में लाता हुआ पाप से बन्ध जाता है ।

तासां क्रमेण सर्वासां निष्कृत्यर्थं महर्षिभिः ।
पञ्चक्लृप्ता महायज्ञाः प्रत्यहं गृहमेधिनाम् । ३-६९
अध्यापनं ब्रह्मयज्ञ पितृयज्ञस्तु तर्पणम् ।
होमो दैवो बलिभौतो नृयज्ञोऽतिथि पूजनम् । ३-७०

गृहस्थों के उन पापों के प्रायश्चित्तार्थं महर्षियों ने प्रतिदिन के पांच महायज्ञ रचे हैं । ३९ ।।

ब्रह्मयज्ञ=सन्ध्या वन्दन तथा पढ़ाना, पितृयज्ञ=तर्पण, देवयज्ञ=होम, भूतयज्ञ=भूतबलि और मनुष्ययज्ञ=अतिथी भोजन ।।७०।।

पञ्चैतान्यो महायज्ञान्न हापयति शक्तितः ।
स गृहेऽपि वसन्नित्यं सूनादोषैर्न लिप्यते ॥

जो इन पांच महायज्ञों को अपनी शक्ति भर न छोड़े, वह पुरुष गृह में बसता हुआ भी हिंसा के दोषों से लिप्त नहीं होता ॥

* ओ३म् *

यज्ञ पद्धतियां

वेद—परिचय

वेद ईश्वरीय ज्ञान का नाम है। यह चार भागों में विभक्त है, ऋग्, यजु०, साम और अथर्व।

१. ऋग्वेद में १० मण्डल, आठ अष्टक ६४ अध्याय, ८४ अनुवाक, १०२८ सूक्त, १०२४ वर्ग, १०५५२ मन्त्र २, ५३.७९२ शब्द, २०९ देवता और ३५४ ऋषि हैं। जिनमें से २१ ब्रह्मवादिनी ऋषिकाएं हैं:-रोमशा, लोपामुद्रा, विश्ववारा, शश्वती, अपाला, यमी सूर्य्या, घोषा, इन्द्राणी, उर्वशी, दक्षिणा, सरमा, जुहू वग्, रात्री, गोधा श्रद्धा, इन्द्रमातरः, शची, सर्पराज्ञी और इन्द्राणी।

ऋग्वेद ज्ञान का वेद है, तिनके से लेकर परमेश्वर पर्यन्त सब पदार्थों का यह ज्ञान भण्डार है।

२. यजुर्वेद कर्म काण्ड का वेद है। इसमें ४० अध्याय,

१९७५ मन्त्र, ९०५२५शब्द, २१३० ए हैं। इसके मंत्रों में लगभग आधे मन्त्र ऋग्वेद के हैं। विस्तार से इसकी झांकी आगे दिखाई है।

३. सामवेद—यह उपासना वेद है। इसमें २७ अध्याय, ८७ साम, १८७५ मन्त्र हैं। साम के दो भाग हैं। पूर्वार्चिक और उत्तरार्चिक। पूर्वार्चिक में ६४० मंत्र और १० महानाम्नी के मिला कर ६४० मन्त्र हैं। उतरार्चिक के १२२५ मन्त्र हैं।

४. अथर्ववेद–विज्ञान का वेद है। इसमें २० काण्ड २४ प्रपाठक, १११ अनुवाक, ७६० सूक्त, ७३१ वर्ग और ५९७७ मन्त्र हैं इस प्रकार कुल मिला कर चारों में २०३७९ मन्त्र हैं।

शाखा—ऋग्वेद की २१, यजुर्वेद की १०१, साम की १०००, अथर्व की ९ कुल ११३१ शाखाएं हैं।

पवित्र यजुर्वेद की झांकी

प्रत्येक अध्याय की आन्तरिक झांकी अवलोकन कीजिए।

प्रथम अध्याय में—श्रेष्ठतम कर्म (यज्ञ) करने का आदेश है। यज्ञ करने से मनुष्य को रोगों से छुटकारा मिलता है, सुखों की वृद्धि होती है, चोर, डाकू, पापी आदि का भय जाता रहता है। यज्ञ उजड़े घरों को

ओ३म् सत्यम् शिवम् सुन्दरम्
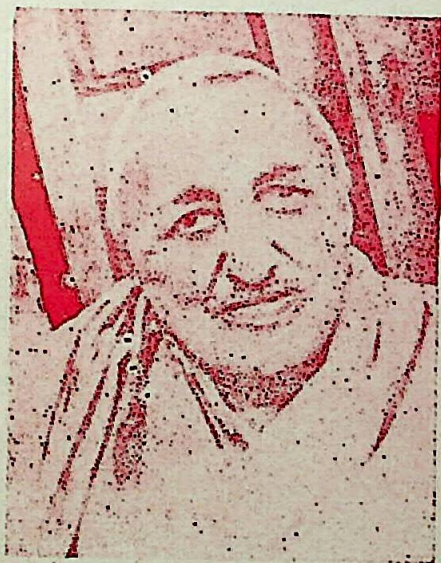
लेखकः- स्वामी विज्ञानानन्द जी सरस्वती

आबाद करने वाला, पवित्रता का प्रकाश, पृथ्वी का राज्य, प्राणप्रद शुद्ध वायु का भण्डार और मुक्ति का साधन प्रदान करने वाला, कुटिलता युक्त व्यवहार से विमुक्त कराने वाला, अतुल सुखों की खान है, अतः वेद के प्रत्येक मन्त्र से यज्ञ करना चाहिए। १, २, ३०

दूसरे अध्याय में कहा है। जो यज्ञ को छोड़ देता है, परमेश्वर भी उसको छोड़ देता है क्यों ? दुःख भोगने के लिए। उसकी बुद्धि राक्षसी बुद्धि हो जाती है और जो मनुष्य मन वचन और कर्म से विपरीत व्यवहार करते हैं वह नीच योनियों को प्राप्त होते हैं।

तीसरे अध्याय में—श्रद्धा और प्रेम से सर्वोतम पदार्थों से यज्ञ करना, परमेश्वर की कृपा वा अपने पुरुषार्थ से अग्निविद्या का सम्पादन करके अनेक प्रकार के धन और बलों को बढ़ाना, तथा अतिथि सेवा का आदेश है। २, ४०, ४३

चौथे अध्याय में—आत्माग्नि को जागृत रखने का आदेश है। १४

पांचवें अध्याय में—पृथ्वी से द्युलोक तक को घी से भर देने अर्थात् बड़े-बड़े यज्ञ करने की आज्ञा है। यज्ञ से शुभ सन्तान पशुधन और सर्वप्रियता प्राप्त होती है। २७

छठे अध्याय में—शिष्य और गुरु का सम्बन्ध शिष्य के माता पिता की गुरु के प्रति भेंट, गुरु की प्रतिज्ञा आदि का वर्णन है। ८, १४

सातवें अध्याय में—श्रेष्ठ आचार के बिना मानव को परमात्मा स्वीकार नहीं करता जबतक आत्मिक बल नहीं हो सकता, जबतक आत्मिक बल नहो तबतक अत्यन्त सुख भी नहीं होता इस शरीर के अन्दर परमात्मा ने तीनों लोकों का समावेश कर रखा है, उसके जानने के लिए योग की शिक्षा लेनी चाहिए, बिना योग के कोई पूर्ण विद्वान् नहीं हो सकता, न विद्या के बिना अपने तथा परमात्मा के स्वरूप का ज्ञान प्राप्त कर सकता है। ६, २८

आठवें अध्याय में—गृहस्थ का बड़ा सुन्दर निरूपण है। पुत्र कब और कैसे मिलता है, स्त्री में क्या-क्या गुण होने चाहियें, स्त्री को अपने पति को उपदेश तथा दण्ड देने का कब अधिकार है। ५, ४३ ४८

नवें और दसवें अध्याय में—राज विषय का ज्ञान है।

ग्यारहवें अध्याय में—योग को ईश्वर प्राप्ति का साधन बताया है, स्त्री पुरुष आपस में कैसे बर्तें इत्यादि गृहस्थ उपयोगी विषयों का वर्णन है। १४, ५०, ५६

बाहरवें अध्याय में—माता पिता से अच्छी शिक्षा पाया पुत्र यदि माता की सेवा करे और जैसे माता पुत्रों

को पालती है वैसे प्रजा का पालन करे तो वह तो राजैश्वर्य से प्रकाशित होती है।

माता पिता को गर्भ काल में सावधानी से गर्भ गत बालक की इच्छाओं को पूरा करना और उस में अच्छे संस्कार प्रविष्ट करने चाहियें, और साथ ही मानव जीवन की क्षणभंगुरता और मानव के कर्त्तव्य बताये हैं।
१५, ५१, ७६

तेरहवें अध्याय में—गायत्री को वेदों का प्राण बताया है। गायत्री के उपांशु जाप से तीन प्रकार का विलक्षण मनोरंजक फल ज्ञान कर्म और उपासना के रूप में मिलता है। ५४

चौदहवें अध्याय में—पति किस प्रकार पत्नी से आयु प्राण, अपान आदि की रक्षा तथा मन की प्रसन्नता और आत्मा की ज्योति प्राप्त करने की प्रार्थना करता है, और प्रभु की सारी सृष्टि आनन्दमग्न नृत्य कर रही है। १७, १६

पन्द्रहवें अध्याय में—यजमान को सब देवता किस प्रकार स्वर्ग ले जाते हैं। द्वेष भावना का कैसे परित्याग हो। ६ से १४ तक

सोहलवां अध्याय—रुद्र अध्याय है। इसमें परमात्मा की रुद्र शक्ति का वर्णन है। इसके बार बार पढ़ने और मनन करने से रुद्र शक्ति प्राप्त होती है। नमः

शब्द के इस अध्याय में बहुत अर्थ किए हैं। छोटे बड़े बराबर वालों को नमस्ते करने का आदेश इसी अध्याय में है। १८५ बार इस अध्याय में नमः शब्द आया है।

सत्रहवें अध्याय में—यौगिक सिद्धियां गायत्री और यज्ञ का स्वरूप तथा प्रभु के दर्शन कब और कैसे होते हैं, इत्यादि वर्णन है। ६७, ९१, ९७

अठारहवां अध्याय—चमक-दमक का अध्याय है। वृहद् यज्ञों से ३४७ प्रकार के सुखदायी पदार्थ मिलते हैं। प्रभु प्राप्ति भी ऐसे यज्ञों से होती है।

उन्नीसवां अध्याय—पितरों का अध्याय है। पितरों की सेवा पितरों को नमस्कार कैसे करें तथा उसका फल बताया है और यह भी बताया है कि पितर पांच प्रकार हैं और कौन कौन से। ५१, ६२

बीसवें अध्याय में—वरुण देव हमारे अन्दर धरना मार कर बैठा हुआ है। हमारे कर्मों का द्रष्टा और फलदाता वही है। जहां दिल और दिमाग दोनों में अनुकूलता है वहीं सुख होगा। २, २५

इक्कीसवें अध्याय में—प्रभु से पुकार और यज्ञ में दुग्ध, सोम, घृत इत्यादि से होम करने का विधान है।

बाईसवें अध्याय में—प्रभु सृष्टि के प्रत्येक पदार्थ

और लोक के लिए यज्ञ का विधान है सामूहिक प्रार्थना का रूप भी बताया है। नौ से चौदह मन्त्र तक गायत्री का महत्त्व बताया है। ९ से १४, २०, २१, २२

तेईसवें अध्याय में—प्रश्नोत्तर द्वारा अनेक सूक्ष्म विषयों का ज्ञान तथा यज्ञ की महिमा बताई है। मांसाहारी और व्याभिचार के दण्ड का विधान है।
९, १२, २१, ३४, ४०, ६१

चौबीसवें अध्याय में—पशुओं और उनके गुणों का वर्णन है।

पच्चीसवें अध्याय में—कानों से भद्र सुनें, आंखों से भद्र देखें, हमारे सङ्कल्प भद्र हों इत्यादि इत्यादि बर्णन है।

छब्बीसवें अध्याय में—वेद की कल्याणी वाणी मनुष्य-मात्र के लिए है। बुद्धि का विकास कैसे हो सकता है यह बताया है। २, १५

सताईसवें अध्याय में—परमेश्वर की महत्ता बताई है। १६

अठाईसवें अध्याय में—होता बनकर यज्ञ करने की आज्ञा दी है। ब्रह्मनिष्ठ की सेवा तथा यज्ञशेष खाने

का फल बताया है।

उनतीसवें अध्याय में—मानव शरीर की कमजोरी तथा उसको कैसे दूर कर सफल हों यह बताया है। आज्ञाकारी सन्तान, धर्मात्मा माता पिता, निश्छल निष्कपट और निस्वार्थ गुरु कैसे मिलते हैं यह बताया है।

तीसवें अध्याय में—भिन्न भिन्न व्यवसायों का वर्णन है नृत्य, गाना बजाना, ताली पीटना भी इसी अध्याय में वर्णित है।

इकत्तीसवें अध्याय में—प्रभु का विराट् स्वरूप बताया है यह पुरुष सूक्त कहलाता है।

बत्तीसवें अध्याय में—प्रभु को निराकार सर्वव्यापक और भिन्न भिन्न नामों से पुकारा गया है। उसकी कोई प्रतिमा (मूर्ति) नहीं। १, २, ३

तैतीसवें अध्याय में—सन्तानों में सच्ची आस्तिकता पैदा करने की विधि बताई है।

चौतीसवें अध्याय में—मन की पवित्रता प्रातः वेला में प्रभु स्मरण की प्रार्थनायें हैं। १–६, ३४, ४८

पैंतीसवें अध्याय में—यह बताया है कि जीव शरीर को छोड़ कर किस प्रकार गर्भ में आता है। और भवसागर को पथरीली नदी की उपमा देकर सावधानी

से उसे पार करने का आदेश किया है और कुलीन स्त्री के गुण बताए हैं। ३, १२, २१

छत्तीसवां अध्याय—शान्ति का अध्याय है। गायत्री मन्त्र के साथ इसका विशेष सम्बन्ध है। मेरा निश्चय है गायत्री के एक एक अक्षर की एक एक मन्त्र व्याख्या है कृतार्थ करें।

सैंतीसवें अध्यायमें—प्रभु हमारे माता पिता हैं, उसको हमारा नमस्कार है। उसी से हमारी प्रार्थना है कि वह हमारा नाश न करके हमें पुत्र परिवार से बढ़ावें। २०

अड़तीसवें अध्याय में—यज्ञ को "द्विविधा" बताया है और इसे हृदय में धारण करने की आज्ञा है। ११

उनतालीसवें अध्याय में—आध्यात्मिकता का वर्णन है। ये मन्त्र अन्त्येष्ठि कर्म में भी प्रयुक्त किए जाते हैं।

चालीसवाँ अध्याय—वेदान्त का अध्याय है। ईशोपनिषद् इसी के आधार पर बना, प्रभु मिलने की राह इसी में बताई है। इस अध्याय के बार बार स्वाध्याय से सूक्ष्म शरीर पवित्र होता है, प्रभु का निज नाम "ओ३म्" है उसी के स्मरण का आदेश है।

यज्ञ से लाभ

नाम नाम्ना जोहवीति पुरा सूर्यात् पुरोषसः ।
यदजः प्रथमं सं बभूव स ह तत् स्वराज्यमियाय
यस्मान्नान्यत् परमस्ति भूतम् ।। अथर्व १०-७-३१

नामी को उसके कर्मोंसे याद करना चाहिए यह उत्तम है,

१- अग्निहोत्रं जुहुयात स्वर्गकामः ।।

स्वर्ग की कामना बाला अग्निहोत्र करे ।।

२- यज्ञार्थात् कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः ।।
।। मी० ३९ ।।

यज्ञ से अतिरिक्त जितनेभी कर्म हैं, वेसब बन्धनके हेतु हैं।

३- स्वर्गकामो यजेत—

दर्शपौर्णमासाभ्यां स्वर्गकामो यजेत ।

स्वर्ग की कामना वाला पुरुष दर्श पौर्णमास यज्ञ करे

४-अवते हेडोवरुण नमोभिरवयज्ञेभिरीमहे हविर्भिः

परमेश्वर की प्रसन्नता दो प्रकार से हो सकती है, यज्ञ से हवि द्वारा वा नमस्कार से, अहङ्कार त्यागने से।

५- स यज्ञेन वनवद् देव मर्त्तान् ।
ऋ० मं० ५, सू० ३ मं० ५

वह परमात्मा यज्ञ के द्वारा मनुष्यों को निरन्तर भक्ति युक्त कर देता है।

६-ईजानाः स्वर्गं यन्ति लोकम् । अ० १८,६,२

यज्ञ द्वारा देव उपासना करने वाले लोग स्वर्ग सुख-मय लोक को प्राप्त होते हैं ।

७- देवेभ्यो हि प्रथमं यज्ञियेभ्योऽमृतत्वं सुवसि भागमुत्तमम् । ऋ० ४-५२-२ ।

(यज्ञिय) देवों के लिए सब से पहला और उत्तम मोक्ष रूप भाग देता है । मुक्ति के अधिकारी यज्ञिय देव हैं । सचमुच यज्ञ के बिना मुक्ति नहीं मिल सकती ।

८- अयं यज्ञो देवाय, अयं मियेध इमा ब्रह्मण्य-मिन्द्र सोमः ऋ० १ अ० २३ सू १७७ मं ४

यह यज्ञ देव परमात्मा तक ले जाने वाला है यह पवित्र है और पवित्र करने वाला है । अर्थात् यज्ञ देव प्राप्ति का साधन है, यज्ञ के अनुष्ठान से अतुल धन धान्य प्राप्त होता है ।

९- नौ हि त्वा एषा स्वर्ग्या यदग्निहोत्रम् शत-पथ । २८-३-३-१५

यह जो अग्निहोत्र है निश्चय करके स्वर्ग सुख को कराने वाली नौका है ।

१०- नायं लोकोऽस्त्ययज्ञस्य कुतोऽन्यः कुरुसत्तम ॥

गी० ४-३१

यज्ञ रहित पुरुष के लिए यह लोक सुखदायी नहीं फिर परलोक कैसे सुखदायी हो सकता है।

११- प्राञ्चं यज्ञप्रणयता सखायः ।

ऋ० १०।१०।१।२

प्रत्येक शुभ कार्य को यज्ञ के साथ आरम्भ करो।

१२- आ त्वाऽद्य सधस्तुतिं वावातुः सख्युरागहि। उपस्तुतिर्मघोनां प्रत्वावत्वधा ते वश्मि सुष्टुतिम्। ऋ० मं० ८ सू० १ मं० १६

भावार्थ—सब मनुष्यों को चाहिए कि प्रत्येक शुभ कार्य के पूर्व यज्ञादि द्वारा परमात्मा की प्रार्थना उपासना करके कार्य आरम्भ करें।

१३- मा सुनीतेति सोमम् ॥ ऋ०मं० २ सू० ३० मं० ७
यज्ञानुष्ठान की महान् उपासना बन्द न करो।

१४- मनुः ह वै (प्रजापति) अग्रे यज्ञेन ईजे।
तद् अनुकृत्य इमाः प्रजाः यजन्ते ॥

शत० १, ५, २, ७

अर्थ—सब से पहले निश्चय प्रसिद्ध प्रजापति मनु ने यज्ञ से ईश्वर पूजन किया। उसका अनुकरण कर यह सब प्रजाएं यज्ञ से ईश्वर का पूजन करती हैं।

१५- यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म। तस्मात् मनुष्येभ्यो यज्ञं प्राह ॥ गी ३, २, १३ ॥

अर्थ—यज्ञ निश्चय श्रेष्ठतम कर्म है, इसलिये मनुष्यों के लिये यज्ञ कहा गया।

१६- सर्वेषां वै एषः भूतानां, सर्वेषां देवानाम् आत्मा यद् यज्ञः तस्य समृद्धिम् अनु यजमानः प्रजया पशुभि ऋध्यते ॥ शत० १४, ३, २, १

अर्थ—निस्संदेह यह सब प्राणियों का और देवताओं का जीवन है, जो यज्ञ है, उस यज्ञ को समृद्धि (सर्वाङ्ग-पूर्ण अनुष्ठान) से यजमान प्रजा और पशुओं से समृद्धि को प्राप्त होता है।

१७- यावज्जीवमग्निहोत्रं जुहुयात्।

१८- यावज्जीवं दर्शपूर्णमासाभ्यां यजेत इति ब्रह्मणम्।

जब तक जीवे, अग्निहोत्र कर और दर्श पौर्णमास यज्ञ करे ॥

यज्ञ से संतान की प्राप्ति

१९- आवंसते मघवा वीरवद्यशः समिद्धो द्युम्न्याहुतः ।
कुविन्नो अस्य सुमर्तिभवीयस्यच्छा वाजेभिरागमत् ॥
साम ८७९ ॥

भा०—भले प्रकार अग्नि में होम करने से मनुष्य को पुत्र,आदि सन्तान, उत्तम बुद्धि, बहुत धन धान्य की प्राप्ति होती है ।

यज्ञ का धन देवता का धन

२०- यद्धनं यज्ञशीलानां देवस्वं तद्विदुर्बुधाः ।
अयज्वनां तु यद्वित्तमासुरस्वं तदुच्यते ॥मनु ११-२७

यज्ञ करने वालों का धन देवताओं का धन होता है और यज्ञ न करने वालों का धन राक्षस का धन बन जाता है ।

यज्ञ की महिमा

२१- अध्मा उ ते महि महे विधेम नमोभिरग्ने समिधोत हव्यैः । वेदी सूनो सहसो गोभिरुक्थैरा ते भद्रायां सुमतौ यतेम ॥ऋ० मं० ६ सू० १ मं० १० ॥

भावार्थ—हे मनुष्यो ! आप लोग प्राणियों के समुदाय के लिये इस सामग्री से यज्ञ करो अर्थात् प्राणी

मात्र के सुख का साधन एक मात्र यज्ञ है।

न तद्दिवा न पृथिव्यानु मन्ये न यज्ञेन नोत शमीभिराभिः।
उब्जन्तु तं सुभ्वः पर्वतासो नि हीयतामति याजस्य यष्ठाः॥
ऋ० मं० ६-५२,१॥

भावार्थ—जो सुख मेघों से उत्पन्न होता है वह सुख न दिवस, न पृथिवी न संगति न कर्म से होता है, इससे यज्ञ करने वाला ही सुख का भागी होता है।

यज्ञ ही मुक्ति का साधन है

२२- अतारिष्म तमसस्पारमस्य प्रति स्तोमं देवयंतो दधानाः।
पुरुदंसा पुरुतमा पुरुजा मर्त्या हवते अश्विना गीः॥
ऋ० मं० ७ सू० ७३ मं० १॥

भावार्थ—हे यजमानो! तुम लोग यज्ञ विद्या जानने वाले विद्वानों से याज्ञिक बनने के लिये जिज्ञासा करो। उनसे यह प्रार्थना करो कि आप हम को याज्ञिक बनायें, जिससे हम इस अविद्या रूप अज्ञान से निवृत्त होकर ज्ञान मार्ग पर चलें, हम उत्तम गुणों को धारण करने वाले हों और अन्ततः हमको मुक्ति पद प्राप्त हो, क्यों कि यज्ञ ही मुक्ति का साधन है। याज्ञिक पुरुष ही चिरायु हो कर अमृत पद को प्राप्त होते हैं।

यज्ञ के लाभ

मुञ्चामी त्वा हविषा जीवनाय कमज्ञायक्ष्मादुत राज-
यक्ष्मात् ।
ग्राहिर्जग्राह यद्येतदेनं तस्या इन्द्राग्नी प्र मुमुक्तमेनम् ।।
अथर्व ३-११-१

भावार्थ–जयदेव भाष्य पृष्ठ १९५ देखें ।

स मर्त्तो अग्ने स्वनीक रेवानमर्त्ये य आजुहोति हव्यम् ।
स देवता वसुवनिं दधाति यं सूरिरर्थी पृच्छमान एति ।।
ऋ–७-१-२३ ।।

भावार्थः–जो मनुष्य अग्नि विद्या को जानके इस अग्नि में सुगन्ध्यादि का होम करते और उससे कार्यों को सिद्ध करते हैं और जो अच्छे प्रकार के विचार और ध्यान करके परमात्मा को जानते हैं उनकी अग्नि धनाढ्य और परमेश्वर विज्ञानवान करता है ।। (दयानन्द

ओ३म् मुञ्चामि त्वा हविषा जीवनाय कमज्ञात-यक्ष्मादुत राजयक्ष्मात् ।

भावार्थः–बालकों और घर के रोगग्रस्त पुरुषों के आरोग्य रखने और दीर्घायु होने का उपायः–
हे बालक ! (त्वा) तुझ को मैं गृहपति (जीवनाय) सुख-

पूर्वक जीवन व्यतीत करने के लिये (हविषा) सुगन्धित पुष्टिकारक यज्ञ द्वारा (अज्ञातयक्ष्मात्) अज्ञान स्वरूप वाले संग दोष से लगने वाले रोग से लगने वाले रोग से और (उत राजयक्ष्मात्) तपेदिक जैसे भयंकर, शोषक रोग से भी (मुञ्चामि) बचाय रखूं । (यदि एवम्) यदि इस बालक को (ग्राहिः) एव अंगों को पकड़ लेने वाला, मसाने का रोग वा शीत-पात रोग भी (जग्राह) पकड़ ले तो भी (इन्द्राग्नी) इन्द्रः=शुद्ध वायु वा सूर्य का आतप आदि पकड़ ले तो भी मैं उस रोग से मुक्त करूं।

अर्थात् यज्ञ हवन से सब प्रकार के रोग दूर होते हैं ॥

यज्ञ का फल

२३- ऋग्वेद के मण्डल ८ सूक्त १९ मन्त्र ५, ६ में बहुत स्पष्ट शब्दों में यज्ञ का फल बताया है, जरा ध्यान से अध्ययन कीजिए:—

१. यः समिधा य आहुती यो वेदेन ददाश मर्तो अग्नये ।
यो नमसा स्वध्वरः ॥५॥

२. तस्येदर्वन्तो रंहयन्त आशवस्तस्य द्युम्नितमं यशः ।
न तमंहो देवकृतं कुतश्चन न मर्त्यकृतं नशत् ॥६॥

अर्थ—जो उत्तम अहिंसक, यज्ञशील मनुष्य श्रद्धा से विनय से, कण्ठ से, आहुतियों को वेद से अग्नि में आहुतिवत् प्रदान करता है उसके ही वेग से जाने वाले अश्व वेग से गमन करते हैं। उसका ही यश अति उज्जवल होता है। उसको विद्वानों और मनुष्यों का किया पाप प्राप्त नहीं हो सकता।

३. जानीतः स्मैनं परमे व्योम न देवाः सधस्था विद लोकमत्र। अत्वागन्ता यजमानः स्वस्ति इष्टापूर्तें स्म कृणुताविर स्म ॥ ऋ० ६-१२३-२

हे सदा साथ रहने वाले विद्वानो ! इस यजमान-को उत्कृष्ठ पद प्राप्त किया जानो। दाता और यजमान वहां कुशल पूर्वक पहुँच सकता है।

अर्थात्—यज्ञशील उपासक को किसी प्रकार का पाप स्पर्श नहीं करता।

इस प्रकार के अनेकों प्रमाणों से यज्ञ की आवश्यकता महत्ता तथा लाभ सिद्ध हैं।

यज्ञ से योग की प्राप्ति

यज्ञ की हवि से अन्नमय कोष, समिधा से प्राणमय कोष, प्रचण्डता से मन्नोमय कोष अग्नि की संयोजक

विभाजक शक्ति से विज्ञानमय कोष रंगों के दर्शन से प्रभावित होकर आनन्दमय कोष शुद्ध हो जाता है।
निष्कर्ष—यज्ञ अन्तः करण को शुद्ध करने का साधन है।

यज्ञ तीन प्रकार के हैं

१. नित्य यज्ञ—प्रत्येक आर्य को प्रातः सायं यज्ञ करने का आदेश है। यह देव पूजा है।

२. नैमित्तिक यज्ञ—किसी निमित्त से किया जाता है, जैसे—नामकरण, वर्षेष्टि, पुत्रेष्टि आदि।

३. विशेष यज्ञ—जो किसी भावना विशेष से प्रायः विश्व-कल्याण की भावना से पूर्ण वेद का अथवा आंशिक वेद तथा गायत्री आदि से किया जाता है।

दूसरे यज्ञः—

आध्यात्मिक—जो अपनी उन्नति के लिए किये जायें।

आधिभौतिक—जो दूसरों की भलाई के लिये किये जायें।

आधिदैविक—जो संसार के समस्त जड़ पदार्थों की उन्नति तथा उनके उपयोग लेने के लिए किए जायें।

यज्ञ के अधिकारी

यज्ञो वा एष योऽपत्नीकः। तै॰ ब्रा॰ २,२,२,६

अर्थ—जो पत्नी रहित है वह यज्ञ का अधिकारी नहीं

अर्थो अर्द्धो वा एष आत्मनः । या पत्नी ॥

तै० ब्र० ३,३,३,५

अर्थ—जो पत्नी है वह शरीर का आधा भाग है।

श्रिया वा एतद्रूपं यत्पत्न्यः । तै० ब्र० २,६,४,७ ॥

अर्थ—वह पत्नियां श्री (लक्ष्मी) का रूप हैं।

नानृतं वदेन्न मांसमश्नीयान्न स्त्रियं उपेयात् ॥

तै० सं० २,५,५,३२

अर्थ—यज्ञ विशेष में असत्य न बोले। मिथ्या भाषण आदि न करे। मांस भक्षण न करे और स्त्री संग भी वर्जित है।

मा शिश्नदेवा अपिगुर्ऋतं नः ॥ ऋक् मं० ७सू०२१मं०५

अर्थ—उपस्थ इन्द्रिय से व्यवहार करने वाले ब्रह्मचर्य से रहित कामी जन सत्य धर्म न पहुंचे। और न हम लोगों को प्राप्त हों। व्याभिचारी लोगों को यज्ञ में न लो।

यज्ञ से काम-क्रोध आदि की निवृत्ति कैसे होती है?

जिस कामना पूर्ति के लिए यज्ञ करना है उस कामना की पूर्ति दातृ औषधियां और भावनाएं प्रयुक्त की जाएं।

१. जितने पदार्थ सोम हैं, जैसे—घृत, शहद, दुग्ध आदि वह क्रोध और लोभ को दूर करते हैं।
२. जितने पदार्थ सुगन्धित हैं, जैसे—चन्दन, लोबान आदि वह काम को दूर करते हैं।
३. मध्यवर्ति (मोतदिल) पदार्थ अहंकार को और स्थूल मिष्ट आदि मोह को दूर करते हैं।

भिन्न-२ रोगों के लिए देखिए पृष्ठ—३

यज्ञ में देवी का स्थान

प्रायः कई सज्जन पूछा करते हैं कि यज्ञ में देवी को पति के किस ओर बैठना चाहिये, उनकी जानकारी के लिये मोटे शब्दों में यह निवेदन है कि श्रौत कर्मों में पत्नी को पति के दाईं ओर, स्मार्त्त कर्मों में बाईं ओर बिठाना चाहिये। वेद का निम्न प्रमाण हमारा पथ-पदर्शन कर रहा है—

पृथु रथो दक्षिणाया अयोज्यैनं देवासो अमृतासो अस्थुः।
कृष्णादुदस्थादर्या३ विहायाश्चिकित्सन्ती मानुषाय क्षयाय॥

ऋ० मं० १ सू० १२३ मं० १

भा० (दक्षिणाया) यज्ञ में दायें भाग में बिराजने वाली वधु का (पृथुःरथ) विशाल रथ (आयोजित) जोड़ा जावे और उसमें (अमृतासः देवासः) कभी नाश न होने

वाले प्रकाशमान दीप्तियुक्त रत्न (अस्थुः) लगाए जावें। (अर्या) गृह की स्वामिनी नववधू (कृष्णात्) वियोग से शोकातुर होते हुए पितृगृह से (मानुषाय क्षयाय) अपने पति सम्बन्धी गृहों को प्राप्त होने के लिए अपना मनोरथ करती हुई (विहायाः) विशेष आदर युक्त होकर (उत्-अस्थात्) उस रथ पर चढ़े। [जयदेव भाष्य २]

दक्षिणा

भेषजं ह वै यज्ञस्य दक्षिणा। तस्माद् ऋत्विग्भ्यो दक्षिणा ददाति ॥ शत ४, ३४, २, ५ ॥

अर्थ—दक्षिणा यज्ञ की औषधि है, इस लिए ऋत्विजों को दक्षिणा दी जाती है।

श्लेष्मा वै एतद् यज्ञस्य यद् दक्षिणा। न वै अश्लेष्मा रथो वहति। अथ यथा लेष्मवता यं कार्यंकामयते। तम् अभ्यश्नुते। एवम् एतेन दक्षिणावता।

ताण्ड्य० १६, १, १, १३

अर्थ—रोगन (गिरीस) है निश्चय यह यज्ञ रूपी रथ की जो दक्षिणा है। निःसन्देह रोगन (चिकनाई) न लगाया हुआ रथ नहीं चलता है (अभीष्ट स्थान पर पहुंचाने के योग्य नहीं होता)। अब जैसे रोगन से ऊंधे हुए (पहिए में गिरीश भरे) रथ से अभिष्ट स्थान को पहुँचाना चाहता है या प्राप्त होता है ऐसे ही इस दक्षिणा

वाले यज्ञ से अभीष्ट फल को प्राप्त होते हैं।

शुभा वै एता यज्ञस्य यद्दु दक्षिणाः। ता० ६-१-१४

अर्थ—यह निश्चय यज्ञ को शुभ फल का दाता बनाने वाली दक्षिणाएं हैं।

वेद में दक्षिणा को पुरोगामी कहा है अर्थात् दक्षिणा यज्ञ को आगे आगे ले जाने वाली है, जैसे रस्सी गाय को ले जाती है। ऋग्वेद में दक्षिणा सूक्त है।

वषड्ढुतेभ्यः वषडहुतेभ्यः। देवा गातुविदो गातु बित्वा गातुमित॥ अ० का० ७ सू० ९७ मं० ७॥

भावार्थ—यज्ञ में (हुतेभ्यः) हवन करानेहारे विद्वानों को (वषट्) दान दिया जाय और (अहुतेभ्यः) जो हवन न करने वाले भी हों ऐसे दर्शकों को भी सत्कारार्थ (वषट्) कुछ दिया जाए। और इसके पश्चात् यजमान कहे—हे (देवाः) विद्वान् पुरुषो! आप लोग (गातुविदः) सब मार्गों को जानते हैं, आप लोग (गातुम्) मार्ग को (वित्वा) भली प्रकार जानकर (गातुम् इत) अपने घर की ओर पधारो।

अर्थात् यज्ञ में आये विद्वानों को दान दक्षिणा देकर यजमान आदर पूर्वक उनको उत्तम मार्ग बतला-कर मार्ग की सुविधाएं करके उनको विदा करे।

दान का महत्व

अनुस्पष्टो भवत्येषो अस्य यो अस्मै रेवान् सुनोति सोमम्
निररत्नौ मघवा तं दधाति ब्रह्मद्विषौ हन्त्यनानुदिष्टः
ऋ० १० । १६०

भावार्थ—(यः रेवान् न) जो धनवान् के सदृ
(अस्मै) उस प्रभु के लिए (सोमं) अन्न ऐश्वर्य सत्का
पूजादि (सुनोति) प्रदान करता है (एषः अस्य अनुस्पष्
भवति) वह उसको दिनों-दिन दृष्टिगोचर होता जात
है, (मघवा) ऐश्वर्यवान् प्रभु (तम्) उसको (अरत्नौ नि
दधाति) बाहु पकड़ कर कष्टों से निकाल लेता है, औ
(अनानुदिष्टः हन्ति) वेद और विद्वानों के शत्रुओं क
नाश कर देता है।

ऋग्वेद का मण्डल १० सूक्त १०७ दक्षिण
सम्बन्धी है उसके मन्त्र ज्ञानार्थ नीचे दिये जाते हैं।

उच्चा दिवि दक्षिणावन्तो अस्थुर्ये अश्वदाः सह ते सूर्येण
हिरण्यदा अमृतत्वं भजन्ते वासोदाः सोम प्रतिरन्त आयु
ऋ० १० । १०७ ।

भावार्थ—दानशील पुरुष सदा आकाश में तारों
तुल्य (उच्चा अस्थुः) ऊंची स्थिति को प्राप्त होते हैं
(ये) जो (अश्व-दाः) अपनी विद्या के बल से राष्ट्र
जनसमाज को वेग से ले जाने वाले अश्व, रथ और अ

वेगवान् साधन प्रदान करते हैं (ते) वे (सूर्येण सह) सूर्य के समान (अस्थुः) प्राप्त होते हैं (हिरण्य-दाः) स्वर्ण आदि का दान देने वाले (अमृत्वं भजन्ते) अमृत का सेवन करते हैं। हे (सोम) विद्वन्! (वासः दाः) वस्त्र देने वाले (आयुः प्रतिरन्त) अपनी दीर्घ आयु प्राप्त करते हैं।

[जयदेव]

दैवी पूर्तिर्दक्षिणा देवयज्या, न कवारिभ्यो नहि ते पृणन्ति
अथा नरः प्रयतदक्षिणासोऽवद्यभिया बहव पृणन्ति ॥३॥

भावार्थ—(देवयज्या दक्षिणा) विद्वानों को आदर सत्कार से दिया जाने वाला (दक्षिणा) अन्न द्रव्यादि का दान (दैवी पूर्त्तिः) दाता द्वारा की गई विद्वानों की उत्तम व्यबस्था है। वह उत्तम पालन करने का साधन (कव अरिभ्यः न) कुस्वामी वा कुत्सित धनों के मालिकों को प्राप्त नहीं होता। क्योंकि (नहि ते पृणन्ति) वे दूसरे का पालने नहीं करते (अथ) और (बहवः) बहुत से (प्रियत-दक्षिणासः) दक्षिणा देने वाले (नरः) लोग (अवद्य-भिया) पाप या निन्दा से भय करके (पृणन्ति) अन्यों का पालन करते हैं ॥३॥

भावार्थ—उदार भाग्यशाली ही विद्वानों का अन्न द्रव्यादि से सत्कार करते हैं और उस महान् दाता परमेश्वर की आज्ञा का पालन करते हैं और यश आदि के

भागीदार बनते हैं। कृपण तथा अभागे ऐसे श्रेय से वञ्चित रहते हैं और दुःख उठाते हैं।

शतधारं वामर्कं स्वर्विदं नृचक्षसस्ते अभिचक्षते हविः।
ये पृणन्ति प्र च यच्छन्ति संगमे ते दक्षिणां दुहते सप्तमातरम् ॥४॥

भावार्थ—(नृचक्षसः ते) मनुष्यों को उपदेश करने वाले वे विद्वान् हवि (अन्न और दान योग्य उत्तम द्रव्य) को, (शत-धारं वायुम् अभि चक्षते) सैंकड़ों को धारण करने वाली वायु के तुल्य और (स्वर्विदं अर्कं हविः अभि चक्षते) सब को सुखदायी सूर्य के तुल्य बतलाते हैं (ये पृणन्ति) जो अन्यों का पालन करते हैं और जो (संगमे) एकत्र सोने के अवसर पर यज्ञ आदि में (दक्षिणां प्र-यच्छन्ति) दक्षिणा का दान करते हैं वे (सप्त-मातरम्) सर्पं शील अनेक जन्तुओं की माता पृथिवी का (दुहते) दोहन करते हैं ॥४॥

भावार्थ—जो यज्ञ आदि के अवसर पर दूसरों का अन्न आदि से पालन करते हैं और दक्षिणा देते हैं वह पृथिवी माता से सब प्रकार का ऐश्वर्य प्राप्त करते हैं।

दक्षिणावान्प्रथमो हूत एति दक्षिणावाग्रामणीरग्रमेति।
तमेव मन्ये नृपतिं जनानां यः प्रथमो दक्षिणामाविवाय ।५।

भावार्थ—दक्षिणा का दाता (प्रथमः) सर्वश्रेष्ठ रूप मे (हूतः) स्वीकृत होकर (एति) सबको प्राप्त होता है और (दक्षिणावान्) दानशील पुरुष (ग्रामणीः) जन संघों को सन्मार्ग पर ले जाने हारा होकर (अग्रम् एति) अग्रासन पर आता है। (जनानां) मनुष्यों के बीच में (तं एव नृपति मन्ये) उसको ही मैं मनुष्यों का पालक राजवत् मानता हूं (यः) जो (प्रथमः) सर्वश्रेष्ठ होकर (दक्षिणाम् आ विवाय) दान, भृति, वेतनादि प्रदान करता है ॥५॥

भावार्थ—**दक्षिणावान्** का सर्वत्र सत्कार होता है, वह मनुष्यों का अग्रणी बनकर राजवत् होता है और सर्वश्रेष्ठ माना जाता है।

दक्षिणाश्वं दक्षिणा गां ददाति दक्षिणा चन्द्रमुत यद्धिरण्यम्।
दक्षिणान्नं वनुते यो न आत्मा दक्षिणांवर्म कृणुते विजानम्।७

भावार्थ—जो दक्षिणा रूप से अश्व का दान करता है, जो दक्षिणा रूप से गौ प्रदान करता है और जो स्वर्ण रूप दक्षिणा प्रदान करता है और जो पुरुष दक्षिणा रूप से अन्न प्रदान करता है और जो दक्षिणा रूप से उसे स्वीकार करता है वह विशेष ज्ञानी हमारा

आत्मा "स्व" होकर दक्षिणा को कवच के समान सब विघ्नों, कष्टों और दुःखों को वारण करने वाला बना लेता है।

न भोजा मम्रुर्न न्यर्थमीयुर्न रिष्यति न व्यथन्ते ह भोजाः
इदं यद्विश्वं भुवनं स्वश्चैतत्सर्वं दक्षिणैभ्यो ददाति ॥८॥

दक्षिणा

य उदृचि यज्ञे अध्वरेष्ठा मरुद्भ्यो न मानुषो ददाशत्।
रेवत्स वयो दधते सुवीरं स देवानामपि गोपीथे अस्तु॥
ऋ १०-७७-७

भावार्थ—(यः अध्वरे) जो यज्ञ पर विराज कर (उद् ऋचि यज्ञे) अन्तिम ऋचा तक पूर्ण होने वाले यज्ञ की समाप्ति पर (मरुद्भ्यः रेवत् न मानुषः) विद्वान् यज्ञ कर्त्ता जनों को धन सम्पन्न पुरुष के तुल्य (ददाशत्) दान—दक्षिणा आदि उदारता से प्रदान करता है (सः) वह सु—वीरं) उत्तम पुत्रों वीरों सहित (वयः दधते) दीर्घायु और बल को धारण करता है (सः) वह (देवानाम् अपि) विद्वानों और अनेक मनुष्यों के भी (गोपीथे) रक्षा के पद पर (अस्तु) हो।

मन्त्र—इदं भोजो यो गृहवे ददाति अन्नकाय चरते कृशाय ।
स अरमेस्मै भवति-यामहूता उतापरीषु कृणुते सखायम्

ऋ—१०—११७—३

भावार्थ—(भोजाः) भोजन द्वारा सत्कार करने वाले जन (न मम्रुः) कभी मरण को प्राप्त नहीं होते । (नि अर्थम्) निकृष्ट अर्थ या नीच गति को (न ईयुः) प्राप्त नहीं होते, (न रिष्यन्ति) कभी पीड़ित नहीं होते, वे (भोजाः) दाताजन (न व्यथन्ते) क्लेश को प्राप्त नहीं होते । (इदं यद् विश्वं भुवनं) यह जो समस्त उत्पन्न जगत् और (एतत् सर्वं स्वः) जो समस्त सुख है यह सब (एभ्यः दक्षिणा ददाति) उनको दक्षिणा ही प्रदान करती है । इसी प्रकार ऋ-१०-११७-३ कहता है "दानी वही है जो अन्न-कामना से विचरण करते हुए और घर आए हुए दुर्बल व्यक्ति को अन्न देता है । समय पड़ने पर यह दान उसकी इस लोक में तो सहायता करता ही है उस लोक में भी सखा बनकर सहायक सिद्ध होता है ।

भोजा जिग्युः सुरभिं योनिमग्रे भोजा जिग्युर्वध्वं या सुवासाः
भोजा जिग्युरन्तः पेयं सुराया भोजा जिग्युर्ये अहूताः प्रयन्ति ॥६॥

भावार्थ—(भोजाः) ऐश्वर्यों का भोग देने में समर्थ पुरुष ही (सुरभिः योनिम्) सुगन्धि देने वाले गृह को (अग्रे) सबसे पहले (जिग्युः) प्राप्त करते हैं। (या सुवासा वध्वं भोजाः जिग्यः) जो उत्तम वस्त्र धारण करती है ऐसी वधू को उक्त दाता पालक जन ही सब से पहले प्राप्त करते हैं। (भोजाः सु-रायाः अन्तः पेयं जिग्युः) भोगदाता उत्तम सुखदायी जल के आतिथ्य सत्कार पूर्वक पान को प्राप्त करते हैं। (ये अहूताः प्रयन्ति) जो विना बुलाये ही अन्यों पर प्रयाण करते हैं उनको भी उत्तम दाता और पालक जन विजय कर लेते हैं ॥९॥

भावार्थ—अन्नादि से सत्कार करने वाले को उत्तम गृह, उत्तम वधु, उत्तम पेय पदार्थ तथा सर्वदा विजय प्राप्त होती है।

यज्ञ से पूर्व की तैयारी

प्रभु पूजा में बैठने चले हैं। सांसारिक व्यवहारों को छोड़कर, परन्तु चूंकि इनका त्याग क्षणिक है अतः उनकी याद सताती रहेगी। इससे बचने के लिए अपनी वाणी को गायत्री मन्त्र तथा ओ३म् के कीर्तन से पवित्र कर लें। एतदर्थं प्रमाणः—

गायत्री द्वारा भगवान् की स्तुति करो

प्र गायत्रेण गायत पवमानं विचर्षणिम् । इन्दुं सहस्रचक्षसम् ॥ऋ० ९-६०-१

भावार्थ—(पवमानं सहस्रचक्षसम्) सबको पवित्र करने वालेसहस्रों आंखों वाले (विचर्षणिम्) विशेष द्रष्टा (इन्दुं) ऐश्वर्यवान प्रभु की (गायत्रेण) गायत्री छन्द से (प्र गायत) खूब स्तुति करो।

परमेश्वर का भजन कैसे करें

उदप्रुतो न वयो रक्षमाणा वावदतो अभ्रियस्येव घोषाः। गिरिभ्रजो नोर्मयो मदन्तो बृहस्पतिमभ्यर्का अनावन ॥
ऋ० १०-६८-१

भावार्थ—(मदन्तः) अति प्रसन्न (अर्काः) स्तुति करने वाले भक्त जन (बृहस्पतिम) महान ब्रह्माण्डों के पालक परमेश्वर को (अनावन) उत्साह पूर्वक स्तुति करते हैं। (उद प्रुतः वयः न) जिस प्रकार जल पर तैरने वाले पक्षी कलकल करते हैं, जैसे खेत की रक्षा करने वाले (रक्षमाणाः) समय समय पर उच्च स्वर से हांका करते हैं, जैसे (अभ्रियस्य घोषाः न) मेघ के गर्जन होते रहते हैं, जैसे (गिरिभ्रजः ऊमर्यः न) मेघ से गिरने

वाली जलधाराएं वा पर्वत से झरने वाले झरने अनवरत प्रवाह से बहते हैं। (जयदेव)

गायत्री कीर्तन—ओ३म् भूर्भुवः स्वः। ओ३म् भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

ओ३म् कीर्तन की विधि

ओ३म् हि ओ३म् ओ३म् हि ओ३म् ओ३म् हि ओ३म्
ओ३म् हि ओ३म् ओ३म् ही ओ३म् ओ३म् हि ओ३म्
ओ३म् हि ओ३म् ओ३म् हि ओ३म् ओ३म् हि ओ३म्
ओ३म् हि ओ३म् ओ३म् हि ओ३म् ओ३म् हि ओ३म्
ओ३म् हि ओ३म् ओ३म् हि ओ३म् ओ३म् हि ओ३म्
ओ३म हि ओ३म ओ३म हि ओ३म ओ३म हि ओ३म
ओ३म हि ओ३म ओ३म हि ओ३म ओ३म हि ओ३म
ओ३म हि ओ३म ओ३म हि ओ३म

ओ३म हि ओ३म ओ३म हि ओ३म ओ३म हि ओ३म
ओ३म हि ओ३म ओ३म हि ओ३म ओ३म हि ओ३म
ओ३म हि ओ३म ओ३म हि ओ३म ओ३म हि ओ३म
ओ३म हि ओ३म ओ३म हि ओ३म ओ३म हि ओ३म
ओ३म हि ओ३म

प्रार्थना-मंत्राः

तत्पश्चात तीनों यज्ञों में—स्तुतिप्रार्थनोपासना के नीचे लिखे मन्त्र एक विद्वान सुमधुर स्वर से बोले और अन्य सज्जन ध्यान पूर्वक सुनें।

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव।
यद्भद्रं तन्न आसुव ॥१॥ यजु० अ० ३० । मं० ३

अर्थ—हे [सवितः] सकल जगत के उत्पत्तिकर्त्ता समग्र ऐश्वर्य युक्त [देव] शुद्धस्वरूप सब सुखों के दाता परमेश्वर ! आप कृपा करके [नः] हमारे [विश्वानि] सम्पूर्ण [दुरितानि] दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुःखों को [परा, सुव] दूर कर दीजिए। [यत्] जो [भद्रम्] कल्याण कारक गुण, कर्म, स्वभाव और पदार्थ हैं [तत्] वह सब हम को [आ, सुव] प्राप्त कीजिए ॥१॥

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ।२।
य० अ० १३ । मं० ४

अर्थ—जो [हिरण्य गर्भः] स्वप्रकाशस्वरूप और जिसने प्रकाश करने हारे सूर्य चन्द्रादि पदार्थ उत्पन्न करके धारण किए हैं जो [भूतस्य] उत्पन्न हुए सम्पूर्ण जगत का [जातः] प्रसिद्ध [पति] स्वामी [एकः] एक

ही चेतनस्वरूप [आसीत्] था, जो [अग्रे] सब जगत के उत्पन्न होने से पूर्व [समवर्तत] वर्तमान था, [सः] वह [इमाम्] इस (पृथिवीम) भूमि [उत] और [द्याम्] सूर्यादि का [दाधार] धारण कर रहा है, हम लोग उस [कस्मै] सुखस्वरूप [देवाय] शुद्ध परमात्मा के लिए [हविषा] ग्रहण करने योग्य योगाभ्यास और अतिप्रेम से [विधेम] भक्ति विशेष किया करें ॥२॥

य आत्मदा बलदायस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः ।
यस्य च्छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम।३।

य० अ० २५ । मं० १३

अर्थ—[यः] जो [आत्मदाः] आत्मज्ञान का दाता [बलदाः] शरीर, आत्मा और समाज के बल का देने-हारा, [यस्य] जिसकी [विश्वे] सब [देवाः] विद्वान लोग[उपासते] उपासना करते हैं और [यस्य] जिसका [प्रशिषम] प्रत्यक्ष सत्यस्वरूप शासन, न्याय अर्थात् शिक्षा को मानते हैं, [यस्य] जिसका [छाया] आश्रय ही [अमृतम] मोक्ष-सुखदायक है, (यस्य) जिसका न मानना अर्थात् भक्ति न करना ही [मृत्युः] मृत्यु आदि दुःख का हेतु है, हम लोग उस [कस्मै] सुखस्वरूप

(देवाय) सकल ज्ञान के देने हारे परमात्मा की प्राप्ति के लिए (हविषा) आत्मा और अन्तःकरण से (विधेम) भक्ति अर्थात् उसी की आज्ञा पालन करने में तत्पर रहें ॥३॥

य: प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव ।
य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम ।४

य० अ० २३ । मं० ३

अर्थ—(यः) जो (प्राणतः) प्राण वाले और (निमिषतः) अप्राणीरूप (जगतः) जगत का (महित्वा) अपने अनन्त महिमा से (एक, इत) एक ही (राजा) राजा (बभूव) विराजमान है, (यः) जो (अस्य) इस (द्विपदः) मनुष्यादि और (चतुष्पदः) गौ आदि प्राणियों के शरीर की (ईशे) रचना करता है, हम उस (कस्मै) सुखस्वरूप (देवाय) सकलैश्वर्यं के देनेहारे परमात्मा की उपासता अर्थात् (हविषा) अपनी सकल उत्तम सामग्री को उसकी आज्ञा पालन में समर्पित करके (विधेम) भक्ति विशेष करें ॥४॥

येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढ़ा येन स्वः स्तभितं येन नाकः ।
यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम ।५

य० अ० ३२ । मं० ६

अर्थ—(येन) जिस परमात्मा ने (उग्रा) तीक्ष्ण स्वभाव वाले (द्यौः) सूर्य आदि (च) और पृथिवी) भूमि को (दृढ़ा) धारण किया, (येन) जिस जगदीश्वर ने (स्वः) सुख को (स्तभितम) धारण किया, और (येन) जिस ईश्वर ने (नाकः) दुःख रहित मोक्ष को धारण किया है, (यः) जो (अन्तरिक्षे) आकाश में (रजसः) सब लोक लोकान्तरों को (विमानः) विशेष मानयुक्त अर्थात् जैसे आकाश में पक्षी उड़ते हैं, वैसे सब लोकों को निर्माण करता और भ्रमण कराता है, हम लोग उस (कस्मै) सुखदायक (देवाय) कामना करने के योग्य परब्रह्म की प्राप्ति के लिये (हविषा) सब सामर्थ्य से (विधेम) विशेष भक्ति करें ॥५॥

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तुवयं स्याम पतयो रयीणाम्।

ऋ० म० १० । सू० १२१ । म० १०

अर्थ—हे (प्रजापते) सब प्रजा के स्वामी परमात्मा (त्वत) आप से (अन्य) भिन्न दूसरा कोई (ता) उन (एतानि) इन (विश्वा) सब (जातानि) उत्पन्न हुए भूगोलादि जगत को बनाने हारा और (परि ता) व्यापक (न) नहीं (बभूंव) है, (ते) उस आप के भक्ति करने हारे

हम चेतनादिकों को (न) नहीं (परि, बभूव) तिरस्कार करता है अर्थात् आप सर्वोपरि हैं। (यत्कामाः) जिस जिस पदार्थ की कामना वाले होके हम लोग भक्ति करें (तत्) वह कामना (नः) हमारी सिद्ध (अस्तु) होवे, जिस से (वयम) हम लोग (रयीणाम) धनैश्वर्यों के (पतयः) स्वामी (स्याम) होवें ॥६॥

स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानिवेद भुवनानि विश्वा
यत्र देवा अमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त ॥७॥
य० अ० ३२ म० १० ॥

अर्थ—हे मनुष्यो ! (सः) वह परमात्मा (नः) अपने लोगों को (बन्धुः) भ्राता के समान सुखदायक (जनिता) सकल जगत् का उत्पादक (सः) वह (विधाता) सब कामों का पूर्ण करने हारा (विश्वा) सम्पूर्ण (भुवनानि) लोकमात्र और (धामानि) नाम, स्थान, जन्मों को (वेद) जानता है, और (यत्र) जिस (तृतीये) सांसारिक सुख दुःख से रहित तित्यानन्दयुक्त (धामान्) मोक्ष-स्वरूप धारण करनेहारे परमात्मा में (अमृतम) मोक्ष को (आनशानाः) प्राप्त होकें (देवाः) विद्वान लोग (अध्यैरयन्त) स्वेच्छापूर्वक विचरते हैं, वही परमात्मा अपना गुरु, आचार्य, राजा और न्यायाधीश है। अपने लोग

मिल के सदा उसकी भक्ति किया करें ॥७॥

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वा
युयध्यस्मजुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम उक्ति विधेम ॥८॥
यजु० अ० ४० । म० १६

अर्थ—हे (अग्ने) स्वप्रकाश, ज्ञानस्वरूप सब जगत के प्रकाश करने हारे (देव) सकल सुखदाता परमेश्वर ! आप जिससे (विद्वान) संपूर्ण विद्यायुक्त हैं कृपा करके (अस्मान्) हम लोगों को (राये) विद्वान वा राज्यादि ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिए (सुपथा) अच्छे धर्मयुक्त आप्त लोगों के मार्ग से (विश्वानि) सम्पूर्ण (वयुनानि) प्रज्ञान और उत्तम कर्म (नय) प्राप्त कराइये, और [अस्मत] हम से [जुहुराणम्] कुटिलतायुक्त [एनः] पाप रूप कर्म को [युयोधि] दूर कीजिये, इस कारण हम लोग [ते] आपकी [भूयिष्ठाम्] बहुत प्रकार की स्तुतिरूप [नमः उक्तिम] नम्रतापूर्वक प्रशंसा [विधेम] सदा किया करें और सर्वदा आनन्द में रहें ॥८॥

प्रार्थना

हे सकल जगत के उत्पत्तिकर्ता, समग्र ऐश्वर्ययुक्त शुद्धस्वरूप, सब सुखों के दाता परमेश्वर ! सब सुखों के दाता परसेश्वर !! सकल दुःखहर्ता, विघ्नविनाशक,

सर्व सुखों के भण्डार प्रभु ! हे परमेष्ठिन् परमदयालु पिता !! हे जगत जननी मङ्गलमयी मां !!! आप को हमारा प्रणाम हो, बारम्बार प्रणाम हो, अगाध श्रद्धा, प्रेम तथा भक्ति से पूरित प्रणाम हो। कृपा करके प्रणाम की अंजली को स्वीकार करो और आशीर्वाद दो जिससे हम सदैव आप के पवित्र चरणों में झुकने में अपना उत्थान तथा कल्याण समझें।

आज सृष्टि सम्वत् १,९६,०८,५३०,८१ चैत्र शुदी नवमी विक्रमाब्द २०३६मगंलवार की इस पवित्र प्रातः की सुन्दर सुहावने और रमणीक वेला में हम आप के अबोध बालक और बालिकाएं, इस पुनीत स्थान पर नित्य कर्म (अथवा पवित्र यजुर्वेद ब्रह्मपरायण महायज्ञ के नाते) इकट्ठे होकर अत्यन्त विनम्र भाव से प्रार्थना करते हैं कि मां ! कृपा करके हमारे सम्पूर्ण दुःख दुर्गुण, दुर्व्यसन, कुचेष्टाओं, कुसंस्कारों, क्लेशों, संकटों, दर्दों, पीड़ाओं, आधी व्याधियों और दुर्दिनों को दूर कर दीजिये और हमें कल्याणकारक शुभ गुण, कर्म, स्वभाव और पदार्थ प्रदान कीजिये।

मां ! तेरी दया बेअन्त है ! तेरी दया बेअन्न्त है !!

तेरी कृपा महती है !!! तू ने हमें मानव देह प्रदान कर के हमारे ऊपर महान-२ उपकार किया है। इस देह के अन्दर रहकर के जीव अनेकों प्रकार के सुख और आनन्द का उपभोग कर सकता है अनेकों प्रकार के वैभव और ऐश्वर्य का स्वामी बन सकता है। अनेकों प्रकार के आविष्कार करके संसार को चकित कर सकता है और इसी देह के अन्दर रहकर ही अपने पुरुषार्थ और तेरी कृपा से तुझ मगंलमयी मां की पवित्र गोद में पहुँच कर सर्व प्रकार के दुःखों से छूठ कर अमृतानन्द को प्राप्त कर सकता है। इस देह के पालन पोषण के लिए तथा इससे परम लक्ष्य की प्राप्ति के लिए संसार के सभी भोग्य और सेव्य पदार्थ तू ने उत्पन्न किए और बिना किसी हमारी मांग, पुण्य प्रताप और योग्यता के आप सदा हमारा हित चाहती हुई प्रातः और सायं अपने पवित्र चरणों में बिठाकर अपने नाम का दान देती और पवित्र पूजा का सुअवसर प्रदान करती हो और समय समय पर नैमितिक यज्ञों में भाग दिलवा कर हमारे सौभाग्य को बढ़ाती और चमकाती हो, प्रतिक्षण हमारी रक्षा, सहायता, पथ-प्रदर्शन और पालन-पोषण करती

हो । इन तेरे महान् उपकारों के लिए जो तू अबाध गति से हम पर कर रही है, और जिनकी गणना नहीं हो सकती, हम आपके अत्यन्त आभारी हैं, हमारा रोम रौम आपका ऋणि है। एतदर्थ हम आपका कोटानु-कोटि धन्यवाद करते हुए पुनः पुनः तुझे प्रणाम करते हैं और विनय करते हैं कि तेरी पूजा का हमें सदा अधिकार बना रहे । अधिकार के साथ सामर्थ्य और स्वतन्त्रता, अटल और अटूट विश्वास पूर्ण श्रद्धा, ऐसी उत्कट इच्छा और धारणावती बुद्धि प्रदान करो कि चाहे हम देश में हों अथवा विदेश में, रोगी हों या निरोगी, दुःखी हों अथवा सुखी, कैसा भी हाल, काल और देश में क्यों न हो, तेरी पवित्र पूजा से कभी वञ्चित न रहें, और विमुख न हों । तेरे पुनीत ओ३म् नाम का दान जो तेरा निज नाम है और जो तुझे सुलक्षणों से युक्त पुत्र के समान प्राणों से भी प्यारा है, वह दान हमें निरन्तर मिलता रहे, हमारे रोम रोम से तेरे पवित्र नाम की ध्वनि निकले और हमारा श्वास श्वास तेरे नाम की माला बन जाए और हम क्षण क्षण तेरी पवित्र सत्ता का भान करते हुए तुझे ही एकमात्र जपते भजते और नमते रहें ।

ओ दयालु मां ! संसार इस समय पीड़ित है। जिधर भी हम दृष्टि डालते हैं उधर ही कलह उपद्रव, अशान्ति वैमनस्य, ईर्ष्या, द्वेष और स्वार्थ का राज्य दिखाई देता है। दुःखों से पीड़ित होकर संसार त्राहि माम् त्राहि माम् कर रहा है। ऐसी विकट और भीषण अवस्था का संवार सुधार तेरे बिना और कोई नहीं कर सकता। अतः कृपा करके हमें ऐसे दूषित वातावरण से बचाइये। रक्षा करो यज्ञपति यज्ञमान की रक्षा करो अपनी पवित्र कल्याणी वाणी की, रक्षा करो उन महानुभावों की जो तेरी पवित्र वाणी का प्रचार और प्रसार करते हैं, रक्षा करो उस पवित्र देश की जहां तेरी कल्याणी वाणी का आदर और सम्मान है, रक्षा करो उन भाई और बहिनों की जो तेरे पवित्र आदेश और सन्देश को सुनने के लिए श्रद्धापूर्वक सत्संगो में जाते और अपने जीवन का कल्याण चाहते और करते हैं।

मां ! कृपा करके हमें इस योग्य बनाओ जिससे हम सच्चे नागरिक बन कर अपने देश, संस्कृति और सभ्यता की रक्षा कर सकें देशवासियों और राज्य कर्मचारियों को वैदिक बुद्धि प्रदान करो कि वह अपने

कर्त्तव्य को समझ कर देश और जाति की सर्व प्रकार से रक्षा और सेवा कर सकें। हम सब नर नारी अपने देश को समुन्नत करते हुए सदा तेरी पवित्र भक्ति के पात्र बने रहें। यही हमारी प्रार्थना है, यही याचना है, कृपया इसे स्वीकार करो और सबका बेड़ा पार करो।

ओ३म् शान्ति ! शान्ति !! शान्ति !!!
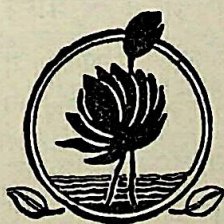
* ओ३म् *

अथ स्वस्तिवाचनम्

१—ओ३म् अग्निमीडे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् ।
होतारं रत्नधातमम् ॥ ऋ० १—१—१

शब्दार्थ—[यज्ञस्य] विद्वानों के सत्कार, सङ्गम महिमा के और कर्म [होतारम्] देने तथा ग्रहण करने वाले [पुरोहितम्] उत्पत्ति के समय से पहिले परमाणु आदि सृष्टि के धारण करने वाले और [ऋत्विजम्] बार बार उत्पत्ति के समय में स्थूल सृष्टि के रचने वाले तथा ऋतु-ऋतु में उपासना करने योग्य [रत्नधातमम्] और निश्चय करके मनोहर पृथिवी वा सुवर्ण आदि रत्नों के धारण करने वाले वा [देवम्] देने तथा सब पदार्थों के प्रकाश करने वाले परमेश्वर की हम लोग [ईडे] स्तुति करते हैं।

उपकार के लिए [यज्ञस्य] हम लोग विद्यादि दान और शिल्प क्रियाओं से उत्पन्न करने योग्य पदार्थों के [होतारम्] देने हारे तथा [पुरोहितम्] उन पदार्थों के उत्पन्न करने के समय से पूर्व भी छेदन, धारण और आकर्षण आदि गुणों के धारण करने वाले [ऋत्विजम्]

शिल्प विद्या साधनों के हेतु [रतनधातमम्] अच्छे-अच्छे सुवर्ण आदि रत्नों के धारण करने में तथा [देवम्] युद्धादिकों में कलायुक्त शस्त्रों से विजय कराने हारे भौतिक अग्नि की [ईडे] बारम्बार इच्छा करते हैं।

भावार्थ—अग्नि शब्द से दो अर्थों का यहां ग्रहण किया गया है। परमात्मा और भौतिक अग्नि।

पिता के समान कृपा कारक परमेश्वर सब जीवों के हित और सब विद्याओं की प्राप्ति के लिए कल्प के आदि में वेद का उपदेश करता है, कि तू जीव! ऐसा करवा ऐसा वचन कह, सत्य वचन बोल, इत्यादि शिक्षा को सुनकर बालक वा शिष्य भी कहता है कि सत्य बोलूंगा, पिता और आचार्य की सेवा करूंगा। इस प्रकार जैसे शिक्षक लोग शिष्य वा बालकों को उपदेश करते हैं, वैसे ही [अग्निमीडे] इत्यादि वेद मन्त्रों में भी जानना चाहिए। क्योंकि ईश्वर ने वेद सब जीवों के उत्तम सुख के लिए प्रकट किए हैं। इसी 'अग्निमीडे' वेद के उपदेश का परोपकार फल होने से इस मन्त्र में "ईडे" यह उत्तम पुरुष का प्रयोग भी है।

[अग्निमीडे] परमार्थ और व्यवहार विद्या की सिद्धि के लिए अग्नि शब्द में परमेश्वर और भौतिक

अग्नि दोनों अर्थ लिए जाते हैं। जो पुरातन काल में आर्य लोगों ने अश्वविद्या के नाम से शीघ्रगमन का हेतु शिल्पविद्या उत्पन्न की थी, वह अग्निविद्या की ही उन्नति थी। आप ही आप प्रकाशमान सब का प्रकाशक और अनन्त ज्ञानवान् आदि हेतुओं से अग्नि शब्द से परमेश्वर तथा रूप, दाह, प्रकाश, वेग, छेदन आदि गुण और शिल्पविद्या के मुख्य साधक आदि हेतुओं से प्रथम मन्त्र में भौतिक अग्नि का भी ग्रहण किया है।

२—ओ३म् स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव।
सचस्वा नः स्वस्तये। ऋ० १-१-९

पदार्थ—हे [सः] उक्त गुणयुक्त [अग्ने] ज्ञान-स्वरूप परमेश्वर! (पितेव) जैसे पिता (सूनवे) अपने पुत्र के लिए उत्तम ज्ञान का देने वाला होता है, वैसे ही आप (नः) हम लोगों के लिए (सूपायनः) शोभन (उत्तम) ज्ञान जो कि सब सुखों का साधक और उत्तम उत्तम पदार्थों का प्राप्त कराने वाला है उसके देने वाले होकर (नः) हम लोगों को (स्वस्तये) सब सुख के लिए (सचस्व) प्राप्त है।

भावार्थ—सब मनुष्यों को उत्तम प्रयत्न करते हुए ईश्वर की प्रार्थना इस प्रकार करनी चाहिए कि—हे

भगवन् ! जैसे पिता अपने पुत्र को अच्छी प्रकार पालन करके और उत्तम-उत्तम शिक्षा देकर उसको शुभ गुण और श्रेष्ठ कर्म करने योग्य बना देता है, वैसे ही आप हम लोगों को शुभ गुण और शुभ कर्मों से युक्त सदैव कीजिए ।

३—ओं स्वस्ति नो मिमीतामश्विना भगः,
स्वस्ति देव्यदितिरनर्वणः ।
स्वस्ति पूषा असुरो दधातु नः,
स्वस्ति द्यावापृथिवी सुचेतुना ॥ ऋ० ५-५१-११

भावार्थ—(अश्विना) अध्यापक और उपदेशक (अनवर्णः) ऐश्वर्यरहित का (स्वस्ति मिमीताम्) सुख रचें अथवा करें। (भगः) ऐश्वर्य देने वाला वायु (नः स्वस्ति) हम लोगों के लिए सुखप्रद हो। (देवी अदितिः नः स्वस्ति) प्रकाशित अखण्ड विद्या हमारे लिए सुखमय हो। (पूषा) पुष्टिकारक दुग्धादि पदार्थ (नः स्वस्ति) हमारे लिए सुखकारक हों और (असुरः नः स्वस्ति दधातु) मेघ हमारे लिए सुख धारण करें (द्यावापृथिवी सुचेतुना स्वस्ति) द्यौ और पृथिवी, प्रकाश और भूमि उत्तम विज्ञान से सुखमय हों।

भावार्थ—जो मनुष्य पदार्थ विद्या (विज्ञान Science)

से पदार्थों को उपयुक्त करें अर्थात् काम में लावें—वे उन से उपकार ग्रहण करने को समर्थ हों, अर्थात् उनसे उप-कार लें और कर सकें।

४—ओ३म् स्वस्तये वायुमुप ब्रवामहै,
सोमं स्वस्ति भुवनस्य यस्पतिः।
बृहस्पतिं सर्वंगणं स्वस्तये,
स्वस्तय आदित्यासो भवन्तु नः॥

ऋ० ५-५१-१२

पदार्थ—हे मनुष्यो ! जैसे हम लोग (स्वस्तये वायुम् सोमम् उप, ब्रवाम है) सुख के लिए वायु विद्या और ऐश्वर्य का उपदेश देवें वैसे सुनकर आप लोग अन्यों के प्रति उपदेश दीजिए। (यः भुवनस्य पतिः) जो लोक का स्वामी है वह (स्वस्वये) उपद्रव दूर होने के लिए अर्थात् सुख सम्पादन के लिए (सर्वंगणम्) सम्पूर्ण समूह जिसमें उस (बृहस्पतिम्) बड़ी वेदवाणी के स्वामी को (स्वस्ति) और हम लोगों के लिए सुख को धारण करो और जैसे (आदित्यासः) ४८ वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचर्य से किया विद्याभ्यास हम लोगों के लिए (स्वस्तये) अत्यन्त सुख के लिए होवे वैसे आप लोगों के लिए भी हो।

भावार्थ—मनुष्य परस्पर पदार्थ विद्या को सुन और अभ्यास करके विद्वान् होवें ॥४॥

५—ओ३म् विश्वे देवा नो अद्या स्वस्तये,

वैश्वानरो वसुरग्निः स्वस्तये ।

देवा अवन्त्वृभवः स्वस्तये,

स्वस्ति नो रुद्रः पात्वंहसः ॥

ऋ० ५-५१-१३

पदार्थ—(विश्वे देवा स्वस्तये नः अद्या अवन्तु) समस्त विद्वान् सुख के लिए हमारी आज—इस समय रक्षा करें और (स्वस्तये वैश्वानरः वसुः अग्निः) सुख के लिए समस्त मनुष्यों में प्रकाशमान सर्वत्र बसने वाला अग्नि रक्षा करे और (ऋभवः देवाः स्वस्तये अवन्तु) बुद्धिमान् विद्वान जन विद्या सुख के लिए हमारी रक्षा करें (रुद्रः स्वस्ति नः अहसः पातु) दुष्टों को दण्ड देने वाला सुख की भावना करके हम लोगों की अपराध से रक्षा करें ।

भावार्थ—विद्वानों को योग्य है कि उपदेश और अध्यापन से सब मनुष्यों की निरन्तर रक्षा करके वृद्धि करावें ॥५॥

६—ओ३म् स्वस्ति मित्रावरुणा स्वस्ति पथ्ये रेवति।
स्वस्ति न इन्द्रश्चाग्निश्च, स्वस्ति नो अदिते कृधि ॥
ऋ० ५-५१-१४

पदार्थ—हे (अदिते)खण्डित विद्या से रहित (रेवति) बहुत धन से युक्त आप (पथ्ये) मार्ग में, कर्मो में, जैसे (मित्रावरुणौ) प्राण और उदान (नः स्वस्ति) हम लोगों के लिए सुख देते हैं (इन्द्रः च स्वस्ति) जैसे वायु सुख देती है, जैसे (अग्निः च स्वस्ति) विजली सुख देती है, वैसे (नः स्वस्ति कृधि) हम लोगों के लिए सुख करिये।

भावार्थ—जो सब जीवों के लिए सुख देता है वही विद्वान् प्रशंसित होता है ॥६॥

७—ओ३म् स्वस्ति पन्थामनु चरेम सूर्याचन्द्रमसाविव।
पुनर्ददताघ्नता जानता संगमेमहि ॥ ऋ० ५-५१-१५

पदार्थ—हम लोग (सूर्याचन्द्रससाविव) सूर्य और चन्द्रमा के सदृश (स्वस्ति पन्थाम् अनुकरेम्) सुख के मार्गों के अनुगामी हों और फिर (ददता) दान करने (अघ्नता) और न नाश करने वाले (जानता) विद्वान् के साथ (सगंमेमहि) मिलें ॥७॥

भावार्थ—हे मनुष्यो ! सूर्य और चन्द्रमा नियम

से दिन रात्री चलते हैं वैसे न्याय के मार्ग को प्राप्त हूजिए और सज्जनों के साथ समागम कीजिए ।७।

८—ओं ये देवानां यज्ञिया यज्ञियानां ।
मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः ।
ते नो रासन्तामुरुगायमद्य
यूयं पात स्वस्तिभि सदा नः ॥ ऋ० ७-३५-१५॥

पदार्थ–(ये देवनाम्) जो विद्वानों के बीच विद्वान (यज्ञियानां यज्ञियाः) यज्ञ कराने वालों के योग्यों में यज्ञ करने योग्य (मनोः) विचारशील के (यज्ञत्राः) संग करने (अमृताः) अपने स्वरूप से नित्य जीवनमुक्त रहने (ऋतज्ञाः) और सत्यके जानने वाले हैं (ते अद्य) वे आज (नः) हम लोगों के लिए (उरुगायम) वहुतों से गाय हुए विद्याबोध को (रासन्ताम) देंनें। वे विद्वानों ! (यूयं स्वस्तिभिः न सदा पात) तुम विद्यादि दोनों से हम लोगों की सदा रक्षा करो ॥८॥

भावार्थ— हे विद्वानों ! जो अत्यन्त विद्वान् अत्यन्त शिल्पी, सत्य आचरण करने वाले जीवनमुक्त ब्रह्मवेत्ता जन हम लोगों को विद्या और सुन्दर शिक्षा से निरन्तर उन्नति देते हैं उनकी हम लोग सदा सेवा करें । ८ ।

९– ओं येभ्यो माता मधुमत्पिन्वते पयः,
पीयूषं द्योरदितिरद्रिबर्हाः ।
उक्थशुष्मान्वृषभरान्त्स्वप्नसस्ताँ आदित्यां
अनुमदा स्वस्तये ॥ ऋ० १०-६३-३

पदार्थ–(येभ्यः) जिन विद्वानों के लिए (द्यौः अद्रिबर्हाः) द्यौलोक और मेघ से आच्छादित (अदितिः माता) अखण्ड पृथिवी (मधुमत् पीयूषं) मिठास युक्त अमृत (पयः पिन्वते) दूध अथवा उत्तम अन्नयुक्त जल को बहाती है, देती है, (तान्) उन (उक्थशुष्मान्) उत्तम प्रशस्त बलशाली उपदिष्ट वेदज्ञान से बली, (वृषभरान्) यज्ञ द्वारा वृष्टि को लाने वाले, (स्वप्नसः) सुकृत कर्म करने वाले (आदित्याम्) आदित्य ब्रह्मचारियों के (स्वस्तये) सुख कल्याण के लिए (अनुमदा) उस पृथिवी को प्रसन्न करें, साफ करें ॥९॥

भावार्थ—वैज्ञानिक लोग जब प्राकृतिक नियमों को जानकर अग्नि, जल, वायु आदि जड़ पदार्थों को काम में संयुक्त करना जान जाते हैं, पृथिवी माता उनके लिए अभीष्ट सुखों को प्रदान करती हैं, अतः हमारा कल्याण तभी सिद्ध हो सकता है जब हम ऐसे विद्वानों के सत्सं

तथा सेवा से लाभ उठाकर उन्हें प्रसन्न करें, उनके उपदेशों पर आचरण करें ॥९॥

१० — ओं नृचक्षसो अनिमिषन्तो अर्हणा,
बृहद्देवासो अमृतत्वमानशुः ।
ज्योतीरथा अहिमाया अनागसो,
दिवो वर्ष्माणं वसते स्वस्तये ॥

ऋ० १०-६३-४

पदार्थ— (नृचक्षसः) विद्वान् लोग जो (अनिमिषन्तः) दिन-रात काम करनेवाले, एक क्षण भी व्यर्थ न खोने वाले, अप्रमादी (अर्हणाः) अतियोग्य (देवासः) दिव्य गुण सम्पम्न, ब्रह्मावेत्ता (बृहत्) अत्यधिक (अमृतत्वं) मोक्ष सुख को (आनशुः) प्राप्त करते हैं। और (ज्योतीरथाः) ज्योतिष्मान् रथ पर सवार अर्थात् प्रकाश में रमण करनेवाले (अहिमायाः) अप्रतिहत बुद्धि-विस्तृत बुद्धिवाले (अनागसः) निष्पाप जन (दिव्यः) प्रकाशयुक्त (वर्ष्माणं) प्रभु के परम पद स्थान को (स्वस्तये) सुख कल्याणार्थ (वसते) धारण करते हैं ॥१०॥

भावार्थ—जो विद्वान् परिश्रमी और योग्य होते हैं, जिनका जीवन उज्ज्वल होता है, जो सर्वथा पाप रहित होते हैं, उनका जीवन संसार के उपकार के लिए होता

है, वह संसार में यज्ञ को प्राप्त करके मरण पश्चात् मोक्ष सुख को प्राप्त करते हैं। १०।

११–ओं सम्राजो ये सुवृधो यज्ञमाययु-
रपरिह्वृता दधिरे दिविक्षयम्।
तां आ विवास नमसा सुवृक्तिभि-
र्महो आदित्यां अदितिं स्वस्तये॥

ऋ० १०-६३-५

पदार्थ—(ये सुवृधः) जो अपनी और दूसरों की बढ़ती खुशहाली चाहते और करते हैं, (सम्राजः) अपने तेज से प्रकाशित (यज्ञम् आययुः) यज्ञमय जीवन को प्राप्त होते हैं, (अपरिह्वृताः) कुटिलता से रहित हुए (दिविक्षयम् दधिरे) प्रकाश में निवास को धारण करते हैं अर्थात् सदा प्रकाश में रहते हैं। (तान्) उन (महः आदित्यान्) महान् अखण्ड व्रतधारी पुरुषों को (अदिति) अखण्ड नियम अथवा सत्यता को (स्वस्तये) कल्याण के लिए (नमसा) नमस्कार से (सुवृक्तिभिः) अच्छी सुसज्जित प्रार्थनाओं से (आ विवास) परिचर्या करें अर्थात् सत्कार करें। ११।

भावार्थ—वही लोग सत्कार तथा नमस्कार के योग्य होते हैं जो कुटिलता रहित यज्ञमय जीवन धारण

करते हुए संसार का उपकार करते हैं। ऐसे अखण्ड व्रतधारी विद्वानों तथा कर्मठों की संसार पूजा करता है क्योंकि उन्हीं के सत्संग से मानव का कल्याण हो सकता है। ११।

१२—ओं को वः स्तोमं राधयति यं जुजोषथ,
विश्वे देवासो मनुषो यतिष्टन।
को वोऽध्वरं तुविजाता अरं-
करद्यो नः पर्षदत्यंहः स्वस्तये ॥

ऋ० १०-६३-६

पदार्थ—हे [विश्वे देवासः] समस्त दिव्य गुण युक्त विद्वानों ! [को व, स्तोमं राधति] आप लोगों के उपदेष्टव्य वेद ज्ञान-स्तुति का कौन उपदेश करता है (यम् जुजोषथ) जिसको कि प्राय प्रेम से सेवा और उपासना करते हो। हे (मनुषः) मननशील पुरुषों ! (तुविजाः) हे बहुत संख्या में विद्यमान जनों ! (यतिस्थन=यतिष्ठन) आप जितने भी हो (को वः अध्वरुम् अरङ्करत् आप लोगों के हिंसा रहित यज्ञ को कौन लुभूषित) करता है। (यः) जो (अंहः) पापरूप अवैदिक मार्ग अर्थात दुःख सागर से (अति) लाधकर (नः)

स्वस्तये पर्षदति] हमें कल्याण के मार्ग के लिए पार कर दे ॥१२॥

भावार्थ–परमेश्वर का भक्त जो स्वयं पाप से घृणा करता है, वही दूसरों को पाप रूपी दुःख सागर से बचा सकता है। ऐसे महात्मा के संग हो कल्याण की प्राप्ती हो सकती है ॥१२॥

१३– ओं येभ्यो होत्रां प्रथमामायेजे,
मनुः समिद्धाग्निर्मनसा सप्तहोतृभिः ।
त आदित्या अभयं शर्म यच्छत,
सुगा नः कर्त सुपथा स्वस्तये ॥

ऋ० १०-६३-७

पदार्थ—(येभ्यः) जिन आदित्य ब्रह्मचारियों के लिए (समिद्धाग्निः) अग्निहोत्री (मनुः) मननशील विद्वान् (मनसा) मन से (सप्तहोतृभिः) सात होताओं से (प्रथमाम्) मुख्य (होत्राम्) यज्ञ को (आये जे) करता है अर्थात् जिसका बृहद् यज्ञों द्वारा सम्मान किया जाता है (ते आदित्याः) वे आदित्य ब्रह्मचारी (अभयं शर्म) भय रहित सुख को (यच्छत) देवें, और (नः स्वस्तये) हमारे कल्याण के लिए (सुगा) सुगम (सुपथा) नेक मार्गों को (कर्त) करें।

भावार्थ—आदित्य ब्रह्मचारियों का महान् यज्ञों से सत्कार करो, वह स्वयं भयरहित कल्याण का मार्ग बतायेंगे ।

१४– ओं य ईशिरे भुवनस्य प्रचेतसो,
विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च मन्तवः ।
ते नः कृतादकृतादेनसस्पर्यद्या,
देवासः पिपृता स्वस्तये ॥ ऋ० २०-३३-३

पदार्थ—(ये प्रचेतसः मन्तवः) जो उत्कृष्ट ज्ञान वाले मननशील पुरुष हैं वे (विश्वस्य भुवनस्य स्थातु जगतः) सम्पूर्ण संसार के स्थावर और जंगम के (ईशिरे) शासक होते हैं, हे (देवासः) विद्वानों ! (ते) वे, तुम (नः) हमें (कृतात्) किए हुए (अकृतात्) न किए हुए (एनसः) पाप से (परि) हटाकर (अद्य) इस जीवन में (स्वस्तये) कल्याण के लिए (पिपृता) रक्षा करो ।१४।

भावार्थ— जो महानुभाव प्रकृति के नियमों को जानता है, जो सच्चा तत्वदर्शी है वह संसार के जड़ चेतन पदार्थों पर राज्य कर सकता है और वही शारीरिक तथा मानसिक पापों से बचा सकता है ॥१४॥

१५– ओं भरेष्विन्द्रं सुहवं हवामहे,
ऽंहोमुचं सुकृतं दैव्यं जनम् ।

अग्निं मित्रं वरुणं सातये भगं,
द्यावापृथिवी मरुतः स्वस्तये ॥ ऋ० १०-६३-६

पदार्थ–[भरेषु] संकटों या संग्रामों में [सुहवम्] सुगमता से बुलाये जाने योग्य, [अंहोमुचम्] पापों से छुड़ाने वाले, [सुकृतम्] विचित्र कारीगरी वाले, (दैव्यम्) दिव्य शक्ति सम्पन्न, [जनम्] समस्त संसार के उत्पादक [अग्निम्] ज्ञानस्वरूप [मित्रं] सबसे स्नेह करने वाले, [वरुणम्] वरने योग्य [भगम्] भजनीय [इन्द्रम्] सर्वशक्तिमान परमेश्वर को [सातये हवामहे] अन्नादि लाभ के लिए बुलाते हैं। [द्यावापृथिवी मरुतः स्वस्तये] अन्तरिक्ष, पृथिवी और वायु हमारे कल्याण के लिए हों ॥१५॥

भावार्थ—सर्व संकट निवारक केवल एक प्रभु ही है, उसी को सर्वदा रक्षा के लिए पुकारा करें ॥१५॥

१६—ओं सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसं,
सुशर्माणमदितिं सुप्रणीतिम्।
दैवीं नावं स्वरित्रामनागस-
मस्रवन्तीमा रुहेमा स्वस्तये ॥

ऋ० १०-६३-१०

पदार्थ—[सुत्रामाणं] उत्तम रीति से रक्षा करने वाली [पृथिवीं] विस्तृत [द्याम्] सूर्य समान प्रकाश युक्त, [अनेहसं] पापों से रहित [सुशर्माणम्] उत्तम सुख, युक्त [अदितिं] अटूट [सुप्रणीतिं] बहुत रोचक (अस्रवन्तीम्) न चूनने वाली छिद्र रहित (दैवीम् नावम्) देवी नौका पर अर्थात् जल, अग्नि, भाप, विद्युत् आदि से चलने वाली नौका पर अथवा दिव्य गुणों से सम्पन्न वेद माता रूपी नौका पर [स्वस्तये आरुहेम] सुख के लिये चढ़ें ॥१६॥

भावार्थ–जिस नौका में सुख आदि के सब सामान हों, जो छिद्र रहित हो, जिसमें अनेक प्रकार का प्रकाश तथा विद्वान् हों उस बड़ी नौका में सवार होकर समुद्र पार देश देशान्तरों में जाकर अपने देश को लक्ष्मीवान् करें अथवा विद्वानों के सङ्ग से सच्चे ऐश्वर्य का उपार्जन करें।

१७—ओं विश्वे यजत्रा अधि वोचतोतये,
त्रायध्वं नो दुरेवाया अभिह्रुतः ।
सत्यया वो देवहूत्या हुवेम,
शृण्वतो देवा अवसे स्वस्तये ॥

ऋ० १०-६३-११

पदार्थ--[विश्वे यजत्रा] हे सब वन्दनीय विद्वानों ! [ऊतेय] रक्षा के लिए [अधिवोचत] उपदेश दो [अभिह्रुतः] हिंसा और कुटिल [दुरेवायाः] दुर्गति से [नः] हमारी [त्रायध्वं] रक्षा करो [देवाः अवसे स्वस्तये] हे विद्वान् लोगो ! रक्षा और सुख के लिए [वः] तुम [श्रृण्वतः] सुनते हुओं को [सत्यया देवहूत्या] सच्चे विद्वानों के योग्य निमन्त्रण द्वारा [हुवेम] हम बुलाते हैं ॥१७॥

भावार्थ—विद्वानों के सत्योपदेश तथा सत्सङ्ग से हम दुर्गति से रक्षा कर सकते हैं ॥१७॥

१८—ओं अपामीवामप विश्वामनाहुति-
मपारातिं दुर्विदत्रामघायतः ।
आरे देवा द्वेषो अस्मद्युयोतनोरु
णः शर्म यच्छता स्वस्तये ॥

ऋ० १०-६३-१२

पदार्थ—[देवाः] हे विद्वानों ! [अमीवाम् अप] संकट को, पीड़ा को हटाओ [विश्वाम् अनाहुतिं] सब प्रकार के अयज्ञमय जीवन को [अप] हटाओ [अरातिं] दान न करने अथवा कृपणता के भाव और [दुर्विदत्राम्] कुमति को [अप] हटाओ (अघायतः) हिंसा वा

पाप की इच्छा करने वाले के (द्वेषः) देव को (अस्मत्) हम से (आरे युयोतन) दूर करो। (नः) हमें (स्वस्तये) कल्याण के लिए (उरु शर्म यच्छत) बहुत बहुत सुख प्रदान करो।

भावार्थ—विद्वानों के उपदेश तथा सत्संग से हम रोगों, अयज्ञमय जीवन और कुमति से बच सकेंगे, उन्हीं के उपदेश से हिंसक लोगों का द्वेष दूर हो सकता है और सुख की प्राप्ति हो सकती है ॥१८॥

१९—ओं अरिष्टः स मर्तो विश्व एधते,
प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्परि।
यमादित्यासो नयथा सुनीतिभि-
रति विश्वानि दुरिता स्वस्तये ॥
ऋ० १०-६३-१३

पदार्थ—(आदित्याः) हे आदित्य ब्रह्मचारी विद्वानो! (यं स्वस्तये सुनीतिभिः) जिस मनुष्य को तुम कल्याण के लिए सुन्दर नीतियों से (विश्वानि दुरिता) सब कुमार्ग, दुर्व्यसनों से (परि अति नयथा) छुड़ाकर सन्मार्ग पर ले जाते हो, (सः मर्त्तः) वह मनुष्य (अरिष्टः एधते) पीड़ा रहित होकर बढ़ता है और (धर्मणः परि) धर्म में लगा हुआ (प्रजाभिः प्रजायते) सन्तानों के साथ भली प्रकार प्रकट होता है ॥१९॥

भावार्थ—वेदादि शास्त्रों के प्रकाश से सूर्य समान प्रकाशमान विद्वानों के मुख से उपदेश सुनकर मनुष्य कुमार्ग को छोड़कर सुमार्ग पर चल पड़ते हैं और संतानों से भली प्रकार बढ़ते हैं ॥१९॥

२०—ओं यं देवासोऽवथ वाजसातौ,
यं शूरसाता मरुतो हिते धने ।
प्रातर्यावाणं रथमिन्द्र मानसि-
मरिष्यन्तमा रुहेमा स्वस्तये ॥ ऋ० १०-६३-१४

पदार्थ—(मरुतः देवासः) हे वायुवत बलवान् वीर जनो ! (वाजसातौ) आप लोग ज्ञान, ऐश्वर्य बल आदि लाभ के संग्राम आदि अवसरों पर (यं रथम्) जिस रमणीय यानादि की (अवथा) रक्षा करते हो अथवा जिस की शरण में जाते हो, (शूरसाता) वीर पुरुषों के करने योग्य संग्राम में (हिते धने) हितकर धन को प्राप्त करने के लिए जिसकी शरण में जाते हो, (इन्द्रसानसिम्) उत्तम सुशोभित (प्रातर्याणम्) प्रातःकाल से ही गमन योग्य (अरिष्यन्तम्) हानि रहित उस रथ पर (स्वस्तये आरुहेम) हम कल्याणार्थ चढ़ें अर्थात् उसका आश्रय लें ॥२०॥

भावार्थ—हितकर धनादि की प्राप्ति के लिए हमें

जहां शूरवीर बनना होगा वहाँ हानि रहित रमणीय स्वरूप परमेश्वर रूपी रथ की शरण लेनी होगी अर्थात् परमेश्वर की शरण और सहायता के बिना न संग्राम में विजय हो सकती है और न ही वास्तविक ऐश्वर्य की प्राप्ति हो सकती है ॥२०॥

२१—ओं स्वस्ति नः पथ्यासु धन्वसु,
स्वस्त्यप्सु वृजने स्वर्वति ।
स्वस्ति न पुत्रकृथेषु योनिषु,
स्वस्ति राये मरुतो दधातन ॥ऋ० १०-६३-१५

पदार्थ—(मरुतः) हे गतिशील विद्वानों ! (नः) हमारे लिए (पथ्यासु) मार्ग के योग्य देशों में (धन्वसु) मरुस्थलों में (स्वस्ति) कल्याण हो (अपसु स्वस्ति) जलों में कल्याण हो (स्वर्वति) सैन्यादि बलों से युक्त (वृजने) संग्राम में (स्वस्ति) कल्याण हो। (नः) हमारे पुत्रकृथेषु योनिषु) पुत्रों को उत्पन्न करने वाली गृहणियों में (स्वस्ति) कल्याण करो। (राये) धनादि ऐश्वर्य के लिए (स्वस्ति दधातन) कल्याण को धारण करो ॥२१॥

भावार्थ—विद्वानों के सत्संग और उपदेश से हमें सर्वत्र कल्याण की प्राप्ति हो ॥२१॥

२२—ओं स्वस्तिरिद्धि प्रपथे श्रेष्ठा,

रेक्णस्वत्यभि या वाममेति ।
सा नो ग्रमासो ग्ररणे निपातु,
स्वावेशा भवतु देवगोपा ॥

ऋ० १०–६३–१६

पदार्थ—(स्वस्ति इत् हि प्रपथे) उत्तम मार्ग में चलने वाले का कल्याण हो। (श्रेष्ठा रेक्णस्वति) ग्रति सुन्दर उत्तम ऐश्वर्य ग्रौर वीर्य (सामर्थ्य) वाली (या वामम् ग्रभि एति) जो प्रशंसनीय सेवनीय पुरुष को प्राप्त होती है, ऐसी सहचारिणी गृहिणी हो। (सा नः) वह हमें (ग्ररणे) ग्रानन्द सुखादि साधनों से रहित निर्जन स्थानों में (पातु) हमारी रक्षा करे, पालन पोषण करे। (सु-ग्रावेशा) सुखप्रद निवास-स्थान से युक्त होकर (देव-गोपा भवतु) उत्तम पुरुषों और उत्तम प्रिय पति से सुरक्षित हो ॥२२॥

भावार्थ—गृहस्थ सुख पहुँचाने वाली सुगृहिणी होती है। पति पत्नी की ग्रनुकूलता से गार्हस्थ्य जीवन सुखद जीवन हो सकता है ग्रन्यथा नहीं ॥२२॥

२३—ग्रों इषे त्वोर्जे त्वा, वायव स्थ देवो वः,
सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मण,
ग्राप्यायध्वमघ्न्या इन्द्राय भागं,

प्रजावतीरनमीवा अयक्ष्मा मा व स्तेन
ईशत, माघशंसो, ध्रुवा अस्मिन् गोपतौ
स्यात, बह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि ॥

यजु० १–१

पदार्थ—हे मनुष्य लोगो ! जो (सविता देव) सर्वजगदुत्पादक सम्पूर्ण ऐश्वर्य युक्त, सब सुखों के देने और सब विद्या के प्रसिद्ध करने वाला परमात्मा है, सो (वः) तुम, हम और अपने मित्रों को जो (वायवः) सब क्रियाओं के सिद्ध कराने हारे स्पर्श गुण वाले प्राण अन्तःकरण और इन्द्रियां (स्थ) हैं उनकी (श्रेष्ठतमाय कर्मणे) अत्युत्तम करने योग्य, सर्वोपकारक यज्ञादि कर्मों के लिए (प्रापयतु) अच्छी प्रकार संयुक्त करे। हम लोग (इषे) अन्न आदि उत्तम उत्तम पदार्थों और विज्ञान की इच्छा और (ऊर्जे) पराक्रम अर्थात् उत्तम रस की प्राप्ति के लिए (भागं) सेवा करने योग्य धन और ज्ञान के भरे हुवे उक्त गुणवाले और (त्वा) श्रेष्ठ पराक्रमादि गुणों के देनेहारे आपका सब प्रकार से आश्रय करते हैं। हे मित्र लोगों ! तुमभी ऐसे होकर (आप्यायध्वम्) उन्नति को प्राप्त हो तथा हम भी हों। हे भगवान् जगदीश्वर !

हम लोगों के (इन्द्राय) परम ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिए (प्रजतीः) जिन के बहुत सन्तान हैं तथा जो (अनमीवाः) व्याधि और (अयक्ष्माः) जिनके राजयक्ष्मा आदि रोग नहीं हैं वे (अघ्न्याः) जो गौ आदि पशु वा उन्नति करने योग्य हैं जो कभी हिंसा करने योग्य नहीं कि जो इन्द्रियां और पृथ्वी आदि लोक हैं उनको सदैव (प्रार्पयतु) नियत कीजिये। हे जगदीश्वर! आप की कृपा से हम लोगों में से दुःख देने के लिए अघशंसः पापी वा स्तेन चोर डाकू मा ईशत मत उत्पन्न हो। तथा आप इस यजमानस्य परमेश्वर और सर्वोपकारक धर्म के सेवन करने वाले मनुष्य के पशून पाहि गौ घोड़े आदि पशुओं की रक्षा करो, अस्मिन् इस धार्मिक गौपतौ पृथ्वी आदि पदार्थों की रक्षा चाहने वाले सज्जन मनुष्य के समीप बह्वीः बहुत से उक्त पदार्थ ध्रुवा स्यात निश्चल सुख के हेतु हों ॥२३॥

भावार्थ—विद्वान् मनुष्यों को सदैव परमेश्वर और धर्म पुरुषार्थ के आश्रय से ऋग्वेद को पढ़ के, गुण और गुणी को ठीक ठीक जान कर, सब पदार्थों के संप्रयोग से पुरुषार्थ की सिद्धि के लिए अत्युत्तम क्रियाओं

से युक्त होकर चाहिए, कि जिस से परमेश्वर की कृपा पूर्वक सब मनुष्यों के सुख और ऐश्वर्य की वृद्धि हो। सब लोगों को चाहिए कि अच्छे अच्छे कामों से प्रजा की रक्षा तथा उत्तम उत्तम गुणों से पुत्रादि की शिक्षा सदैव करें, कि जिससे प्रमल रोग विघ्न और चोरों का अभाव होकर प्रजा और पुत्रादि सब सुखों को प्राप्त हों यही श्रेष्ठ कर्म सब सुखों की खान है। हे मनुष्य लोगो! आओ अपने, मिल के जिसने इस संसार में आश्चर्य रूप पदार्थ रचे हैं उस जगदीश्वर के लिए सदैव धन्यवाद देवें। वही परम दयालु ईश्वर अपनी कृपा से उक्त कामों को करते हुए मनुष्यों की सदा रक्षा करता है। २३।

२४—ओं आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु,
विश्वतोऽदब्धासो अपरीतास उद्भिदः।
देवा नो यथा सदमिद् वृधे,
असन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवे दिवे।
(यजु० २५-१४)

पदार्थ— (नः) हम लोगों का (विश्वतः) सब ओर से (भद्राः) कल्याण करने वाले (अदब्धास) जो विनाश को प्राप्त न हुए (अपरीतासः) और से जो न व्याप्त

किए गए अर्थात सब कामों से उत्तम (उद्भिदः) जो दुःख का विनाश करते वे ऋतवः यज्ञ या बुद्धि बल (आयन्तु) अच्छी प्रकार प्राप्त हों। (यथा) जैसे (नः) हम लोगों की (सदम्) उस सभा को कि जिसमें स्थित होते हैं प्राप्त हुए (अप्रायुवः) जिनकी अवस्था नष्ट नहीं होती वे (देवाः) पृथिवी आदि पदार्थों के समान विद्वान् जन (इत्) वही (दिवे दिवे) प्रतिदिन (वृधे) वृद्धि के लिए (रक्षितारः) पालन करने वाले (असन्) हों। २४।

भावार्थ—सब मनुष्यों की परमेश्वर के विज्ञान और विद्वानों के संग से बहुत बुद्धियों को प्राप्त होकर सब ओर से धर्म का आचरण कर नित्य सब की रक्षा करने वाले होना चाहिए। २४।

२५—ओं देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां,
देवाना ७ रातिरभि नो निवर्तताम।
देवाना ७ सख्यमुपसेदिमा वयं,
देवा न आयुः प्रतिरन्तु जीवसे।
(यजु० २५-१५)

पदार्थ—हे मनुष्यो ! जैसे (देवानाम्) विद्वानों की (भद्रा) कल्याण करने वाली (सुमतिः) उत्तम बुद्धि हम लोगों को और (ऋजूयताम) कठिन विषयों को सरल

करते हुए (देवानाम्) देने वाले विद्वानों का (रातीः) विद्यादि पदार्थों का देना (नः) हम लोगों को (अभि नि, वर्त्तताम्) सब ओर से सिद्ध करे, सब गुणों से पूर्ण करे, (वयम्) हम लोग (देवानां) विद्वानों की (सख्यम्) मित्रमा को (उप सेदिम) अच्छे प्रकार पावें। (देवाः) विद्वान् (नः) हम को (जीवसे) जीने के लिए (आयुः) जिससे प्राण का धारण होता उस आयु को (प्रतिरन्तु) पूरी भुगावें वैसे तुम्हारे प्रति बर्ताव रखें। २५।

भावार्थ—सब मनुष्यों को चाहिए कि पूर्ण शास्त्र वेत्ता विद्वानों के समीप से उत्तम बुद्धियों को पाकर ब्रह्मचर्य आश्रम से आयु को बढा के सदैव धार्मिक जनों के साथ मित्रता रखें। २५।

२६—ओं तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं,
धियंजिन्वमवसे हूमहे वयम्।
पूषा नो यथा वेदसामसद् वृधे,
रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये।

यजु० २५-१८

पदार्थ—हे मनुष्यो (वयम्) हम लोग (अवसे) रक्षा आदि के लिए (जगतः) चर और (तस्थुषः) अचर जगत् के (पतिम् रक्षक (धियंजिन्वम्) बुद्धि को तुष्ट

प्रसन्न वा शुद्ध करने वाले, (तम्) उस अखण्ड (ईशान
सबको वश में रखने वाले, सबके स्वामी परमात्मा
(हूमहे) स्तुति करते हैं। वह (यथा) जैसे (नः) हम
(वेदसाम्) धनों की (वृधे) वृद्धि के लिए (पूष
पुष्टिकर्त्ता यथा (रक्षिता) रक्षा करने हारा (स्वस्त
सुख के लिए (पूषा) सब का रक्षक (अदब्ध) नहीं मार
वाला (असत्) होवे। वैसे तुम लोग भी उसकी स्तु
करो और वह तुम्हारे लिए भी रक्षा आदि
करने वाला होवे ॥२६॥

भावार्थ—सब विद्वान् लोग सब मनुष्यों के प्र
ऐसा उपदेश करें कि सर्वशक्तिमान् निराका
सर्वत्र व्यापक परमेश्वर कि उपासना तुम लोग भी क
और उसी को सबकी उन्नति करने वाला जानो ॥२

२७—ओं स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः
स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः,
स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥

यजु० २५-

पदार्थ—हे मनुष्यो! जो (वृद्धश्रवाः) ब
सुनने वाला (इन्द्रः) परम ऐश्वर्यवान् ईश्वर (नः) ह

लिये (स्वस्ति) उत्तम सुख, जो (विश्ववेदाः) समस्त जगत में वेद ही जिस का धन है वह (पूषा) सबका पुष्टि करने वाला (नः) हम लोगों के लिए (स्वस्ति) सुख जो (तार्क्ष्यः) घोड़े के समान (अरिष्टनेमीः) सुखों की प्राप्ति कराता हुआ (नः) हमारे लोगों के लिए (स्वस्ति) उत्तम सुख तथा जो (बृहस्पतिः) महत्व आदि का स्वामी वा पालन करने वाला परमेश्वर (नः) हमारे लिए (स्वस्ति) उत्तम सुख को (दधातु) धारण करे। वह तुम्हारे लिए भी सुख को धारण करे ॥२७॥

भावार्थ—मनुष्यों को चाहिए कि जैसे अपने सुख को चाहें वैसे औरों के लिये भी चाहें। जैसे कोई अपने लिये दुःख नहीं चाहता वैसे और के लिये भी न चाहे ॥२७॥

२८— ओं भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाः
भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।
स्थिरैरंगैस्तुष्टुवा ँ सस्तनूभि-
र्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ॥
यजु० २५-२१

पदार्थ— हे (यजत्राः देवाः) संग करने वाले विद्वानो ! आप लोगों के साथ से हम (कर्णेभिः) कानों

से (भद्रं) जिस से सत्यता जानी जावे उस वचन को (शृणुयाम) सुनें, (अक्षभिः) आंखों से (भद्रम्) कल्याण को (पश्येम) देखें। (स्थिरैः) दृढ़ (अंगैः) अवयबों से (तुष्टुवांसः) स्तुति करते हुवे (तनूभिः) शरीरों से (यत्) जो (देवहितम्) विद्वानों के लिए सुख करनेहारी (आयुः) अवस्था है उसको (वि अशेमहि) अच्छे प्रकार प्राप्त हों ॥२८॥

भावार्थ— जो मनुष्य विद्वानों के साथ से विद्वान होकर सत्य सुनें, सत्य देखें और जगदीश्वर की स्तुति करें तो वे बहुत अवस्था वाले हों। मनुष्यों को चाहिए कि असत्य सुनना, खोटा देखना, झूठी स्तुति, प्रार्थना, प्रशंसा और व्यभिचार न करें ॥२८॥

२९— ओ३म् अग्न आयाहि वीतये,
गृणानो हव्यदातये ।
नि होता सत्सि वर्हिषि ॥

साम पू० १—१—१

पदार्थ— (अग्ने) हे प्रकाशस्वरूप परमात्मन् (बर्हिषि) हमारे ज्ञानयज्ञरूप ध्यान में (आयाहि) आइये, प्राप्त हूजिये। (गृणानः) आप स्तुति किये हुए अर्थात् आपकी ही सर्वत्र स्तुति होती है। (होता) आप

होता (दाता) हैं, (वीतये) प्रकाश करने के लिए और (हृव्यदातये) यज्ञ का फल देने के लिए (निसत्सि) विराजो ॥2६॥

भावार्थ—प्रभो ! हमारी प्रार्थना स्तुति को स्वीकार करो और कृपा करो कि हम सदा आपको अपने हृदय में अनुभव करें ॥२६॥

३०—ओ३म् त्वमग्ने यज्ञानां होता विश्वेषां हितः।
देवेभिर्मानुषे जने ॥ सा० छन्द आ० प्रपा मं ६-२॥

पदार्थ—(अग्ने) हे ज्ञानस्वरूप प्रभो ! आप (विश्वेपां यज्ञानां) सब यज्ञों के (होता) ग्रहण करने वाले हैं आप (देवेभिः) विद्वानों से (मानुषे जने) मनुष्य समूह में (हितः) धारण किये जाते हैं ॥३०॥

भावार्थ—भगवन् ! आप यज्ञस्वरूप हो, सब यज्ञ आप के ही निमित्त किये जाते हैं। सब विद्वान्‌गण आप की ही स्तुति का गान करते हैं ॥३०॥

३१—ओं ये त्रिषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः।
वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वो अद्य दधातु मे ॥
अथर्व० १-१-१

पदार्थ—(ये) जो (त्रिषप्ताः) तीन-सात (विश्वाः) सब (रूपाणि) रूपों को (विभ्रतः) धारण करते हुए

(परियन्ति) सब ओर व्याप्त हैं (तेषां) उनके (बला) बलों को (वाचस्पतिः) वेदवाणी का पति परमात्मा (अद्य) वर्तमान काल में (मे) मेरे (तन्वा) शरीर में वा आत्मा में दधातु धारण करे ॥३१॥

भावार्थ—इस मन्त्र में "त्रिषप्ताः" शब्द से तीन गुणा सात अर्थात् २१ पदार्थों को जगत् में भिन्न-भिन्न रूपोंको धारण करने वाला कहा है। वे २१ तत्व यह हैं-

पांच महाभूत, पांच प्राण, पांच ज्ञानेद्रियां, पांच कर्मेन्द्रियां और एक अन्तःकरण। फिर प्रकृति की तीन अवस्थाएं अथवा गुण—सत्त्व, रजस्, तमस् और सात पदार्थ– पृथिवी, आपः, तेज, वायु, आकाश, तन्मात्र तथा अहङ्कार। अथवा त्रिषप्ता=सप्तग्रह, सप्तऋषि, सप्त-मरुद्गण १२ मास+५ ऋतु+३ लोक और आदित्य इक्कीसवां। शेष भाव स्पष्ट है।

इति स्वस्तिवाचनम्।

* ओ३म् *

अथ शान्तिकरणम्

१—ओं शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः,
शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या ।
शमिन्द्रासोमा सुविताय शं योः,
शं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ ॥

ऋ० ७-३५-१

पदार्थ—हे जगदीश्वर ! (वाजसातौ) संग्राम में (सुविताय) ऐश्वर्य होने के लिए (न) हम लोगों को (अवोभिः) रक्षा आदि के साथ (इन्द्राग्नी) बिजली और साधारण अग्नि (शम्) सुख करने वाले, (शम्) मगंल करने वाले हों, (रातव्या) दी है ग्रहण करने की वस्तु जिन्होंने ऐसे (इन्द्रवरूणा) विद्युत और जल (नः) हम लोगों के लिए (शम्) सुख करने वाले हों, (इन्द्रासोमा) बिजली, औषधिगण (शम्) सुखकारक (शंयोः) सुख के निमित्त, और (इन्द्रापूषणा) बिजली और वायु (नः) हमारे लिए (शम्) आनन्द देने वाले (भवताम्) हों वैसा हम लोग यत्न करें । १ ।

भावार्थ– हे जगदीश्वर ! आपकी कृपा से, विद्वानों के संग से और अपने पुरुषार्थ से आपकी रची हुई सृष्टि में वर्तमान बिजुली आदि पदार्थों से हम लोग उपकार करना कराना चाहते हैं सो यह हम लोगों का प्रयत्न सफल हो । १ ।

२—ओं शं नो भगः शमु नः शंसो अस्तु,
शं नः पुरन्धिः शमु सन्तु रायः
शं नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः,
शं नो अर्यमा पुरुजातो अस्तु ॥ ऋ० ७-३५-२

पदार्थ— हे मनुष्यो ! जैसे (नः) हम लोगों के लिए (भगः) ऐश्वर्य (शम्) सुख करने वाला, (नः) हम लोगों के लिए (शंसः) शिक्षा वा प्रशंसा (शम्) सुख करने वाला, (च) और (पुरन्धिः) बहुत पदार्थ जिसमें रखे जाते हैं वह आकाश (शम्) सुख करने वाला (अस्तु) हो (नः) हम लोगों के लिए (रायः) धन (शम्) सुख करने वाले (उ) ही (सन्तु) हों। (नः) हम लोगों के लिए (सत्यस्य) यथार्थ धर्म वा परमेश्वर की (सुयमस्य) सुन्दर नियम को प्राप्त करने योग्य व्यवहार की (शंसः) प्रशंसा (शम्) सुख देने वाली और (पुरुजातः) बहुत मनुष्यों में प्रसिद्ध (अर्यमा) न्यायकारी (नः) हमारे

लिए [शम्] आनन्द देने वाला [अस्तु] होवे वैसा हम प्रयत्न करें । २ ।

भावार्थ—हे मनुष्यो ! तुम जैसे ऐश्वर्य, पुण्यकीर्ति अवकाश, धन, धर्म, योग और न्यायाधीश सुख करने वाले हों वैसा अनुष्ठान करो ।

३=ओं शं नो धाता शमु धर्ता नो अस्तु,
शं न उरूची भवतु स्वधाभिः ।
शं रोदसी बृहती शं नो अद्रिः,
शं नो देवानां सुहवानि सन्तु ॥

ऋ० ७-३५-३

पदार्थ—हे जगदीश्वर ! विद्वान् वा आपकी कृपा और संग से (नः) हम लोगों के लिए (धाता) धारण करने वाला,, (शम्) सुखस्वरूप (उ) और धर्ता पुष्टि करने वाला (नः) हम लोगों के लिए (शम्) सुखस्वरूप (अस्तु) होवे (स्वधाभिः) अन्नादिकों के साथ (उरुचि) जो बहुत पदार्थों को प्राप्त होती वह पृथिवी (नः) हम लोगों के लिए (शम्) भवतु सुख देने वाली हो । (बृहति रोदसी) महान् प्रकाश और अन्तरिक्ष (नः) हम लोगों के लिए (शम्) सुखस्वारूप होवें । (अद्रिः) मेघ (नःशम्) हमारे लिए सुख कारक हों । (नः) हम लोगों के लिए

देवानाम् विद्वानों के (सुहवानि) सुन्दर आह्वान प्रशंसा से बुलाये (शम्) सुखस्वरूप हों ।३।

भावार्थ—जो मनुष्य पुष्टि करने वालों से उपकार लेना जानते हैं वे सब सुखों को पाते हैं ।३।

४- ओं शं नो अग्निर्ज्योतिरनीको अस्तु,
शं नो मित्रावरुणावश्विना शम् ।
शं नः सुकृताम् सुकृतानि सन्तु,
शं न इषिरो अभि वातु वातः ॥

ऋ० ७-३५-४

पदार्थ—हे जगदीश्वर वा विद्वान् आपकी कृपा से (ज्योतिरनीकः) ज्योति ही सेवा के समान है जिसकी (अग्निः) वह अग्नि (नः शम् अस्तु) हम लोगों के लिए सुखरूप हो । (अश्विना) व्यापक पदार्थ (शम्) सुखरूप और (मित्रावरुणा) प्राण और उदान (नः शम्) हमारे लिए सुखस्वरूप होवें । (नः) हम (सुकृताम) सुन्दर धर्म करने वालों के (सुकृतानि) धर्माचरण (शम् सन्तु) सुखरूप हों और (इषिरः) शीघ्र जाने वाला (वातः) वायु (नः शम्) हम लोगो के मिए सुखरूप (अभि, वातु) सब ओर से बहे । ४ ।

भावार्थ—जो अग्नि और वायु आदि पदार्थों से कार्यों को सिद्ध करते हैं वे समग्र ऐश्वर्य को प्राप्त होते हैं ।।४।।

५—ओ३म् शन्नो द्यावापृथिवी पूर्वहूतौ,
समन्तरिक्षं दृशये नो अस्तु ।
शं न ओषधीर्वनिनो भवन्तु,
शं नो रजसस्पतिरस्तु जिष्णुः ।

ऋ० ७-३५-५

पदार्थ—हे जगदीश्वर और शिक्षा देने वाले आप की कृपा और उपदेश से (पूर्वहूतौ) जिस में पिछलों की प्रशंसा विद्यमान वा जिस से पिछलों की प्रशंसा होती है उस में (द्यावापृथिवी) बिजली और भूमि (नः) हम लोगों के लिये (शम्) सुख (दृशये) देखने को (अन्तरिक्षम्) भूमि और सूर्य के बीच का आकाश (नः) हम लोगों के (शम्) सुखरूप (अस्तु) हो और (औषधीः) औषधि तथा (वनिनः) बन जिन में विद्यमान वे वृक्ष (नः) हमारे लिये (शम्) सुखस्वरूप (भवन्तु) होवें, (रजसः) लोकों में सबका (पतिः) स्वामी (जिष्णु) जयशील (नः) हमारे लिए सुखरूप (अस्तु) हो ।।५।।

भावार्थ—जो सब सृष्टिस्थ पदार्थों को सुख से संयुक्त

करने के योग्य होते हैं वे मनुष्य विद्वान् होते हैं ॥५॥

६—ओं शं न इन्द्रो वसुभिर्देवो अस्तु,

शमादित्येभिर्वरुणः सुशंसः ।

शं नो रुद्रो रुद्रेभिर्जलाषः,

शं नस्त्वष्टा ग्नाभिरिह शृणोतु ।

ऋ० ७-३५-६

पदार्थ—हे जगदीश्वर वा विद्वान् आप के सहाय से और परीक्षा से (इह) यहां (वसुभिः) पृथिव्यादिकों के साथ (देवः) दिव्य, गुण, कर्म, स्वभाव युक्त (इन्द्रः) बिजली वा सूर्य (नः) हम लोगों के लिए (शम्) सुखरूप हों और (आदित्येभिः) संवत्सर के महिनों के साथ (सुशंसः) प्रशंसित प्रशंसा करने योग्य (वरुणः) जलसमुदाय (नः) हम लोगों के लिए (शम्) सुखरूप (अस्तु) हों (रुद्रेभि) जीव वा प्राणों के साथ (जलाषः) दुःखनिवारण करने वाला रुद्र परमात्मा वा जीव (नः) हम लोगों के लिए (शम्) सुखरूप हो । (ग्नाभिः) वाणियों के साथ (त्वष्टा) सब वस्तु विच्छेद करने वाली अग्नि के समान परीक्षक विद्वान् (नः शम् शृणोतु) हम लोगों के लिए सुख से सुने ॥६॥

भावार्थ—जो पृथिवी आदित्य और वायु की विद्या से ईश्वर, जीव, और प्राणों को जान यहाँ इनकी विद्या को पढ़ा, परीक्षा कर सब को विद्वान् और उद्योगी करते हैं, वे इस संसार में किस-किस ऐश्वर्य को नहीं प्राप्त होते हैं अर्थात् सर्वेश्वर्यं सम्पन्न होते हैं ॥६॥

७—ओं शं नः सोमो भवतु ब्रह्म शं नः,
शं नो ग्रावाणः शमु सन्तु यज्ञाः ।
शं नः स्वरूणां मितयो भवन्तु,
शं नः प्रस्वः शम्वस्तु वेदिः ॥

ऋ० ८-३५-७

पदार्थ— हे जगदीश्वर वा विद्वान् आपकी कृपा और पढ़ाने से (सोमः नः शम् भवतु) चन्द्रमा हम लोगों के लिए सुखरूप हो। (ब्रह्म नः शम्) धन वा अन्न हमारे लिए सुख रूप हो। (ग्रावाणः नः शम् सन्तु) मेघ हम लोगों के लिए सुखरूप हों। यज्ञः नः शम् उ) अग्निहोत्र से शिल्पयज्ञ पर्यन्त हम लोगों के लिये सुखरूप ही हों। (स्वरूणाम्) यज्ञशाला के स्तम्भ शब्दों के (मितयः) प्रमाण (नः) शम् भवन्तु) हम लोगों के लिए सुखरूप हों (प्रस्वः नः शम्) जो उत्पन्न होती है वह औषधी हमारे लिये सुखरूप हो और (वेदिः शम् अस्तु) कुण्ड आदि

हमारे लिए सुखरूप ही हों ॥७॥

भावार्थ—जो मनुष्य विद्या, औषधी, धन और यज्ञादि से जगत् का सुख के साथ उपकार करते हैं वे अतुल सुख पाते हैं ॥७॥

८—ओं शं नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु,
शं नश्चतस्रः प्रदिशो भवन्तु।
शं नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु,
शं नः सिन्धवः शमु सन्त्वापः॥

ऋ० ७-३५-८

पदार्थ—हे परमेश्वर (उरुचक्षाः सूर्यः नः शम् उदेतु) जिससे बहुत दर्शन होते हैं वह सूर्य हम लोगों के लिए सुखरूप उदय हो। (चतस्रः प्रदिशः नः शम् भवन्तु) चारों पूर्वादि दिशाएं हम लोगों के लिए सुखरूप हों। (ध्रुवयः पर्वताः न शम् भवन्तु) अपने अपने स्थानों में स्थिरपर्वत हम लोगों के लिए सुखरूप हों। सिन्धवः नः शम्) नदी वा समुद्र हम लोगों के लिए सुखरूप हों, और (आपः शम् उ सन्तु) जल वा प्राण सुखरूप ही हों ॥८॥

भावार्थ—जो जगदीश्वर से बनाए हुए सूर्यादिकों

से उपकार ले सकते हैं वे इस जगत् में श्री, राज्य और कीर्ति वाले होते हैं ॥८॥

९—ओं शं नो अदितिर्भवतु व्रतेभिः,
शं नो भवन्तु मरुतः स्वर्काः ।
शं नो विष्णुः शमु पूषा नो अस्तु,
शं नो भवित्रं शम्वस्तु वायुः ॥ऋ० ७-३५-९

पदार्थ—हे अध्यापक और उपदेशक विद्वानों ! तुम जैसे (अदितिः) विदुषी माता वैसे (व्रतेभिः) अच्छे कामों के साथ (नः शम् भवतु) हम लोगों के लिए सुखरूप हों और (स्वर्काः) सुन्दर मन्त्र विचार हैं जिनके वे (मरुतः) प्राणों के समान प्रियजन अच्छे कामों के साथ (शम् भवन्तु) सुखरूप होवें । (विष्णु नः शम्) व्यापक जगदीश्वर हम लोगों के लिये सुखरूप हो (पूषा नः उ शम्) पुष्टि करने वाले ब्रह्मचर्यादि व्यवहार हमारे लिए सुखरूप ही हों । (भवित्रं नः शम्) होनहार काम हमारे लिए सुखरूप होवें और (वायुः नः शम् उ अस्तु) पवन हमारे लिए सुखरूप ही हों ॥९॥

भावार्थ—माता आदि विदुषियों की कन्या और विद्वान पिता आदि के पुत्र अच्छे प्रकार शिक्षा देने योग्य हैं जिससे यह भूमि से लेकर ईश्वर पर्यन्त पदार्थों

की विद्याओं को पा के धार्मिक होकर सब मनुष्यों को आनन्दित करें ॥९॥

१०—ओं शं नो देवः सविता त्रायमाणः,
शं नो भवन्तूसयो विभातीः ।
शं नः पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्यः,
शं नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शम्भुः ॥

ऋ० ७-३५-१०

पदार्थ–हे विद्वानो ! तुम हम लोगों को शिक्षा दो जैसे (त्रायमाणः सविता) रक्षा करता हुआ सकल जगदुत्पादक ईश्वर (देवः) जो कि सब सुखों का देने वाला आप ही प्रकाशमान है वह (नः शम् भवतु) हम लोगों के लिए सुखरूप हो। (विभातीः उषसः) विशेषता से दीप्ति वाली प्रभात वेला (न शम् भवन्तु) हम लोगों के लिये सुखरूप हों। (पर्जन्यः प्रजाभ्यः नः शम् भवतु) मेघ हम प्रजाजनों के लिये सुखरूप हो और (क्षेत्रस्य, पतिः) जिसके बीच में निवास करते हैं उस जगत् का स्वामी ईश्वर वा राजा (शम्भुः नः शम् अस्तु) सुख की भावना करने वाला हमारे लिये सुखरूप हो ।१०।

भावार्थ—विद्वानों को वेदादि विद्याओं से परमेश्वर आदि पदार्थों के गुण, कर्म, स्वभाव विद्यार्थियों के प्रति

यथावत् उपदेश करने चाहियें। जिससे सभी से उपकार ले सकें ।१०॥

११—ओं शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु,
शं सरस्वती सह धीभिरस्तु ।
शमभिषाचः शमु रातिषाचः,
शं नो दिव्याः पार्थिवा शं नो आप्याः ॥

ऋ० ७-३५-११

पदार्थ—हमारे शुभ गुणों के आचार से (देवाः) विद्यादि शुभ गुणों के देने वाले (विश्वदेवाः) सब विद्वान् जन (नः शम् भवन्तु) हमारे लिए सुखरूप हों। (सरस्वती) विद्या सुशिक्षा युक्त वाणी (धीभिः सह नः शम् अस्तु) उत्तम बुद्धियों के साथ हम लोगों के लिए सुखरूप हो (अभिषाचः) जो अभ्यन्तर आत्मा में सम्बन्ध करते हैं वे (नः शम्) हम लोगों के लिए सुखरूप हों। (रातिषाचः) विद्यादि दान का सम्बन्ध करने वाले हम लोगों के लिए (शम् उ) सुखरूप ही हों। (दिव्याः) शुभ गुण, कर्म स्वभाव युक्त (पार्थिवाः) पृथिवी में विदित राजाजन, वा बहुमूल्य (शम्) सुखरूप हों और (अप्याः) जलों में उत्पन्न हुए नौकाओं से जाने वाले

मोती आदि पदार्थ हम लोगों के लिए (शम्) सुखरूप हों ॥११॥

भावार्थ—मनुष्य को ऐसा आचार करना चाहिए कि जिससे सबको सब विद्वान् जन, सुन्दर बुद्धि और वाणी जिससे देने वाले योगी जन, राजा और शिल्पी जन तथा दिव्य पदार्थ प्राप्त हों ॥११॥

१२—ओं शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु,
शं नो अर्वन्तः शमु सन्तु गावः ।
शं न ऋभवः सुकृतः सुहस्ताः,
शं नो भवन्तु पितरो हवेषु ॥

ऋ० ७-३५-१२

पदार्थ—हे जगदीश्वर वा विद्वान् ! जैसे (हवेषु) हवन आदि कामों में (सत्यस्य पतयः) सत्य भाषण आदि व्यवहार के पति (नः शम भवन्तु) हम लोगों के लिए सुखरूप होवें। (अर्वन्तः) उत्तम घोड़े (नः शम्) हम लोगों को सुखरूप हों। (गावः न शम् उ सन्तु) दूध देती हुई गौएं हमारे लिए सुख रूप ही हों। (सुकृतः) धर्मात्मा (सुहस्ताः) सुन्दर अच्छे कामों में हाथ डालने वाले ऋभवः) बुद्धिमान् जन (नः शम्) हम लोगों के लिए सुखरूप होवें, वैसा विधान करो ॥१२॥

भावार्थ—मनुष्यों को ऐसे शील धारण करने चाहियें जिससे आप्त सज्जन प्रसन्न हों, जिसकी प्रीति से सब पशु और विद्वान् पितृजन प्रसन्न और सुख करने वाले हों ॥१२॥

१३—ओं शं नो अज एकपाद्देवो अस्तु,
शं नोऽहिर्बुध्न्यः शं समुद्रः।
शं नो अपां नपात्पेरुरस्तु,
शं नः पृश्निर्भवतु देवगोपा ॥

ऋ० १-३५-१३

पदार्थ—हे विद्वानो ! तुम ऐसी शिक्षा दो जैसे (नः) हम लोगों को (अजः) जो कभी नहीं उत्पन्न होता, (एकपात्) जिसके एक पैर में सब जगत् विद्यमान है, (देवः शम् अस्तु) वह सब सुख देने वाला जगदीश्वर सुखरूप हो (बुधन्यः) अन्तरिक्ष में प्रसिद्ध होने वाला, (अहिः नः शम्) मेघ हम लोगों के लिए सुखरूप हो। (समुद्रः) जिसमें अच्छे प्रकार जल उछलते हैं वह सागर (नः शम्) हम लोगों के लिए सुखरूप हो। (अपाम् पेरुः) जलों को पार करने वाला और (नपात्) पैर जिसके नहीं हैं वह नौका (नः शम् अस्तु) हम लोगों के लिए सुखरूप हो। (देवगोपा) और सबकी रक्षा करने वाला

(पृश्निः) अन्तरिक्ष अवकाश हम लोगों के लिए (शम्) सुखरूप (भवतु) हो ॥१३॥

भावार्थ—अध्यापक और उपदेशको ! तुम हम लोगों को जन्म मरणादि दोष रहित ईश्वर, मेघ, समुद्र, और नौका की विद्या ग्रहण कराओ जिससे हम लोग सब के रक्षक हों ॥१३॥

१४—ओं इन्द्रो विश्वस्य राजति ।
शं नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे ॥

यजु० ३६-८

पदार्थ—(इन्द्रः) सर्वशक्तिमान् ईश्वर (विश्वस्य) समस्त संसार का प्रकाशक है अर्थात् सर्व जगत् में प्रकाशमान् हो रहा है। उसकी कृपा से (नः द्विपदे शम्) हमारे दो पाऊं वाले पुत्र आदि के लिए सुख हो और हमारे (चतुष्पदे शम्) चौपाए गौ आदि पशुओं के लिए सुख हो ॥४॥

भावार्थ—परमेश्वर ही सब जगत् के पुरुष पशु आदि को सुख देने वाला है। अतः सब को उस जगदीश्वर की ही उपासना करनी चाहिए ॥१४॥

१५—ओं शं नो वातः पवता ꣳ शं नस्तपतु सूर्य्यः ।

शं नः कनिक्रदद्देवः पर्जन्यो अभि वर्षतु ॥

यजु० ३६-१०

पदार्थ—(वातः नः शम् पवताम्) पवन हमारे लिए सुखरूप चले। (सूर्यः नः शम् तपतु) सूर्य हमारे लिए सुखरूप तपे। (कनिक्रदत्) गरजता हुआ (देवः) उत्तम गुण युक्त विद्युत् रूप अग्नि (नः शम्) हम लोगों के लिए सुखरूप हो और पर्जन्यः अभिवर्षतु) मेघ हमारे लिए सब ओर से वर्षे ॥१५॥

भावार्थ—जिस प्रकार से वायु, सूर्य, विद्युत् और मेघ सब को सुखरूप हों, वैसा मनुष्य को अनुष्ठान करना चाहिए ॥१५॥

१६—ओं अहानि शं भवन्तु नः,
शं ँ् रात्री प्रतिधीयताम्।
शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः,
शं न इन्द्रा-वरुणा रातहव्या।
शं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ,
शमिन्द्रा सोमा सुविताय शंयोः॥ यजु० ३६-११

पदार्थ—हे जगदीश्वर वा विद्वान् जन! जैसे (सुविताय) प्रेरणा के लिए (नः अहानि शम् भवन्तु)

हमरे लिए दिन सुखकारी हों। (रात्रिः शम् प्रतिधीयताम्) रातें कल्याण के प्रति हमको धारण करें। (इन्द्राग्नी नः शम् भवताम्) बिजली और प्रत्यक्ष अग्नि हमारे लिए सुखकारी होवें। (रातहव्या) ग्रहण करने योग्य सुख जिनसे प्राप्त हुआ वे (इन्द्रावरुणा) विद्युत् और जल (नः शम्) हमारे लिए सुखकारी हों। (वाजसातौ) अन्नों के सेवन हेतु संग्राम में (इन्द्रापूषणा) विद्युत् और पृथिवी (नः शम्) हमारे लिए सुखकारी होवें। और (इन्द्रासोमा) बिजली और औषधियां (शम्) कल्याणकारी हों, वैसे हमको आप अनुकूल शिक्षा करें।

भावार्थ—हे मनुष्यो! जो ईश्वर और आप्त सत्यवादी विद्वान् लोगों की शिक्षा में आप लोग प्रवृत्त रहो तो दिन रात तुम्हारे भूमि आदि सब पदार्थ सुखकारी होवें ॥१६॥

१७—ओं सन्नो देवीरभिष्टय, आपो भवन्तु पीतये।
शंयोरभिस्रवन्तु नः ॥ यजु० ३६-१२

पदार्थ—हे जगदीश्वर व विद्वान्! जैसे (अभिष्टये) इष्ट सुख की सिद्धि के लिए (पीतये) पीने के अर्थ (देवीः) दिव्य उत्तम (आपः) जल (नः) हमको (शम्

भवन्तु) सुखकारी होवें, (नः) हमारे लिए (शंयोः) सख की वृष्टि (अभि स्रवन्तु) सब ओर से करे, वैसे उपदेश करो ।।२७।।

भावार्थ—जो मनुष्य यज्ञादि से जलादि पदार्थों को शुद्ध सेवन करते हैं उन पर सुख रूप अमृत की वर्षा निरन्तर होती है ।।१७।।

१८– ओं द्यौ शान्तिरन्तरिक्ष ँ शान्तिः,
पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरौषधयः शान्तिः ।
वनस्पतः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म
शान्तिः, सर्वं ँ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः
सा मा शान्तिरेधि ।। य० ३६-११ ।।

पदार्थ—हे मनुष्यो ! (शान्ति द्यौः) प्रकाशयुक्त पदार्थ शांतिकारक हों। (अन्तरिक्षम्) दोनों लोकों के बीच का आकाश (शांतिः) शांतिकारक हो। (पृथिवी शांतिः) भूमि सुखकारी, निरुपद्रव हो। (आपः शांतिः) जल बा प्राण शांतिदायी हों। (औषधयः शांति) सोमल आदि औषधियां सुखदायी हों। (विश्वेदेवाः शांतिः) सब विद्वान लोग उपद्रव निवारक हों। (ब्रह्म शांतिः) परमेश्वर वा वेद सुखदायी हो। (सर्वंम्) सम्पूर्ण वस्तु (शांतिः) शातिकारक हों। शांतिरेव शांति ही

[शांतिः] शांतिकारक हो [सा शांतिः] वह शाँति [मा एधि] मुझ को प्राप्त होवे, तुम लोगों के लिए भी प्राप्त होवे। १८।

भावार्थ–हे मनुष्यो ! जैसे प्रकाश आदि पदार्थ शांति करने वाले होवें वैसे तुम लोग प्रयत्न करो।१८।

१९—ओं तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्।
पश्येम शरदः शतं, जीवेम शरद शतं;
श्रृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतम-
दीनाः स्याम शरदः शतं, भूयश्च शरदः शतात्॥
यजु० ३६-२४

पदार्थ—हें परमेश्वर ! आप जो [देवहितम्] विद्वानों के लिए हितकारी [शुक्रम्] शुद्ध [चक्षुः] नेत्र के तुल्य सबके दिखाने वाले [पुरस्तात्] पूर्व काल अर्थात अनादि काल से [उत् चरत्] उतक्रुष्टता के साथ सब के ज्ञाता हैं। [तत्] उस चेतन ब्रह्म आप को [शतम् शरदः पश्येम] सौ वर्षों तक देखें। [शतम् शरदः श्रृणुयाम] सौ वर्षो तक शास्त्रों व मंगल वचनों को सुनें। [शतम् शरदः अदीनाः स्यामः] सौ वर्ष पर्यन्त दीनता रहित हों। [च] और [शरदः शतात्] सौ वर्ष [भूयः] अधिक भी देखें, जीवें, सुनें, पढ़े, उपदेश करें

और अदीने रहें ।१६।

भावार्थ—हे परमेश्वर ! आपकी कृपा से और आपके विज्ञान से आपकी रचना को देखते हुए आपके साथ युक्त निरोग और सावधान हुए हम लोग समस्त इन्द्रियों से युक्त सौ वर्ष से भी अधिक जीवें। सत्य शास्त्रों और आपके गुणों को सुनें। वेदादि को पढ़ सत्य का उपदेश करें। कभी किसी वस्तु के बिना पराधीन न हों। सदैव स्वतन्त्र हुवे निरन्तर आनन्द भोगें और दूसरों को आनन्दित करें ।१६।

२०—ओं यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं,
तदु सुप्तस्य तथैवैति ।
दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं
तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥ यजु० ३४-१

पदार्थ—हे जगदीश्वर ! आपकी कृपा से (यत्) जो (दैवम्) आत्मा में रहने वा जीवात्मा का साधन (दूरङ्गमम्) दूर जाने, मनुष्य को दूर तक ले जाने वा अनेक पदार्थों का ग्रहण करने वाला (ज्योतिषाम्) शब्द आदि विषयों के प्रकाशक श्रोत्र आदि इन्द्रियों को (ज्योतिः) प्रवृत्त करनेहारा, (एकम्) एक (जाग्रतः)

जाग्रत अवस्था (दूरम् उत् एति) दूर दूर भाग जाता है, (उ) और (तत्) जो (सुप्तस्य) सोते हुए का (तथा) एवं उसी प्रकार (एति) भीतर अन्तःकरण में जाता है। (तत्) वह (मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु) मेरा संकल्प विकल्पात्मक मन कल्याणकारी धर्म विषयक इच्छावाला हो।२०।

भावार्थ–जो मनुष्य परमेश्वर की आज्ञा का सेवन और विद्वानों का संग करके अनेक विध सामर्थ्य युक्त मन को शुद्ध करते हैं। जो जाग्रत अवस्था में विस्तृत व्यवहार वाला वही मन सुषुप्ति अवस्था में ज्ञांत होता है। जो वेगवाले पदार्थों में अति वेगवान् ज्ञान के साधन होने से इन्द्रियों के प्रवर्तक मन को बस में करते हैं, वे अशुभ व्यवहार को छोड़ शुभ व्यवहार में मन को प्रवृत कर सकते हैं।२०।

२१—ओ येन कर्माण्यपसो मनीषिणो,
यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः।
यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां,
तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥

यजु० ३४-२

पदार्थ—हे परमेश्वर जब आपके संग से (येन) जिस (अपसः) सदा कर्म, धर्म निष्ठ (मनीषिणः) मन का दमन करने वाले (धीराः) ध्यान करने वाले बुद्धिमान् लोग (यज्ञे) अग्निहोत्र आदि वा धर्म संयुक्त व्यवहार वा योग यज्ञ में, और (विदथेषु) विज्ञान सम्बन्धी युद्धादि व्यवहारों में (कर्माणि) अत्यन्त इष्ट कर्मों को (कृण्वन्ति) करते हैं। (यत्) जो (अपूर्वम्) सर्वोत्तम गुण कर्म स्वभाव वाला (प्रजानाम् अन्तः) प्राणिमात्र के हृदय में (यज्ञम्) पूजनीय वा संगत एकी भूत हो रहा है। (तत् मे मनः शिसंकल्पम् अस्तु) वह मेरा मनन विचार करना रूप मन धर्मनिष्ठ होवे ॥२१॥

भावार्थ—मनुष्यों को चाहिये कि परमेश्वर की उपासना, सुन्दर विचार, विद्या और सत्संग से अपने अन्तःकरण को अधर्म आचरण से निवृत्त कर धर्म के आचरण में प्रवृत्त करें ॥२१॥

२२—ओं यत् प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च,
यज्ज्योतिरन्तरमृतम्प्रजासु ।
यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते,
तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ यजु० ३४-३

पदार्थ—हे जगदीश्वर ! आपके जताने से (यत्)

जो (प्रज्ञानम्) विशेषकर ज्ञान का उत्पादक बुद्धिरूप (उत्) और भी (चेतः) स्मृति का साधन, (धृतिः) धैर्य स्वरूप (च) और लज्जादि कर्मों का हेतु, (प्रजासु अन्तः) मनुष्य के अन्तःकरण में आत्मा का साथी होने से (अमृतं ज्योति) नाशरहित प्रकाश स्वरूप (यस्मात् ऋते किंचन कर्म न क्रियते) जिसके बिना कोई भी काम नहीं किया जाता (तत् मे मनः शिवसंकल्पं अस्तु) वह मुझ जीवात्मा का सब कर्मों का साधनरूप मन कल्याणकारी परमात्मा में इच्छा रखने वाला हो ।२२।

भावर्थ—हे मनुष्यो ! जो अन्तःकरण बुद्धि चित्त और अहंकार रूप वृत्तिवाला होने से चार प्रकार से भीतर प्रकाश करने वाला, प्राणियों के कर्मों का साधक अविनाशी मन है, उसको न्याय और सत्य आचरण में प्रवृत्त कर, पक्षपात, अन्याय और अधर्माचरण से तुम लोग निवृत करो ॥२२॥

२३—ओं येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्-
परिगृहीताममृतेन सर्वम् ।
येन यज्ञस्तायते सप्त होता,
तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ।।

यजु० ३४

पदार्थ—हे मनुष्यो ! (येन) जिस (अमृतेन) नाश रहित परमात्मा के साथ युक्त होने वाले मन से (भूतम्) व्यतीत हुआ (भुवनम्) वर्तमानकाल सम्बन्धी और (भविष्यत्) होने वाला (सर्वम् इदम्) यह सब त्रिकालस्थ वस्तुमात्र (परिगृहीतम्) सब ओर से गृहीत होता अर्थात् जाना जाता है, (येन) जिस से (सप्तहोता) सात होता, अध्यात्मदृष्टि से ७ होता यज्ञ के निम्न प्रकार हैं :—२ आंखें, २ नाक, २ कान और मुख। कर्मकाण्ड पक्ष में सात होता हैं :—होता, उद्गाता, अध्वर्यु अग्नीत्, ब्रह्मा, यजमान और यजमान पत्नी। पांच प्राण छठा जीवात्मा और अव्यक्त सातवां, ये सात लेने-देने वाले जिसमें हों वह (यज्ञः) अग्निष्टोमादि वा विज्ञान-रूप व्यवहार (तायते) विस्तृत किया जाता है (तत्) वह (मे) मेरा (मनः) योगयुक्त चित्त (शिवशंकल्पम्) मोक्षरूप संकल्प वाला (अस्तु) होवे ॥२३॥

भावार्थ—हे मनुष्यो ! जो चित्त योगाभ्यास के साधन और उपसाधनों से सिद्ध हुआ भूत, भविष्यत्, वर्तमान तीनों काल का ज्ञाता, सब सृष्टि का जानने वाला, कर्म उपासना और ज्ञान का साधक है, उसको सदा ही कल्याणप्रिय करो ।२३।

२४—ओ३म् यस्मिन्नृचः साम यजुँषि,
यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः ।
यस्मिश्चित्त ँ सर्वमोतं प्रजानां,
तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥

ऋ० ३४-५

पदार्थ—(यस्मिन्) जिस मन में (रथनाभाविव अराः) जैसे रथ के पहिए के नीचे के काष्ठ में अरे लगे होते हैं वैसे (ऋचः) ऋग्वेद (साम) साम-वेद (यजुँषि) यजुर्वेद (प्रतिष्ठिता) सब ओर से स्थित और (यस्मिन्) जिसमें अथर्ववेद स्थित है (यस्मिन्) जिसमें (प्रजानाम्) प्राणियों का (सर्वम्) समग्र (चित्तम्) सब पदार्थ सम्बन्धी ज्ञान (ओतम्) सूत में मणियों के समान संयुक्त है। (तत्) वह (मे) मेरा (मनः) मन (शिवसंकल्पम्) कल्याणकारी वेदादि सत्य शास्त्रों का प्रचार रूप संकल्प वाला (अस्तु) हो ।२४।

भावार्थ—हे मनुष्यो ! तुम लोगों को चाहिए जिस मन के स्वस्थ रहने में ही वेदादि विद्याओं का आधार और जिसमें सब व्यवहारों का ज्ञान एकत्र होता है उस अन्तः करण को विद्या और धर्म के आचरण से पवित्र करो ॥२४॥

२५—ओं सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्-
नेनियतेऽभीशुभिर्वाजिनऽइव ।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरञ्जविष्ठं,
तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ यजु० ३४-६

पदार्थ—(यत्) जो मन (सुषारथिः) जैसे सुन्दर सारथि गाड़ीवान् (अश्वानिव) के लगाम से घोड़ों को सब ओर से चलाता है वैसे (मनुष्यान्) मनुष्यादि प्राणियों को (नेनियते) शीघ्र शीघ्र इधर उधर घुमाता है और (अभिशुभिः) जैसे रस्सियों से वाजिनः) वेग वाले घोड़ों को सारथि वश में करता वैसे नियम में रखता, (यत्) जो (हृत्प्रतिष्ठम्) हृदय में स्थित (अजिरम्) विषयादि में प्रेरक वा वृद्धादि अवस्था रहित और (जविष्ठम्) अत्यन्त वेगवान् है । (तत्) वह (मे) मेरा (मनः) मन (शिवसंकल्पम्) मंगलमय नियम में इष्ट(अस्तु)होवे ।२५

भावार्थ—जो मन जिस पदार्थ में आसक्त है वही बल से सारथी घोड़ों को जैसे वैसे प्राणियों को ले जाता है, और गाम से सारथि घोड़ों को जैसे जैसे वश में रखता, सब मूर्खजन जिन के अनुकूल बर्तने और विद्वान्

अपने वश में करते हैं, जैसे शुद्ध हुआ मन सुखकारी और अशुद्ध हुआ मन दुःखदायी, जीता हुआ सिद्धि को, और न जीता हुआ असिद्धि को देता है, वह मन मनुष्यों को अपने वश में रखना चाहिए।२५।

२६—ओं सं नः पवस्व शं गवे शं जनाय शमर्वते।
शं राजन्नोषधीभ्यः ॥साम० २-१-१॥

पदार्थ—(राजन्) हे स्वप्रकाशस्वरूप प्रभो! (स नः) वह आप हमारे (गवे शम् पवस्व) गौ आदि पशुओं के लिए सुख की वर्षा करो। (शम् जनाय) और मनुष्य समूह के लिए सुख हो (अर्वते शम्) हमारे प्राण अथवा अश्व आदि के लिए सुख हो और (ओषधीभ्यः शम्) ओषधियों के लिए सुख हो अर्थात् सुख से उगें, बढ़ें और फलें।२६।

भावार्थ—हे प्रकाशमान् भगवान्! आप हमारे गौ आदि पशुओं, मनुष्यों, प्राणों, अश्वों और ओषधि आदि के लिये सुख की वृष्टि करो।२६।

२७—ओं अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं,
द्यावापृथिवी उभे इमे।
अभयं पश्चादभयं पुरस्ता-
दुत्तरादधरादभयं नो अस्तु॥
अथर्व० १६-१५-

पदार्थ—(अंतरिक्षम् नः अभयं करति) अंतरिक्ष, वातावरण हमें अभय प्रदान करे। (इमे उभे द्यावा) पृथिवी) ये दोनो द्यौ आकाश और पृथिवी (अभयं करतः) अभय करें। (पश्चाद् अभयं) पीछे से या पश्चिम से भय न रहे (अभयं पुरस्तात्) आगे या पूर्व से अभय हो। उत्तरात अधरात्) ऊपर से और नीचे से अथवा उत्तर और दक्षिण से (नः अभयम् अस्तु) हमें अभय हो ।२७।

भावार्थ—हे परमेश्वर ! हमें वायुमण्डल, पृथिवी आकाश आदि से और सब दिशाओं से भय रहित करो ।२७।

२८—ओं अभयं मित्रादभयममित्रादभयं
ज्ञातादभयं पुरो यः।
अभयं नक्तमभयं दिवा नः,
सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु ॥

अथर्व० १९-१५-६

पदार्थ—[मित्रात् अभयम्] मित्र से भय न रहे, [अमित्रात् अभयम्] अमित्र से भी भय न रहे [ज्ञातात् अभयम्] जाने हुये परिचित से भी भय न रहे [ये पुरः] और जो अनजान हमारे आगे आ जायें उससे भी [अभ-

यम्] भय न रहे। [नक्तम् अभयम्] रात को अभय रहे [दिवा अभयम्] दिन को भी भय न रहे। [सर्वा आशाः] समस्त दिशाएं अर्थात् सब दिशाओं के वासी जन्तु [मम् मित्रं भवन्तु] मेरे मित्र हो कर रहें।२८।

भावार्थ—हे प्रभो ! ऐसी कृपा करो कि में सर्वत्र निर्भय हो कर विचरूं, कोई भी मेरा शत्रु न हो।२८।

॥ इति शांतिकरम् ॥

इस के बाद निम्न तीन मन्त्रों से आचमन करें। दक्षिण हस्ताञ्जलि में इतना जल लें कि वह हृदय तक पहुंच सके।

आचमन की विधि–यह है कि आचमन मंत्र पढ़ते समय मंत्र में दर्शाई भावना को मन में रखते हुये आंखों की ज्योति जल में इतनी गाड़ दें कि जल आमन्त्रित हो जाए और फिर ब्रह्मतीर्थ से अर्थात् अंगूठे और कनिष्ठिका के मूल जहां मिलते हैं, उस स्थान से जल को चूसें आवाज न आए, ऊपर से मुख में जल नहीं डालना आचमन् पात्रों में दूब अवश्य रखें। दूब के जल प्रयोग से अनेकों रोग [राजयक्ष्मादि] दूर होते हैं। रक्तचाप के लिए बड़ी लाभायक है। नेत्रज्योति बढ़ती है, ऐसे जल से प्रतिदिन आचमन करें।

आचमन मन्त्राः

१—ओं अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा ॥

अर्थ—हे अमृत (जल) ! तू (उपस्तरणम्) नीचे का बिछोना (असि) है। कैसी सुन्दर यह भावना है।

२—ओं अमृतापिधानमसि स्वाहा ॥

अर्थ—हे अमृत (जल) ! तू ऊपर की (अभिधानम्) ओढ़नी (असि) है। कैसा सुहावना और सत्य यह वाक्य है।

अमृत रूप स्वयं प्रभु है। भक्त अब मां की गोदी में और छत्रछाया में बैठ गया और सर्व प्रकार के कष्ट तथा द्वन्दों से सुरक्षित हो गया।

३—ओ३म् सत्यम् यशः श्रीर्मयी श्रीः श्रयतां स्वाहा

अर्थ—हे भगवन् ! सत्य, यश, (श्रीः) शोभा, (श्रीः) सम्पत्ति मुझ में वास करें। कैसी सुन्दर यह प्रार्थना है।

मनुष्य के जीवन की सफलता सत्याचरण में है, सत्य से ही यश, शोभा सम्पत्ति की प्राप्ति होती है। इस लिये सत्य रक्षा के लिए इन तीनों को क्रमशः वार देना चाहिए याजक का कितना महान् आदर्श है।

अंग स्पर्श

अब नीचे लिखे मन्त्रों से बाएं हाथ की अंजली में जल लें और दाहिने हाथ की मध्यमा और अनामिका अंगुलियों को जल लगा नीचे दिये अंगों को स्पर्श करें।

१—ओं वाङ्मे आस्येऽस्तु ॥

इस मन्त्र से मुख का०

अर्थ—हे भगवन् ! मुख में रहने वाली वाणी मेरी हो अर्थात् मेरे अधिकार में हो।

२—ओं नसोर्मे प्राणऽस्तु ॥

इन मन्त्रों से नासिका के दोनों छिद्रों का०

अर्थ—हे प्रभो ! नासिका में रहने वाला प्राण मेरे वश में हो।

३—ओं अक्षणोर्मे चक्षुरस्तु ॥

इस मन्त्र से दोनों आंखों का०

अर्थ—हे परमेश्वर ! आँखों में रहने वाली स्थूल और सूक्ष्म ज्योति मेरी हो।

४—ओं कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु ॥

इस मन्त्र से दोनों कानों का०

अर्थ—हे नाथ ! कान में रहने वाली दिव्य श्रवण शक्ति पर मेरा अधिकार हो।

५–ओं बाह्वोर्मे बलमस्तु ।।

इस मन्त्र से भुजाओं का०

अर्थ—हे जगदीश्वर ! भुजाओं में रहने वाले बल पर मेरा अधिकार हो ।

६–ओं ऊर्वोर्मे ओजोऽस्तु ।।

इस मन्त्र से दोनों घुटनों का०

अर्थ–हे सर्वरक्षक भगवन् ! मेरे घुटनों में ओज हो

७–ओं अरिष्टानिमेऽअंगानि तनुस्तन्वा मे सह सन्तु

इस मन्त्र से सारे शरीर पर जल छिड़कना ।

अर्थ—हे ओं ! मेरे शरीर का अंग प्रत्यअंग स्वस्थ और निरोग हो ।

दो प्रकार की क्रियायें

संसार का उपकार करना आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य है। संसार का उपकार वही कर सकता है जिसका शरीर स्वस्थ और बलवान हो, जिस को अपनी इन्द्रियों पर पूरा अधिकार हो और जिसका मन शांत हो। शांति प्रदान करने वाला जल है इस लिए जल से ही तीन आहुतियां अपने मन रूपी कुण्ड में दी जाती हैं ताकि वास्तविक शांति प्राप्त हो–यह पहली क्रिया है

जो केवल अपने लिए है। दूसरी क्रिया में शरीर के अंगों की पड़ताल है और शुभ भावनायुक्त प्रभु से प्रार्थना है कि वे अंग अवश्य याजक के अधिकार में हों ताकि जन सेवा में उनका आवश्यकतानुसार निःसंकोच सदुपयोग कर सकें।

आचमन और अंग स्पर्श के आध्यात्मिक भाव

जल=ज+ल, ज से जन्म, ल से लय अभिप्रेत है। मध्यकालीन अवस्था स्वतः इसके अन्दर निहित है अर्थात् जल जन्म, स्थिति और लय का कारण है। यह तीनों काम परमेश्वर के हैं इसलिए निःसंकोच जल को परमेश्वर का प्रतिनिधि माना जा सकता है। इस विचार के आधार पर अब दोनों क्रियाओं पर दृष्टिपात कीजिए।

१. परमेश्वर अमृत है और उसकी गोदी (उपस्तरण) में हम बैठे हैं।

२. परमेश्वर अमृत है उसकी छत्रछाया में हम बैठे हैं। मां की गोदी और छत्रछाया में बच्चा सुरक्षित है अतः भक्त भी सुरक्षित है। संसार की कोई दुष्ट शक्ति उसको हानि नहीं पहुंचा सकती। इसलिए वेद ने कहा "न रिष्यते त्वावतः सखा"—जिसको तू ने सखित्व में ले लिया वह सुरक्षित है।

अब सांसारिक मातृ-व्यवहार को देखिये। मां बच्चे को गोदी में ले ऊपर अपनी चुन्नी से ढक कर उसे दूध पिलाती है, वह कुछ देती है जो उसके पास है, उसके पास दूध और मीठी वाणी है। दूध से उसके शरीर को बल मिलता है और मीठी वाणी से आनन्द। अतः मंगल-मयी मां अपनी गोदी में लेकर हमें सत्यरूपी दुग्ध पान कराएगी और मीठी वाणी से आत्मा को आनन्द की प्राप्ति होगी। मां तो सत्य स्वरूप है इसलिए भक्त को सत्य ही पान कराएगी और मधुर वेदवाणी से उसकी आत्मा को शांति मिलेगी।

इस सत्य के पान करने अर्थात् आचरण करने से यश रूपी बल मिलेगा। मान बढ़ेगा और सम्पत्तिशाली बनेगा।

इन भावनाओं के साथ किया हुआ आचमन अत्यन्त लाभकारी होता है।

अन्तिम मन्त्र में सत्य, यश, शोभा सम्पत्ति की भावना भरते हुए जल में त्राटक रूप से दृष्टिपात करो और प्रार्थना करो कि भगवन्! दयानन्द जैसा सत्य-वादी मुझे बनाओ और दयानन्द को जल में देखने का यत्न करो। अभ्यास से आपको सचमुच दयादन्द का

आकार जल में भान होगा।

अब रहे अंग स्पर्श मन्त्र

१. सत्य की प्राप्ति हो गई, उसकी प्रकटती कैसे होगी? वाणी से, अतः कहा कि "वाङ्मे आस्येऽस्तु" अर्थात् मेरी वाणी सदा सत्य बोलने वाली हो। धन के लोभ अथवा भय से न बेच दूं, झूठ न बोलूं, क्योंकि मेरा लक्ष्य तो संसार का उपकार करना है। उपकार तब हो सकेगा जब मैं सत्य पर दृढ़ रहूँगा।

२. नासिका में वास करनेवाले श्वास मेरे आधीन हों अर्थात् धर्म पर जब चाहूँ वार दूं।

३. आंखों में रहने वाली ज्योति मेरी हो अर्थात् पक्षपात न करूं।

४. भुजाओं में रहने वाला बल मेरा हो, बदी=बुराई का लय=नाश करने वाला हो।

५. कानों में बसने वाली श्रवण शक्ति मेरी हो अर्थात् मैं केवल वेद की मधुर वीणा सुनूं अथवा दीनों की पुकार। भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाः सिनेमा आदि के पातक गीतों से मेरी रक्षा करो।

६. घुटनों में रहने वाला ओज मेरा हो अर्थात् ब्रह्मचर्य का पालन करता हुआ ओजस्वी जीवन बिताऊं।

७. मेरे शरीर के समस्त अंग प्रत्यंग हृष्ट-पुष्ट हों ताकि संसार के उपकार करने में कोई बाधा उपस्थित न हो।

तीन आहुति क्यों ?

यह आहुति आचमन रूप में देता है। आचमन तीन बार किया जाता है। कारण यज्ञ में जब तक मनुष्य स्वस्थ शरीर, एकाग्रमन और पुलकित आत्मा के साथ यज्ञ न करे, यज्ञ सफल नहीं। यज्ञ का सम्बन्ध तीनों लोकों के साथ है :—भूः भूवः और स्वः से। भूः पृथिवी, भुवः अंतरिक्ष और स्वः द्यौलोक है पृथिवी से आत्मिक प्रसन्नता प्राप्त होती है। मनुष्य को इन तीनों चीजों की जरूरत है। भूः शरीर लोक है, भुवः मानस लोक और स्वः आत्मलोक है। इसलिए तीन आमचन किये जाते हैं।

नोट :—जहां जहां जल स्पर्श करना है, वहां वहां उस अंग के गड्ढे को दबाकर स्पर्श करें, जैसे ओष्ठों के दोनों ओर, नासिका के दोनों गड्ढों के बाहर, कानों की कनपटी के पास इत्यादि।

अग्न्याधान

ओ३म् भूर्भुवः स्वः ॥ इन तीन शब्दों में जीवन का लक्ष्य समाया है ।

भावार्थ–हमारे जीवन का लक्ष्य है भूर्भुवः स्वः अर्थात्–

१–पृथ्वी, अंतरिक्ष और द्यौ लोक का ज्ञान प्राप्त करना। अंधकार से प्रकाश की ओर जाना । उन लोकों के वासियों से सम्पर्क रखना–यही सच्चा यज्ञ है ।

२–संसार के प्राणियों को प्राण दान देना, दुःख दूर करना और सुख पहुंचाना–यही सच्ची मानवता है ।

३–प्राणाधार दुःखविनाशक और सुखस्वरूप प्रभु की भक्ति करना–यही जीवन की सफलता है ।

४–प्रकृति, जीवात्मा और परमात्मा का साक्षात् करना यही जीवन का अन्तिम और मुख्य उद्देश्य है ।

५–प्राण, अपान, व्यान को वश में करना–इसमें जीवन का वास्तविक रहस्य और आनन्द है ।

६-शारीरिक मानसिक और आत्मिक उन्नति करना इसके बिना कोई भी कार्य सिद्ध नहीं हो सकता । इसलिए इन्हीं तथा इन जैसे अनेकों गुह्य भावों को सम्मुख रखकर यज्ञ प्रारम्भ किया जाता है ।

अग्नि लाना या दीपक जलाना

इस मन्त्र का उच्चारण करके ब्राह्मण, क्षत्रिय वा वैश्य के घर से * अग्नि ला अथवा घृत का दीपक जला उससे कपूर में अथवा रूई की बत्ती बना और उसमें लगा, किसी एक पात्र में धर उसमें छोटी-छोटी लकड़ी लगा के यजमान या पुरोहित उस पात्र को दोनों हाथों में उठा, यदि गर्म हो तो चिमटे से पकड़कर अगले मन्त्र से आधान करे।

अग्नि धरना

वह यह मन्त्र है :–

ओ३म् भूर्भुवः स्वर्द्यौरिव,
भूम्ना पृथिवीव वरिम्णा।
तस्यास्ते पृथिवि देवयजनि,
पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यायादधे ॥
यजु० ३-५ ॥

---

* जो नित्य कर्म करते हों और जिनकी अखण्ड अग्नि हो। (सम्पादक)

भावार्थ—इस मन्त्र में पहले "भुभुर्वः स्वः" को पुनः दोहराया है और कहा है कि हे सर्व रक्षक प्रभो ! हे प्राणदाता, दुःखविनाशक, आनन्दस्वरूप भगवन् हमारा प्रकाश सूर्य समान चमकने वाला, हमारा विस्तार पृथिवी की तरह फैला हुआ हो। इसलिए इस पृथिवी की पीठ पर जहां देवता लोग यज्ञ करते हैं, हम खाने वाले अन्न अर्थात् भोग्य पदार्थों की वृद्धि के लिए अन्न खानेवाली अग्नि का आधान करते हैं।

इस मन्त्र से वेदी के बीच अग्नि को धर उस पर छोटे-छोटे काष्ठ और थोड़ा कपूर अथवा घृत डाल अग्नि को व्यजन (पंखा) से प्रदीप्त करें और यह मन्त्र पढ़ें :—

प्रदीपन मन्त्र

ओं उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि,
त्वमिष्टापूर्ते स ँ सृजेथामयं च।
अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन्,
विश्वे देवा यजमानश्च सीदत॥

यजु० १५-५४॥

भावार्थ—हे अग्ने ! तू सचेत हो और खूब जाग ! तू और यह यजमान इष्ट परमेश्वर की प्राप्ति और

मुक्ति सुख के देने वाली और पूर्त्त (कमियों को पूरा) करने वाली जैसे कूप, तड़ाग, विद्यालय आदि का बनवाना, अप्राप्त को प्राप्त करने वाली को मिलकर भली प्रकार सिद्ध करो और इस यज्ञ वेदी पर यजमान और सब देव (विद्वान्) अपने अधिकार के अनुसार बैठें।

जब अग्नि समिधाओं में प्रविष्ट होने लगे तब चन्दन की अथवा पलाशादि की तीन लकड़ी आठ आठ अंगुल की घृत में डुबो, उन में से नीचे लिखे एक मंत्र से एक एक समिधा को अग्नि में चढ़ावें (अर्थात् श्रद्धाभाव से अग्नि में धरें।)

नोट– १. तीन समिधायें जीवन के उपरोक्त लक्ष्य को याद दिलाने के लिये हैं।
२. समिधा साफ सुथरी हों, अपने नाम को सार्थक करने वाली हों।
३. आठ आठ अंगुल की हों, छोटी बड़ी होना आज्ञा का उलंघन करना है।
४. आठ के शब्द से योग के आठ अंग याद दिलाना अभिप्रेत है। यज्ञ और योग का सम्बन्ध है। यज्ञ से योग की सी सिद्धि प्राप्त होती है।

समिधादान

वे मन्त्र ये हैं :—

पहली समिधा

१– ओं अयन्त इध्म आत्मा जातवेद-
स्तेनेध्यस्व वर्धस्व चेद्ध वर्द्धय चास्मान्,
प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा।
इदमग्नये जातवेदसे, इदं न मम ॥

आश्व० १-१०-१२

भावार्थ—हे जातवेदः अग्नि—सब पदार्थों में विद्यमान अथवा हे जातवेद—समस्त संसार के ज्ञाता भगवन्! यह काष्ठ (रूप मेरी आत्मा) तेरी आत्मा है, तू इससे चमक, बढ़ और हमें चमका और बढ़ा, (किस से) प्रजा संतान नौकर चाकर आदि से), पशुओं, ब्रह्मवर्चस (ब्रह्मतेज) और अन्न से सम्यक् रीति से चमका (कैसी सुहावनी यह भावना अथवा आहुति है) यह जातवेदः अग्नि के लिए है, मेरे लिए नहीं।

इस मन्त्र से पहली समिधा चढ़ावें।

दूसरी समिधा

२– ओं समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम्।
आस्मिन्हव्या जुहोतन स्वाहा।
इदमग्नये, इदं न मम ॥ य० ३–१

इस से और

२– ओं सुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्रं जुहोतन ।
अग्नये जातवेदसे स्वाहा ।
इदमग्नये जातवेदसे, इदं न मम ॥ य० ३-२ ॥

इस मन्त्र से अर्थात् दोनों मन्त्रों से दूसरी समिधा चढ़ावें ।

भावार्थ—अग्नि को अतिथि जानकर समिधा और घृत से सेवा करो और उस में हवि छोड़ो—कैसा सुन्दर यह त्याग है ॥२॥

अति प्रकाशित और प्रचण्ड करने के लिए कड़कता घी (ठण्डा और घेर घी नहीं) डालो जात-वेदः अग्नि के लिए यह आहुति है, मेरे लिए नहीं ।

नोट—दो मन्त्रों से एक आहुति इस लिए है कि जिस भाव को पहले मन्त्र (नं० १) में बतलाया है, उस का अधिक विस्तार दूसरे मन्त्र (नं० २) में किया है ।

तीसरी समिधा)

३– ओं तन्त्वा समिद्भिरङ्गिरो घृतेन वर्द्धयामसि ।
बृहच्छोचा यविष्ठय स्वाहा ॥
इदमग्नयेऽङ्गिरसे, इदं न मम ॥ यजु० ३-३ ॥

इस मन्त्र से तीसरी समिधा की आहुति देवें ।

भावार्थ—हे प्यारे ! तू अंगों का रस है, उस तुझ को हम समिधा और घृत से (समर्पण और श्रद्धा से) बढ़ाते हैं, बहुत पवित्र कारक और परमाणुओं को छिन्न भिन्न करने में अति बलवान है।

अन्ति चित्सन्तमह यज्ञं मर्त्तस्य रिपोः। नोप वेषि जात वेदः॥ ऋ० ८-११-४

भा०—हे (जात वेदः) समस्त पदार्थों के ज्ञापक भगवान् ! (रिपोः मर्त्तस्य) पापी पुरुष अर्थात् शत्रु भावना वाले मनुष्य के यज्ञ पूजा, दान को तू स्वीकार नहीं करता।

तीन समिधाओं का दूसरा भाव

पहली में आत्मसमर्पण, दूसरी में मन समर्पण और तीसरी में तन समर्पण का भी निहित है।

सफल यज्ञ के चिन्ह

१— अग्नि निरन्तर प्रचण्ड रहे, धूआं न करे।
२— सोमरस के पड़ने से भिन्न भिन्न रंग उत्पन्न करे।
३— यजमान उदार हो कृपणता से काम न ले।
४— प्रत्येक कार्य में यजमान प्रसन्नवदन रहे।
५— प्रत्येक कार्य-क्रम को ध्यान से देखें और वेदमन्

तथा उपदेश को ध्यानपूर्वक सुने।

६– यज्ञ में लोकमर्यादा के पालन, न पालन की चिन्ता से उपराम रहे। यह काम पहले से किसी विश्वस्त समझदार पुरुष के जिम्मे लगा दे।

७– यज्ञ में अव्यावहारिक बातें अथवा हल्ला गुल्ला न हो

८– यज्ञ में यदि किसी के प्रति अनिष्ट चिन्तन उपजे तो आहुति न दे। दीर्घ श्वास लेकर कुवासना को बाहर फैंक दे और तीन बार आचमन कर गायत्री का स्मरण एक बार करे फिर आहुति दे। जिसके प्रति अनिष्ट चिन्तन हुआ यदि वह उपस्थित हो तो क्षमा माँग प्रायश्चित्त करे।

९– यज्ञ में किसी भी समय वर्षा के छींटे अथवा बूंदें पड़ जायें।

१०– चन्दुआ जल जाय।

११– कोई व्रती, याजक या दर्शक श्रोता किसी दुर्व्यसन का प्रतिज्ञा रूप में सदा के लिये परित्याग कर दें।

१२– व्रती आदि नित्य कर्म तथा जाप की प्रतिज्ञा करें।

१३– श्रद्धा यज्ञ का बीज है, "श्रद्धया दीयते हविः" श्रद्धा से हवि दी जाए।

१४– यज्ञ में तप और त्याग पूरा हो। त्याग करें कृपणता, कठोरता का जैसे काष्ठ जलकर करता है। और त्याग करें अहंकार, स्वार्थ और आसक्ति का। जैसे भिन्न-२ पदार्थ कूटे जाकर सम कर दिए और घृत ने स्निग्धता=आसक्ति को अग्नि में अर्पण कर दिया अतः अन्तःकरण की शुद्धि तब होगी जब कठोरता अहंकार आसक्ति का परित्याग किया जाए और प्रभु दर्शन की योग्यता प्राप्त होती है।

यज्ञ की असफलता के कारण (१) कृपणता, (२) घृत, सामग्री का शुद्ध न होना, सस्ती मिलावटी होना (३) ईर्ष्या, द्वेष का आ जाना। कृपणता बाधक ईर्ष्या घातक है (४) आहुति देते समय किसी विपरीत काम का विचार आ जाना।

सफल यज्ञ कब नीरस हो जाता है

१– यजमान को रात्रि को स्वप्नदोष हो जाय और
२– यज्ञ समय पर आरम्भ न हो।

३- यजमान का मानसिक संतुलन न रहे।

४- यज्ञ के समय व्रती आदि विनोद करें अथवा यज्ञ का अपमान करें।

५- ब्रह्मा की आज्ञाओं का उल्लंघन किया जाए।

६- यज्ञ समाप्ति से पूर्व व्रती स्थान छोड़ दें।

७- स्त्री का मासिक अवस्था में यज्ञ के सम्मुख आजाना

८- किसी व्रती का दुराग्रह अथवा रोष करना।

इत्यादि अवस्थाओं में यज्ञ नीरस हो जाता है अतः जब तक शांति पाठ न हो जाए, यजमान और व्रतियों को तथा ऋत्विजों को अपना आसन नहीं त्यागना चाहिए।

अब याद रखने की बातें

१- यज्ञ का सारा सामान पहले से अपने पास रख लेना चाहिए।

२- आहुति की मात्रा ६ माशे है, इस से कम नहीं देनी चाहिए।

३- चमचा भर भर के आहुति दें, अधूरे चमचे से आहुति से अभीष्ट फल नहीं मिलता।

४- घी को पहले गर्म कर छान लिया जावे और उसमें यथाशक्ति केशर और कस्तूरी भी मिला दी जावे।

५- यदि छः माशे घी की आहुति की शक्ति नहीं हो तो जितने प्रमाण का चमचा प्रयोग करें वही भर कर दें।

६- समिधा सूखी, स्वच्छ, पवित्र और आठ अंगुल की हों, क्योंकि विधि सहित यज्ञ से सफलता प्राप्त होती है: अन्यथा नहीं।

पांच आहुति घी की

अब नीचे लिखे मन्त्र से पांच आहुति घी की दें। जिस जिस शब्द पर अङ्क दिया है क्रमशः उसी शब्द पर एक-एक वार जोर देकर उसका उच्चारण करें इससे मंत्र की गिनती की जरूरत न रहेगी और गलती भी न हो सकेगी। उस शब्द पर जोर न दें तो कभी चार, कभी छः आहुतियां भी याजक दे बैठता है।

ओं अयं त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्द्धस्व चेद्ध

१ २ ३ ४ ५

वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा ॥ इदमग्नये जातवेदसे, इदं न मम ॥

जलसिञ्चन

तत्पश्चात् अंजली में जल ले के पूर्व दिशा आदि में चारों ओर सिंचन करें, वह इस प्रकार है—

पूर्व दिशा में—

ओं अदितेऽनुमन्यस्व ॥१॥

भावार्थ—हे अदिति परमात्मन् तथा पुरोहित ! हमारे ऊपर दयादृष्टि रखें।

दक्षिण हाथ में अंजली और बाएं हाथ में जल का लोटा लेकर कुण्ड के दक्षिण पूर्व कोने पर उत्तराभिमुख हो कर अंजली में जल भर लें और फिर अंजली की नोक पूर्व दिशा में रख कर लोटे से अंजली में और अंजली से नाली में जल सिंचन करें यहां तक कि जल नाली के पूर्व भाग में नाली के अन्त तक जा पहुँचे। जल डालते समय मन्त्र पढ़ें। यह पूर्व दिशा का मन्त्र है

पश्चिम में—

अब अंजली भरी हुई यजमान पत्नी को दे दें और वह दक्षिण पश्चिम कोने में उत्तराभिमुख खड़ी हो कर उसी प्रकार दक्षिण हाथ में अंजली और वाम में लोटा लेकर अंजली से पश्चिम नाली में निम्न मंत्र से इतना जल सींचें कि वह नाली के अंत तक जा पहुँचे। यह मंत्र है—

ओं अनुमतेऽनुमन्यस्व ॥२॥

भावार्थ—हे मेरे पीछे चलने वाले (स्त्री, पुत्र, परिवार, नौकर, चाकर आदि) मेरे अनुकूल हों।

उत्तर में—

अब यजमान वही अंजली जल से भरी हुई लेकर पूर्वविधि अनुसार उत्तर बाजू की नाली में पूर्वाभिमुख खड़ा होकर जल दे कि वह नाली के अन्त तक जा पहुँचे मन्त्र यह है— ओं सरस्वत्यनुमन्यस्व ॥३॥

भावार्थ—हे विद्वानों ! आप हमारे विचारों से सहमत हों।

दक्षिण में—

अब यजमान-पत्नी जल भरी अंजली ले कर उपरोक्त विधि अनुसार निम्न मंत्र से अंजली में क्रमशः दक्षिण नाली में जल डालती जाए। मंत्र उच्चारण समाप्त हो जाए और जल सिंचनभी अर्थात् दोनों अंजली और लोटा खाली हो जाए। याद रहे कि यह जल कुण्ड के चारों ओर की नालियों में फिर जाये। यदि नाली न हो तो कुण्ड के चारों ओर भूमि पर जल सिंचन किया जावे, पर किया विधि अनुसार जाए।

सावधान

यज्ञ का लक्ष्य अन्धकार से प्रकाश की ओर है

जाता है अतः हमारी सब क्रियायें तम से प्रकाश की ओर ले जाने वाली हों। दक्षिण और पश्चिम तम की और पूर्व और उत्तर प्रकाश की दिशाएं हैं। अस्तु। अब चौथा मन्त्र यह है :—

ओं देव सवितः प्रसुव यज्ञं,
प्रसुव यज्ञपतिं भगाय।
दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतं नः,
पुनातु वाचस्पतिर्वाचं नः नः स्वदतु ॥

यजु० ३०-१

भावार्थ—हे सवितः देव ! यज्ञ को उत्पन्न करो, यज्ञपति यज्ञमान को उत्पन्न करो ! क्यों (भगाय) भग के लिए (यज्ञ का भग समिधा घृत सामग्री ऋत्विज वेद धरती आदि हैं) यह यज्ञ दिव्य ज्योति के देने वाला, पृथिवी को धारश करने वाला और बुद्धि को पवित्र करने वाला है। हमारी बुद्धियों को पवित्र करो और हे स्वामी ! हमारी वाणी को सत्यवक्ता और मधुरभाषी बनाओ।

रहस्य की बात

यज्ञ कुण्ड की नाली के चारों ओर जल सिञ्चन के बाद जल-पात्र सारा खाली हो जाता है। हमारा यज्ञ शुरू हुआ आचमन से और वह आहुति दी गई। मन रूपी कुण्ड में मन को शांत व सावधान करने के लिए और यह क्रम नाली के चारों ओर जल देकर समाप्त किया गया in right earnest (वास्तविक रूप से) अब आहुति जल की नहीं जल तो बीज है सब सम्पत्ति को और हमारी सम्पत्ति चारों ओर बिखर गई। सर्वत्र शान्ति करा दी। जल पात्र रिक्त हो गया योजक को क्या मिला पात्र खाली नहीं हो गया, परम करूणामय पिता ने पात्र को वायु = (वा आयु) के साथ भर दिया हमें तो ध्यान ही न रहा जल के बदले में उसने प्राण दिये। प्राण के अस्तित्व की पहचान तो अग्नि से है यजमान जी रक झट पिता की करूणा को ताड़ गया और जेल के स्थान पर घृत की आहुति (अरनय स्वाहा मन्त्र से) दी धन्यवाद किया। अग्नि ने बढ़ाया सोम=शान्ति प्रदान की, शान्ति से बल (इन्द्र) आया। बल की परिणानं सन्तान मिली।

अब आगे के चार मन्त्रों में उन्हीं भावों को और स्पष्ट कर भगवान की पवित्र दात भगवान के चरणों में समर्पित कर दी, अर्थात "भूरग्नंय प्राणाय स्वाहा"— ओ (भू) प्राण स्वरूप, प्राणस्वरूप रूप, प्राणयते। तूने अग्नि के द्वारा मुझे प्राण प्रदान किये और फिर पृथ्वी-लोक पर—धन्यवाद ! यह आपकी भेंट करता हूं।

इसी प्रकार भुवीयवे स्वाहा। वायु का स्थान आकाश है। अग्नि की सहायता के लिए देव ! आपने वायु को उत्पन्न किया, धन्यवाद।

"ओं स्वरादित्याय स्वाहा" —स्वः सुख प्रदान करने के निमिका तूने सूर्य देवता को द्यौलोक से आज्ञा दी कि अग्नि और वायु को प्रकाश युक्त करो—प्रकाश ही तो सुख का मूल है। क्या ही सुन्दर रहस्य इन क्रियाओं में छिपा हुआ है। याज।& _. श्रद्धा और विश्वास पूर्वक किया यज्ञ सब सुख की खान है। अतः सावधान होकर यज्ञ में उपस्थित हो भाग ले। इति

आज्य आहुति

अब घृत पात्र में से स्रुवा को भर अंगूठा मध्यमा

अनामिका से स्रुवा को पकड़ के—
ओं अग्नये स्वाहा ॥ इदमग्नये, इदं न मम ॥

अर्थ—अग्निस्वरूप परमेश्वर के लिए यह आहुति है। यह मेरी नहीं है।

नोट—इस मन्त्र से वेदी के उत्तरी भाग में आहुति दें क्योंकि उत्तर दिशा अग्नि की दिशा है, आत्मा, सूर्य, राजा, पुरुष भी अग्नि हैं यह उच्चतर स्थिति के स्वामी हैं। इसलिए उत्तर में यह आहुति दी जानी चाहिए।
२- ओं सोमाय स्वाहा ॥ इदं सोमाय इदं न मम ॥

अर्थ—सोमस्वरूप परमेश्वर के लिए यह आहुति इस मन्त्र से वेदी के दक्षिण-भाग में प्रज्वलित समिधा पर आहुति देनी चाहिए।

सोम जल है, चन्द्रमा है, राजा का मन्त्री है, गृहस्थ स्त्री है। यह दक्षिण में रहने तथा बैठने वाले देव हैं, दक्षिण दिशा जल की है।
३- ओं प्रजापतये स्वाहा ॥ इदं प्रजापतये, इदन्न मम ॥

अर्थ—यह प्रजापति परमेश्वर के लिए आहुति है, यह मेरी नहीं है।
४- ओं इन्द्राय स्वाहा ॥ इदं इन्द्राय, इदन्न मम ॥

यह सर्वशक्ति सम्पन्न परमेश्वर के लिए आहुति है, मेरे लिए नहीं।

नोट—प्रजापति और इन्द्र कुछ-कुछ समानार्थक हैं। राजा, गृहस्थी, ईश्वर, सूर्य प्रजापति हैं। गृहस्थी कमा के लाता है, सन्तान का पालन करता है और गृह कोष में डालता है। राजा प्रजा का पालन करता है और प्रजा कर रूप में उसके कोष को भरती है और राजा राष्ट्रीय केन्द्र स्थानी है इस लिए यह दो आहुतियां मध्य में दी जाती हैं।

गृहस्थी सन्तान उत्पन्न करके बलवान् इन्द्र बनता है सन्तान के लिए स्त्री के गर्भ में वीर्याधान करता है इस लिए भी प्रतीक रूप से यह दो आहुतियां मध्य में दी जाती हैं।

ओं भूरग्नये स्वाहा ॥ इदमग्नये इदं न मम

अर्थ—प्राणाधार प्रकाश स्वरूप परमात्मा के लिये आहुति है, यह सुन्दर कथन है। यह मेरे लिए नहीं।

ओं भूवर्वायिवे स्वाहा ॥ इदं वायवे इदं न मम ॥

अर्थ—दुःखनाशक प्रभु के लिए सुन्दर आहुति है। यह मेरी नहीं।

ओं स्वरादित्याय स्वाहा ॥ इदमादित्याय इदं न मम ॥

अर्थ—सुखस्वरूप प्रकाश के पुञ्ज भगवान् के लिये आहुति है। यह मेरी नहीं।

ओं भुर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा।
इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः इदन्नः मम।

अर्थ—पूर्वोक्त सर्वगुणसम्पन्नों के लिए यह आहुति है (स्वाहा) सुहुत हो। यह मेरी नहीं।

स्विष्टकृत् आहुति

इसके बाद स्विष्टकृत् आहुति* घी, भात अथवा मिष्टान्न अथवा फल की दें, उसका यह मन्त्र है :—

ओं यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं, यद्वा न्यूनमिहाकरम्।
अग्निष्टत्स्विष्टकृद्विद्यात् सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे।
अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां
कामानां समर्धयित्रे सर्वान्नः कामान्त्समर्द्धय स्वाहा॥
इदमग्नये स्विष्टकृते, इदं न मम॥

---

* नोट—स्विष्टकृत् आहुति के सम्बन्ध में कई लोग एतराज करते हैं कि यह आहुति केवल भात से दी जाती है। भात से वह केवल चावल का भात ही लेते हैं। हमारी सम्मति में भात=भा+अत्त जो खाने में रुचिकर हो, अतः मीठे पदार्थ, मेवा, फल आदि की आहुति देने में कोई आपत्ति नहीं।

अर्थ–(अस्य कर्मणः) इस कर्म के सम्बन्ध में (यत्) जो (अति अरीरिचं) विधि से अधिक किया गया ही (यद्वा) अथवा (इह न्यूनं अकरम्) इसमें कुछ न्यूनता रह गई हो (सुइष्टकृत अग्निः) शुभ इच्छाओं को पूर्ण करने वाला प्रभु जो (सर्वं सु इष्टं विद्यात्) मेरी सब शुभ इच्छाओं को जानता है(तत्) उस कर्म को मेरे लिए (सुहुतम् करोतु) सफल कर देवे। (सु-इष्ट-कृते) शुभ इच्छाओं को पूर्ण करने वाले (सुहुतहुते) आहुतियों यज्ञों को सुहुत सफल करने वाले और(सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां) सब प्रायश्चित आहुतियों को (कामानाम्) और सब कामनाओं को सफल करने वाले (अग्नये स्वाहा) प्रभु के लिए मैं यह आहुति दे रहा हूं। हे प्रभु देव! आप हमारी इच्छाओं को पूर्ण कीजिए। यह स्विष्टकृत आहुति परमेश्वर के लिए है, मेरी नहीं।

प्राजापत्याहुति

इसके बाद एक प्राजापत्याहुति मौन होकर घृत से दे–यह आहुति आदरार्थ है इसलिए मौन होकर दी जाती है।

ओं प्रजापतये स्वाहा ।
इदं प्रजापतये इदं न मम ।।

अर्थ ऊपर आ चुका है । इसके पश्चात्—

चार आज्याहुति–घी की देवें ।

ओं भूर्भुवः स्वः । अग्न आयूंषि पवस आसुवोर्जमिषं च नः आरे बाधस्व दुच्छुनां स्वाहा । इदमग्नये पवमानाय इदं न मम ।१।

अर्थ–हे प्राणाधार, दुःखविनाशक, सुखस्वरूप प्रभो ! आप हमारी आयुओं को पवित्र करो, ऐश्वर्य तथा बल प्रदान करो और हमारे अवगुणों को दूर करो। यह परम पुनीत अग्नि देव के लिए है, मेरी नहीं

ओं भूर्भुवः स्व, । अग्निर्ऋषिः पवमानः पाँचजन्यः पुरोहितः । तमीमहे महागयं स्वाहा । इदमग्नये पवमानाय, इदन्न मम ।२।

भावार्थ—परमेश्वर प्राणप्रद दुःखहर्ता, सुखदाता है । अग्नि के समान प्रकाशमान, मन्त्रद्रष्टा, सबको पवित्र करने वाला, सबका रक्षक पाँचों ज्ञानेन्द्रियों को शुभ मार्ग पर चलानें वाला पुरोहित है, उस महाधन के देनें वाले प्रभु को हम प्राप्त हों । यह पवमान अग्नि के लिए आहुति है । यह मेरी नहीं ।

ओं भूर्भुवः स्वः। अग्ने पवस्व स्वपा अस्मे वर्चः सुवीर्यम्। दधद्रयिं मयि पोषं स्वाहा॥ इदमग्नये पवनमानाय इदन्न मम।२।

ऋ० ९-६६-१९ से २१॥

भावार्थ—हे सुकर्मा! हमें तेल और उत्तम वीर्य प्रदान कर और तू मेरे में धन, पुत्र आदि एवं पशु समृद्धि और शरीर की पुष्टि को धारण करा। यह पवमान अग्नि की भेंट है, मेरी नहीं।

ओं भूर्भुवः स्वः। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परिता बभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणां स्वाहा। इदं प्रजापतये इदन्न मम।

ऋ० १०-१२१-१०

भावार्थ—हे प्रजाओं के पालक! इन उन अर्थात पास और दूर के भूत और वर्तमान के समस्त पदार्थों का अध्यक्ष आपके बिना कोई नहीं। आप सर्वोपरि हो। जिस-जिस पदार्थ की कामना वाले होकर हम लोग आपका यजन और पूजन करें, वह कामना हमारी सिद्ध हो। यह प्रजापति परमात्मा के लिए है, मेरो नहीं।

अष्टाज्याहुति

सब मंगल कार्यों के लिए अष्टाज्याहुति' निम्न मन्त्रों से दें।

ओं त्वं नो अग्ने वरुणस्य विद्वान्,
देवस्य हेडोऽवयासिसीष्ठाः।
यजिष्ठौ वह्नितमः शोशुचानो,
विश्वा द्वोषांसि प्रमुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा।
इदमग्निवरुणाभ्याम्, इदन्न मम ॥१॥

भावार्थ—हे प्रकाशस्वरूप प्रभो ! आप हमको विद्वानों के अनादर से दूर रहने की प्रेरणा कीजिए। आप पूजनीय या अनन्त प्रकाशमान् हैं, ऐसी कृपा करो कि हम सब से द्वेष दूर हो। यह आहुति अग्नि के लिए है मेरी नहीं ॥१॥

ओं स त्वं नो अग्नेऽवमो भवोती,
नेदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ।
अव यक्ष्व नो वरुणं रराणो,
वीहि मृडीकं सुहवो न एधि स्वाहा।
इदमग्नीवरुणाभ्यां, इदन्न मम ॥२॥
ऋ० ४-१-४

भावार्थ—हे सर्वरक्षक सब सुखों के दाता आ

हमारे रक्षक बनिये। प्रातः उषा बेला में हमारे समीप विराजिये और हमें सुख प्रदान कीजिए। यह अग्नि तथा वरुण के लिए है, मेरी नहीं ॥२॥

ओं इमं मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडय।
त्वामवस्युराचके स्वाहा। इदं वरुणाय इदं न मम ॥३॥

ऋ० १-२५-१६

भावार्थ—हे वरुणदेव आप मेरी पुकार को सुनो और मुझे सुखी करो मैं आपसे रक्षा चाहता हुआ आप को पुकार रहा हूँ ॥३॥ यह वरुण के लिए है मेरी नहीं।

ओं तत्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानः
तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः।
अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुशंस,
मा न आयुः प्रमोषीः स्वाहा।
इदं वरुणाय इदन्न मम ॥४॥

ऋ० १-२४-११

भावार्थ—मैं वेद द्वारा स्तुति करता हुआ ब्रह्म को प्राप्त करता हूं। उसी ब्रह्म को वा सुख को यजमान यज्ञ आदि कर्मों के द्वारा प्राप्त करना चाहता है। हे वरुणदेव ! आप मुझको अपनी गोद प्रदान करें। हे

प्रशंसनीय ! आप हमारी आयु का नाश न करें ॥४॥ ग्र
आहुति वरुण के लिए है मेरी नहीं ।

ओं ये ते शतं वरुण ये सहस्रं,
यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः ।
तेभिर्नो अद्य सवितोत विष्णुः,
विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्का स्वाहा ।
इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे
विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यः,
इदन्न मम ॥५॥

हे भगवन् ! आपके सैंकड़ों हजारों यज्ञियपाश अर्थात् बन्धन के ढ़ंग बिछे हुए हैं। उन सब से हमें आप अथवा सब विद्वान् गण छुड़ावें। अर्थात् हम ऐसा कोई निन्दनीय कार्य न करें जिससे हम दण्ड के भागी बनें ॥५॥ यह समस्त देवों के लिए है, मेरी नहीं।

ओं अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्वमया असि अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेही भेषजँ स्वाहा। इदमग्नये अयसे इदन्न मम ॥६॥

भावार्थ–भगवन् ! आप सर्वत्र विद्यमान हैं श्रेष्ठों के पालक हैं। आप हमारे यज्ञ को अन्तिम ल

तक पहुंचाने वाले हैं। आप हमें उचित औषधि दीजिए। यह अग्नि के लिए है, मेरी नहीं।

ओ उदुत्तमै वरुण पाशमस्मद-
वाधमं वि मध्यमं श्रथाय। अथा
वयमादित्य व्रते तवानागसो,
अदितेय स्याम स्वाहा ।
इदं वरुणायऽऽदित्यायादितये च,
इदन्न मम ॥७॥ ऋ० १-२४-१५

हे वरुणदेव ! आप हमारे उत्तम तथा अधम बन्धनों को दूर कीजिए। मध्यम बन्धनों को भी शिथिल कीजिए। ताकि हम स्वयं व्रत पर चलें और आपकी कृपा से पाप रहित हों। अर्थात् काम, क्रोध, लोभ से हमें बचाइये। यह तीनों नरक के द्वार हैं। ॥७॥ यह वरुण तथा आदित्य के लिए है। मेरी नहीं।

ओं भवतं नः समनसौ सचेतसावरेपसौ
मा यज्ञ ँ हि ँ सिष्टं मा यज्ञपतिं,
जातवेदसौ शिवौ भवतमद्य नः स्वाहा,
इदं जातवेदोभ्याम्, इदन्न मम ॥८॥ यजु० ५-३

भावार्थ-हे समान मन, हे समान विज्ञान वाले पाप रहित अध्येता वा अध्यापक ! आप यज्ञ तथा यज्ञ

पति को पीड़ा मत पहुँचाओ, किन्तु हमारे लिए मंग
कारक तथा विद्या प्रचारक बनो ॥८॥ यह जात वे
के लिए है, मेरी नहीं।

प्रातःकाल की आहुति के मन्त्र

१—ओं सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा ॥१॥

अर्थ-सर्वव्यापक, सर्वप्रकाशक प्रकाशकों,
प्रकाशक, आत्माओं की आत्मा उस जगत् प्रकाशक
प्रभु की प्रसन्नता के लिए यह आहुति देता हूँ।

अथवा-भक्त कामना करता है कि भगवन्
संसार में कोई ज्योति है तो वह सूर्य की है और ज
ज्योती है वहां सूर्य है, अतः मुझे सूर्य की सी ज्यो
प्रदान कर ।

२—ओं सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ॥२॥

अर्थ -सूर्य विज्ञान स्वरूप प्रभु (वर्चः) तेज के
वाला है, (वर्चः ज्योतीः) वह तेज ब्रह्म ज्ञानप्रकाश
साधन है, (स्वाहा) यह बात शत्प्रतिशत सत्य है।

३—ओं ज्योतीः सूर्यः सूर्यो ज्योतीः स्वाहा ॥३॥

अर्थ-वह ज्योतीस्वरूप प्रभु सूर्य का भी सूर्य है,
उसी ज्योतीस्वरूप की प्राप्ति के लिए यह आहुति है।

४—ओं सजूर्देवेन सवित्रा सजूरुषसेन्द्रवत्या ।

जुषाणः सूर्यो वेतु स्वाहा ।

अर्थ—(देवेन सवित्रा सजुः) अपने दिव्य प्रकाश और प्रेरणा शक्ति के साथ (उषसा इन्द्रवत्या) अति चमकीली रंगली उषा प्रभा के (सजूः) साथ (सूर्यः जुषाणः वेतु) सेवित सूर्य नारायण इस आहुति को प्राप्त हो। इस प्रकार यह आहुति सुहुत हो।

इसके तीन परिणाम निकलते हैं-

(१) यज्ञ सूर्योदव से पूर्व प्रारम्भ करके उदय होने के पश्चात् समाप्त करें।

(२) यज्ञ में पत्नी सहित बैठना तथा जाना चाहिए जैसे सूर्य अपनी रानी उषा के साथ आता है।

(३) स्त्री पुरुष के आगे-आगे चले ताकि उस स्त्री का मान रक्षा हो सके।

५—ओं भूरग्नये प्राणाय स्वाहा। इंदमग्नयेप्रा णाय इदन्न मम ॥

अर्थ-समस्त संसार के प्राण भौतिक अग्नि को अनुकूलता के लिये तथा प्राणवायु की शुद्धि के लिये यह आहुति है। यह मेरे लिए नहीं।

६—ओं भुवर्वायवेऽपानाय स्वाहा।

इदं वायवेऽपानाय इदन्न मम ॥

अर्थ-दुःखविनाशक की प्रसन्नता तथा समस्त संसार को जीवन प्रदान करने वाली वायु की पवित्रता और अपान वायु की शुद्धि के लिए सुन्दर आहुति है। यह मेरे लिए नहीं।

७—ओं स्वरादित्याय व्यानाय स्वाहा।

इदमादित्याय व्यानाय इदन्न मम !!

अर्थ-सुखस्वरूप, परमात्मा की प्रसन्नता के लिये तथा सूर्य की किरणों की अनुकूलता और ब्यान वायु की शुद्धि के लिए यह आहुति है। यह मेरे लिए नहीं।

८—ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः स्वाहा॥

इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापान-व्यानेभ्यः, इदं न मम।

अर्थ-समस्त संसार के जीवन दाता, दुखहर्ता सुखदाता परमेश्वर की प्रसन्नता, अग्नि, वायु और सूर्य की किरणों की अनुकूलता तथा प्राण अपान और व्यान की शुद्धि के लिए यह आहुति है। यह मेरे लिए नहीं।

९—ओं आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरों स्वाहा॥

अर्थ-जल समान शान्तिदायक, प्रकाशस्वरूप, आनन्द रस के देने वाला, मुक्ति प्रदाता, सबसे महान्, प्राणाधार, दुःखविनाशक, सुखस्वरूप, सर्वरक्षक परमेश्वर की प्रसन्नता के लिए यह आहुति है।

१०—ओं यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते।
तया मामद्य मेधायाग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा॥
यजु० ३२-१४

अर्थ-हे प्रकाशस्वरूप ज्ञान के भण्डार प्रभु! जिस मेधा बुद्धि से विद्वान् और पितर लोग तेरी उपासना करते हैं, वही धारणावती बुद्धि आज मुझे प्रदान करो।

११—ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव।
यद्भद्रं तन्न आसुव स्वाहा॥ यजु० ३०-६

१२—ओं अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम स्वाहा॥
यजु० ४०-१३

(इन दोनों मन्त्रों के अर्थ पहले आ चुके हैं।)

सांयकाल के मन्त्र

चार आज्याहुति देने के बाद यह चार आहुतियां दें अर्थात् अग्नये स्वाहा, सोमाय स्वाहा, प्रजापतये स्वाहा, इन्द्राय स्वाहा के बाद—

१—ओं अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा।

२—ओं अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा॥

मौन आहूति—

३—ओं अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा॥

नोट— इन मन्त्रों के अर्थ प्रातःकाल के मन्त्रों के समान हैं, केवल भेद इतना है कि दिन को सूर्य है और सायं को अग्नि है। तीसरी आहुति मौन होकर देनी चाहिए। यह आहुति रात्रि के आगमन की सूचक है अतः मौन दी जा रही है।

४—ओं सजूर्देवेन सवित्रा सजू रात्र्येन्द्रवत्या।
जुषाणो अग्निर्वेतु स्वाहा॥

अर्थ—अग्नि अपने दिव्य प्रकाश तथा जगत् की उत्पादक तथा प्रेरक शक्ति के साथ चमकती हुई तथा सजी धजी रात्री के साथ इस आहुति को प्राप्त हो।

शेष मन्त्र ५ से १२ तक की आहुति देवें। इनके अर्थ ऊपर आ चुके हैं।

लाभदायक बातें

प्रातः और सायंकाल के दैनिक यज्ञ के बाद यदि पांच आहुतियां गायत्री मन्त्र की और ५ विश्वानि देव की निम्न प्रदर्शित भावना के साथ दी जाएं तो मानसिक अवस्था पर अद्भुत प्रभाव पड़ता है—

१—गायत्री के पांच अवसान हैं। (१) ओ३म्, (२) भूर्भुवः स्वः (३) तत्सवितुर्वरेण्यं (४) भर्गो देवस्य धीमसि (५) धियो यो नः प्रचोदयात्। क्रमशः एक एक अवसान पर बल देने से अहंकार, मोह, लोभ, क्रोध और काम वासना पर विजय प्राप्त होती है।

२—विश्वानि देव-मन्त्र के दो भाग हैं, एक में प्रार्थना है कि समस्त बुराइयां दूर करो और दूसरे में प्रार्थना है कि नेकी प्रदान करो।

मनुष्य का पतन करने वाले पांच शत्रु अहंकार, मोह, लोभ, क्रोध, काम हैं। जिनके फल क्रमशः कठोरता आसक्ति, स्वार्थ, वैर और अहंकार हैं। इनको जीतने के लिए दया, विश्वप्रेम, उदारता, सहिष्णुता और

अम्रता अचूक साधन हैं। अतः प्रत्येक आहुति के साथ पहले भाग में बुराई का नाम लेकर दूर करने की प्रार्थना करें और दूसरे भाग में उसके विरुद्ध गुण की याचना करें, जैसे कठोरता दूर हो, दया उत्पन्न हो।

मन को शुद्ध करनें और भक्ति के लिए तैयार करने के कुछ भजन

भजन—1

जीवन की घड़ियां वृथा न खो, ओ३म् जपो ओ३म् जपो
चादर न लम्बी तान के सो, ओ३म् जपो ओ३म् जपो ॥टेक॥

ओ३म् ही सुख का सार है, जीवन है जीवन आधार है।
प्रीत न उस की मन से तजो, ओ३म् जपो ओ३म् जपो।

मन की गति संभालिये, ईश्वर की ओर डालिए।
धोना जो चाहो जीवन को धो, ओ३म् जपो ओ३म् जपो

चोला यही है कर्म का, करने का सौदा धर्म का।
इसके सिवाय मार्ग न को, ओ३म् जपो ओ३म् जपो ॥३॥

साथी बना ले ओ३म् को मन में बिठा ले ओ३म को।
देख रहा काहे भाग्य को रो, ओ३म् जपो ओ३म् जपो ॥४

भजन—२

जीवन का मैंने सोंप दिया सब भार तुम्हारे हाथों में ।
है जीत तुम्हारे हाथों में और हार तुम्हारे हाथों में ।।टेक।।

मेरी इच्छा है एक यही, एक बार दर्श पा जाऊं मैं ।
है सब कुछ अर्पण की आशा भगवान तुम्हारे हाथों में ।।२।

यदि मानव जीवन जन्म मिले, तो तेरे चरणों का पुजारी बनू
जिस पूजक की हर एक रग का हो हर तार तुम्हारे हाथों में

या तो में जग से दूर रहूँ या जग में रहूं तो ऐसा रहूँ ।
इस पार तुम्हारे हाथों में, उस पार तुम्हारे हाथों में ।।३।।

एक बिन्दु बनाया करते हैं, इक सेतु विरह के सागर पर
जिस पार पै हम विचरा करते, वह पार तुम्हारे हाथों में ।।४

मुझ में तुझमें है भेद यही, मैं नर हूँ तुम नारायण हो ।
मैं हूँ संसार के हाथों में, संसार तुम्हारे हाथों में ।।५।।

भजन—३

पितु मात सहायक स्वामी सखा, तुम ही इक नाथ हमारे हो
जिनके कछु और आधार नहीं, तिन के तुम ही रखवारे हो

प्रतिपाल करो सारे जगकी, अतिशय करुणा उर धारे हो
भूले हैं हमही तुम को तुमतो, हमरी सुधि नाहीं विसारे हो

उपकारन का कछु अंत नहीं,छिन ही छिन जो विस्तारे हो
महाराज महा महिमा तुमरी, समझें विरले बुधवारे हो।
शुभ शान्ति निकेतन प्रेम निधे, मन मन्दिर के उजियारे हो
इस जीवन के तुम जीवन हो, इन प्राणन के तुम प्यारे हो
तुम सों प्रभु पाय प्रताप हरि, केहि के आप सहारे हो।

भजन-४

शरण अपनी मैं रख लीजो, दयामय दास हूं तेरा।
तुम्हें तजकर कहां जाऊं हितु को और है मेरा ॥१॥
भटकता हूँ मैं मुद्दत से, नहीं आराम पाता हूँ।
दया कि दृष्टि से देखो, नहीं तो डूबता बेड़ा ॥२॥
सताया राग द्वेषों का, तपाया तीनों तापों का।
दुखाया जन्म मृत्यु का, हुआ तंग हाल है मेरा ॥३॥
दुःखों के मेटने वाला, तुम्हारा नाम सुन कर मैं।
शरण में आ पड़ा अब तो, भरोसा नाथ है तेरा ॥४॥
क्षमा अपराध कर मेरे, फकत अब आश है तेरी।
दया अब दास पर कर के, बनालो नाथ निज चेरा ॥५॥

भजन-५

हे जगत् स्वामी प्रभु जी भेंट धरूं क्या मैं तेरी। टेक।
माल नहीं मेरे संपत नाहीं, जिसको कहूं मैं मेरी।

इस जग में हम ऐसे विचरें, जोगी करे ज्यों फेरी ।१।
धन जन यौवन अपना मानें, मूरख भूला भारी
तुझ बिन और सहाई न मेरा, देख लिया मैं विचारी ।२।
यह तन यह मन होवे न अपना, है सब माल पराया ।
जब चाहे तब ही तू लेवे, नहीं कुछ जोर हमारा ।३।
तुमरे ही दर का कूकर स्वावी, लाज तुम्हें है मेरी ।
चरण शरण निज अर्पण करके, देओ भक्ति बिन देरी ।४

भजन-६

नैया कैसे उतरे पार ? ।।टेक।।
वार न दीखे पार न सूझे, आन पड़ी मझधार ।।
बिजली चमके बादल गरजे, उलटी चलत बयार ।
गहरी नदिया नाव पुरानी, खेवट है मतवार ।।
ध्रुवपद सुनावत सुने न कोई, मेरी कूक पुकार ।
वेगवती दुस्तर जलधारा, उठी तरंग अपार ।।
जिन हाथों में सब जग थामा, सो प्रभु हाथ पसार ।
'अमीचन्द' की तारी नौका, डूब रही मंझधार ।।

भजन-७

सब वेद पढ़ें सुविचार बढ़ें बल पाए छढ़ें, सब ऊपर को ।
अविरुद्ध रहें, ऋजु पंथ गहें, परिवार कहें, वसुधा भर को ।

ध्रुव धर्म धरें, पर दुःख हरें, तन त्याग तरें भवसागर को।
दिन फेर पिता, वर दे सविता।
हम आर्य करें निज जीवन को।
दिन फेर पिता, वर दे सविता, हम आर्य करें भूमण्डल को॥

भजन - ८

प्रभु जी मेरे हो तुम एक आधार।
दुःख विनाशक, सुख के दाता, सब के पालनहार।
शरण गहूँ प्रभो ! जाऊं कहां मैं, कोई न पूछनहार।१।
तेरा ही मन्थ जपू निशि वासर, चरणन में सिर डार।
कर कृपा मुझ दुःखिया पै, अब तो लीजो उभार।२।
कर स्वीकार चरण में मेरा, भक्ति भरा उपहार।
दया करो प्रभु ! दीन हूं मैं, तव द्वारे रहा पुकार।३।

भजन-९

मया बरस बरस रस वारी।
बूंद-बूंद पर तेरी जाऊं बार बार बलिहारी॥
नदी सरोवर सागर बरसे, लागी झड़ियां भारी।
मोरे अंगना क्यों न बरसे, मैं क्या बात बिगारी॥
तू बरसे मैं जी भर नहाऊं, दोनों भुजा पसारी।
नयन मूंद कर नाचूं गाऊं, अपना आप बिसारी॥

भजन - १०

हे प्रेममय प्रभो ! तुम्हीं सबके आधार हो ।
तुमको परम पिता, प्रणाम बार बार हो ॥१॥
ऐसी कृपा करो, कि हम सब धर्म वीर हों ।
वैदिक पवित्र धर्म का, जग में प्रचार हो ॥२॥
संदेश देश देश में, वेदों का दें सुना ।
समभाव और प्रेम का, सब में प्रचार हो ॥३॥
असहाय के सहाय हों, उपकार हम करें ।
अभिमान से बचें, हृदय निर्भय उदार हो ॥४॥
फूले फले संसार में, यह रम्य वाटिका ।
कर्त्तव्य का अपने सदा, हमको विचार हो ॥५॥
स्वाधीनता के मन्त्र का, जप हम सदा करें ।
सेवा में मातृभूमि की, तन मन निसार हो ॥६॥

भजन-११

अशरण शरण मुक्ति के धाम । अविरल अविचल अगम अकाम ।१।
घट-घट वासी पूर्ण एक । रखियो निज भक्तन की टेक ।१।
तुम स्वामी, हम सेवक दीन । तुम हो सागर, हम हैं मीन ।३
भक्ति भाव भरपूर कहांय, निशि वासर तेरे गुण गांय ।४।
ज्ञान भानु का होय प्रकाश । केवल लगी तुम्हीं से आस ।५।

भजन-१२

एक याद तुम्हारी याद रहे,
और दिल में किसी की याद न हो ।
मेरे दिल की सुन्दर नगरी में,
कोई तेरे बिना आबाद न हो ॥

यह मेरी आंखें तेरे ही,
दर्शन को भगवन् प्यासी ।
प्रभु आओ देर लगाओ नहीं,
कहीं खानाए दिल बरबाद न हो ॥

तेरी याद की मस्ती में रहकर,
सुध भूल के तुझको पा जाऊं ।
तेरा नाम रहे मेरे हृदय में,
बस और किसी की याद न हो ॥

(विवेकानन्द

भजन-१३

उठ जाग मुसाफिर भोर भई, अब रैन कहां जो सोवत
जो जागत है सो पावत है, जो सोवत है सो खोवत
टुक नींद से अंखियां खोल जरा,और रव अपने से ध्यान
यह प्रीत करन की रीत नहीं, प्रभु जागत है तू सोवत

जो कल करना है वह अज करले,जो अज करना वह अब करले
जब चिड़ियन ने चुग खेत लिया,फिर पछताय क्या होवत है
नादान भुगत करनी अपनी, रे पापी पाप में चैन कहां ?
जब पापकी गठरी सीस धरी फिर सीस पकड़ क्यों रोवत है

भजन १४

नाम जपन क्यों छोड़ दिया, प्रभु का भजन क्यों छोड़ दिया
काम न छोड़ा क्रोध न छोड़ा, सत्य वचन क्यों छोड़ दिया।
कौड़ी को तूने खूब संभाला, लाल रत्न क्यों छोड़ दिया।
झूठे जग में दिल ललचाकर असल वतन क्यों छोड़ दिया।
जिस स्मरण से अति सुख पावें तिन स्मरण क्यों छोड़दिया
खालिस इक भगवान् भरोसे, तन-मन-धन क्यों न छोड़दिया

भजन १५

होता है सारे विश्व का कल्याण यज्ञ से।
जल्दी प्रसन्न होते हैं भगवान् यज्ञ से, हां भगवान् यज्ञ से ॥
ऋषियों नें ऊंचा माना है स्थान यज्ञ का, हां स्थान यज्ञ का
भगवान का यज्ञ है भगवान यज्ञ का।
जाता है देवलोक में इन्सान यज्ञ से, इन्सान यज्ञ से।
होता है सारे विश्व का............
जो कुछ भी डालो यज्ञ में हैं खाते अग्निदेव।

इक-इक के बदले सौ सौ, दिलाते अग्निदेव ।
बादल बनाकर पानी भी बरसाते अग्निदेव ।
पैदा अनाज करते हैं भगवान् यज्ञ से, हां भगवान यज्ञसे ॥

होता है कन्यादान भी हां इसके सामने ।
शक्ति व तेज है भरा, इस शुद्ध नाम में ।
पूजा है इसको कृष्ण ने, भगवान राम ने ।
मिलता है राज कीर्ती और संतान यज्ञ से, हां संतान यज्ञ से ॥

इसका पुजारी कोई भी पराजित नहीं होता ।
होती हैं सारी मुश्किलें आसान यज्ञ से, हाँ आसान यज्ञ से ॥

चाहे अमीर है कोई, चाहे गरीब है ।
जो यज्ञ नित्य करता है वह खुश नसीब है ।
उपकारी मनुष्य बनता है महान् यज्ञ से, हां महान यज्ञ से ॥
होता है सारे विश्व का........

भजन-१६

कल्याण मेरे इस जीवन का
भगवान् न जाने कब होगा
१—कल्याण मेरे इस जीवन का भगवान् न जाने कब होगा
भगवान् न जाने कब होगा ।

जिस से भय भ्रांति मिटा करती, वह ज्ञान न जाने कब होगा ?
वह ज्ञान न जाने कब होगा ।

२–जिससे निज दोष दिखा करते, पापों अपराधों से डरते
उस सद् विवेक का मानव में, सम्मान न जाने कब होगा ?
कल्याण न जाने कब होगा ।

३–अच्छे दिन बीते जाते हैं, गुरुजन बहुविध समझाते हैं
भोग स्थल से योग स्थल में, प्रस्थान न जाने कब होगा ?
कल्याण न जाने कब होगा ।

४–शीतलता जिससे आती है, सारी अशांति मिट जाती है ?
वह नित्य प्राप्त है प्रेम सुधा, पर पान न जाने कब होगा ?
कल्याण न जाने कब होगा ।

५–वासना और चिन्ता मनमें, फिर कुछ भी नहीं सतातीहैं?
जिससे प्रभुजी तेरेदर्शन हों, वहध्यान नजाने कब होगा ?
कल्याण न जाने कब होगा ।

भजन-१७

यज्ञ जीवन का हमारे श्रेष्ठ सुन्दर कर्म है ।
यज्ञ का करना कराना आर्यों का धर्म है ॥१॥
यज्ञ से विश्व को सुगन्धित शांत हो वातावरण ।
यज्ञ से सद्ज्ञान हो, हो यज्ञ से शुद्ध आचरण ॥२॥

यज्ञ से हो स्वस्थ काया, व्याधियां सब नष्ट हों ।
यज्ञ से सुख सम्पदा हो, दूर सारे कष्ट हों ॥३॥

यज्ञ से दुष्काल मिटते, यज्ञ से जल वृष्टि हो ।
यज्ञ से धन धान्य हो, बहुभांति सुखमय सृष्टि हो ।४।

यज्ञ है प्रिय मोक्ष दाता, यज्ञ शक्ति अनूप है !
यज्ञ में सब विश्व है, विश्वेश मुक्ति स्वरुप है ।५।

यज्ञ से अखिलेश, ऐसी आप अनुकम्पा करें ।
यज्ञ के प्रति आर्य जनता, में अमिट श्रद्धा बढ़े ।६।

यज्ञ पुण्य प्रकाश से, पाप ताप तिमिर हरें ।
यज्ञ नौका से, अगम संसार सागर से तरें ।७।

भजन-१८

ईश्वर तुम्हीं दया करो, तुम बिन हमारा कौन है ।
दुर्बलता दीनता हरो, तुम बिन हमारा कौन है ।१॥

माता तू ही तू ही पिता ब्रन्धु तू ही तू ही सखा ।
तू ही हमारा आसरा, तुम बिन हमारा कौन है ॥२॥

जग को रचाने वाला तू, दुखड़े मिटाने वाला तू ।
बिगड़ी बनाने वाला तू, तुम बिन हमारा कौन है ॥४॥

तेरी दया को छोड़कर, कुछ भी नहीं हमें खबर ।
जाएं तो जाएं हम किधर, तुम बिन हमारा कौन है ॥

भजन १९

जीवन का मैंने सौंप दिया, सब भार तुम्हारे हाथों में।
उद्धार पतन अब मेरा है, भगवान् तुम्हारे हाथों में ॥१॥
हम तुम को कभी नहीं भजते, तुम हम को कभी नहीं तजते
अपकार हमारे हाथों में, उपकार तुम्हारे हाथों में ॥२॥
हममें तुम में है भेद यही, हम नर हैं तुम नारायण हो।
हम हैं संसार के हाथों में संसार तुम्हारे हाथों में !!३!!
दृग्बिन्दु बनाया करते हैं, इक सेतु विरह के सागर पर !
जिस पार पै हम विचरा करते, वह पार तुम्हारे हाथों में !४

भजन २०

यही है आरज़ू भगवन् ! जीवन यह आला हो !
पर उपकारी, सदाचारी व लम्बी उम्र वाला हो !!१!!
सरलता, शीलता, एकता हो मेरे जीवन के !
सचाई सादगी श्रद्धा के मन सांचे में ढाला हो !!२!!
तजूं छल झूठ चालाकी, बनूं सत्संग अनुरागी।
गुनाहों और खताओं से मेरा जीवन निराला हो !!३!!
तेरी भक्ति में ओ भगवन् लगादूं मैं अपना तन मन !
दिखावे के लिए हाथों में थैली हो, न माला हो !!४!!
मेरा वेदोक्त हो जीवन, कहाऊं धर्म अनुरागी !
रहूँ आज्ञा में वेदों की, न हुक्मे वेद टाला हो !!५!!

तजूं सब खोटे भावों को, तजूं सब वासनाओं को।
तेरे विज्ञान-दीपक का, मेरे मन में उजाला हो ॥६॥
सदाचारी रहूँ हरदम, बुराई दूर हो मन से।
क्रोध और काम ने मुझ पर, न जादू कोई डाला हो ॥७॥
मुसीबत हो कि राहत हो, रहूँ हर हाल में साबिर।
न घबराऊं न पछताऊं, न कुछ फरियाद नाला हो ॥८॥
पिला दे मोक्ष की घुट्टी, मरन जीवन से हो छुट्टी।
विनय अन्तिम यह अर्जुन की, अगर मंजूर आला हो ॥९॥

भजन २१

हे विश्वनाथ ! मन का चंचलपना मिटा दे।
कुटिया में शान्ति को, आनन्द से बिठा दे ॥१॥
अज्ञान मेरा मुझ से, ऐ नाथ दूर कर दे।
अज्ञान से कारज, बिगड़े सभी बना दे ।२।
ऐसा अनुग्रह करदे, खुल जाय ज्ञान चक्षु।
उन चक्षुओं से अपने, प्रकाश को दिखा दे ॥३॥
दुनियां में जो विषय हैं, उन से है जङ्ग मेरी।
अपनी दयालुता से प्रभु, मुझ को फतह दिलादे ।४।
खुद मतलबी छुड़ा दे, सेवा में कर दे तत्पर।
उपकार पर पराए, मेरी कमर बंधा दे ।५।

भटका हुआ मुसाफिर । बहका हुआ है फिरता ।
मंजिल पै जल्द पहुंचे, वह रास्ता बता दे ।६।
केवल तेरी लगन में, बेसुध रहूँ हमेशा ।
प्रीति का अपने प्याला, ऐसा मुझे पिलादे ।७।

भजन-२२

नाम सुनते हैं तेरा रूप दिखाओ तो सही ।
सूने मन्दिर में मेरे ज्योति जगाओ तो सही ॥
फूल में गन्ध, चमक चन्द्र में डाली तूने ।
चाह जिसको है तेरी, उनमें समाओ तो सही ॥
धूल मल मल के अलख द्वार पर जोगी गाते ।
अपने गाने की कड़ी कोई सुनाओ तो सही ॥
चक्र में घूम चुका, चरणों में तेरे आया ।
दीनवत्सल हो, दयादृष्टि दिखाओ तो सही ॥

भजन-२३

जीवन नैया भवसागर में, बहती जाय प्रभु तेरे सहारे ।
तुम ही रक्षक ऐ मेरे ईश्वर याचक आये हैं तेरे द्वारे ॥
पाप की अन्धी मन घबराया, नैया में पानी भर-भर आया ।
ऐसी दशा में ऐ मेरे इश्वर, केवल तुम्ही ही मेरे रखवारे ॥ जीवन
पापों में फ़ंसकर तुझको भुलाया, जीवन अपना व्यर्थ गंवाया ।
रोय रहा दिन रैन प्रभु जी, बिगड़ी मेरी कौन संवारे ॥ जीवन

जीवन की नैया डगमग डोले, बीच भंवर में खा हिचकोले।
नैया पुरानी मैं अज्ञानी, केवल मेरे आप सहारे ॥ जीवन

भजन- २४

मिलता है सच्चा सुख केवल भगवान तुम्हारे चरणों में।
है विनती यही पल-पल छिन-छिन, रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में ।१।

संकट ने मुझे घेरा हो, चाहे चारों ओर अन्धेरा हो।
यह चित न डगमग मेरा हो, रहे ध्यान .... ।२।

चाहे जीवन बैरी सब संसार बने, मेरा जीवन मुझ पर भार बने।
चाहे मौत गले का हार बने, रहे ध्यान .. ..

चाहे कांटों पे मुझें चलना हो, चाहे अग्नि में भी जलना हो।
चाहे छोड़ के देश निकलना हो, रहे ध्यान......... ।४।

जिह्वा पर तेरा नाम रहे, यही काम मेरा सुबह शाम रहे।
बस ध्यान तेरा भगवान रहे, रहे ध्यान .... ।५।

भजन-२५

साधक का कल्याण उत्तर

१-जब उत्कट इच्छा हो पैदा कल्याण तुम्हारा तब होगा। क०
मस्तक में आज्ञा चक्र खुले भय भ्रान्ति निवारण तब होगा। भय

२-अपने ही पैर अंगूठे के नाखून में अपना मुख देखें।
जब आयें दोष नजर अपने सब पाप पलायन तब होगा। सब

३-भय शंका लज्जा धारण से सम्मान विवेक का होता है।
जब ऋतम्भरा प्रज्ञा जागे उत्थान तुम्हारा तब होगा। उत्थान

४-गुरुजन की शिक्षा धारण कर जब प्रत्याहर सिद्ध कर लें।
भोग स्थल तज योग स्थल में प्रस्थान तुम्हारा तब होगा। प्रस्थान

५-ऊपर नीचे के दांतों में यदि जीभ नोक रख ध्यान करें।
रसना वाणी के दोष मिटें गुणगान तुम्हारा तब होगा। गुण

६-तालु में जीभ लगाने से शीतलता शांति मिल जाये।
मधु सोम ग्रन्थि से टपकेगा रसपान तुम्हारा तब होगा। रस

७-भ्रामरी नाद से ओ३म् ध्वनि आकाश में वृत्ति जम जावे।
विद्युत विशेष हृदय में प्रभु ध्यान तुम्हारा तब होगा। प्रभु

८-हंसमुख आकृति में रहने से चिन्ता कुवासना जल जाये।
जब तुर्यावस्था आएगी भगवान् तुम्हारा तब होगा। भगवान्

भजन-२६

प्रभु तेरी अद्‌भुत माया नहीं भेद किसी ने पाया ।।टेक

१-ऋषि मुनि पैगम्बर सारे हैं जोर लगाकर हारे,
आखिर को आन पुकारे, तेरी महिमा ईश अपार है,
करता न कोई ब्यान, मेरे भगवान्, अजब हैरान,
अकल दौड़ाया, प्रभु तेरी अद्‌भुत माया,

२-हो जग के रचाने वाले, हर जा पे समाने वाले,
बिगड़ी के बनाने वाले, पतितों को उठाने वाले,
हो जग सारे के भूप, सुन्दर रूप, कहीं पर धूप,
कहीं पर छाया। प्रभु तेरी अद्‌भुत माया।

३-जिस जगह पे हो खुशहाली, झट पहुँचे वहाँ कंगाली,
कोई दस बेटों का वाली, कई रोते गोदी खाली,

कुर्बान अजब हैं रंक, निराले ढ़ंग, अकल है दंग,
समझ न आया, प्रभु तेरी अद्भुत माया

४-भगवान् यह वर अब पावें, संसार को आर्य बनावें,
न मरने से घबरावे, हम धर्म पै शीश कटावें,
जयदेव हों कष्ट हजार, तू दे सिर वार, न कर इन्कार,
प्रभु का साया, नहीं भेद किसी ने पाया,
प्रभु तेरी अद्भुत माया।

यज्ञ के बाद समर्पण की दैनिक प्रार्थना

हे सर्वशक्तिमान् दयालु देव ! आपकी अपार दया तथा पवित्र कृपा से हम आपके अबोध बालकों ने यह यज्ञ आपके निमित्त आपकी दी हुई पवित्र दात से किया है। इसमें हमारा कुछ भी नहीं, तुछ भी नहीं। यह सब कुछ आपका आपके ही समर्पण है।

मेरा मुझ में कुछ नहीं जो कुछ है सब तोर।
तेरा तुझ को सौंपते क्या लागत है मोर ॥
त्वदीयं वस्तु गोबिन्द ! तुभ्यमेव समर्पये ॥

प्रभु देव ! कृपा करो इसे स्वीकार करो। हमारी अल्पज्ञता तथा विवशता के कारण इस विधि में अनेकों प्रकार की त्रुटियां रह गई होंगी। परन्तु नाथ ! अच्छे

बुरे, खरे, खोटे, असली नकली जैसे भी हैं आपके ही हैं अतः अपना अनजान शिशु समझकर हमारी त्रुटियों का संवार सुधार करो। जिस प्रकार आप उदार हैं, हमें भी उदार बनाओ, ताकि हम उदार होकर तेरी पूजा में प्रवृत्त हो सकें। आप अनन्त बुद्धिमान हो हमें ऐसी सुमति प्रदान करें कि हम आपको कभी न भूलें और सन्मार्ग पर चलते हुए आपकी पवित्र भक्ति का आनन्द रस अनुभव करें और जीवन को सफल बना सकें। यही हमारी प्रार्थना और आकांक्षा है, इसे स्वीकार करें और सबका बेड़ा पार करें।

ओ३म् शम्

—०—

प्रातः यज्ञ की समाप्ति पर सामूहिक प्रार्थना

ओं आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामा राष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनर्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायतां निकामे निकामे नः प्रर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्तां योग क्षेमो नः कल्पताम्। यजु० २२-२२

अर्थ कविता में—

हे जगदीश दयालु ब्रह्म, प्रभु सुनिए विनय हमारी।
हों ब्राह्मण उतपन्न देश में, धर्म कर्म व्रतधारी॥
क्षत्री हो रणधीर महारथी, धनुर्वेद अधिकारी।
धेनु दूध वाली हों सुन्दर, वृषभ तुंग बलधारी॥
हों तुरंग गति चपल, अंगना हो स्वरूप गुणवाली।
विजयी रथी पुत्र जनपद के, रत्न तेज बलशाली॥
जब ही जब हम करें कामना, जलधर जल बरसावें।
फलें पकें बहु सुखद वनस्पति, योग क्षेम सब पावें॥

अथवा

ब्राह्मण ! सुराष्ट्र में हो द्विज तेजधारी॥
क्षत्री महारथी हों, अरिदल विनाशकारी॥
होवें दुधारू गौएं पशु अश्व आशुवाही।
आधार राष्ट्र की हों, नारी सुभग सदा हो॥
इच्छानुसार वर्षें, पर्जन्य ताप धोवें।
फल फूल से लदी हों, औषध अमोघ सारी।
हो योग क्षेमकारी, स्वाधीनता हमारी॥

सामूहिक कल्याण की प्रार्थना

सुखी बसे संसार सब, दुःखिया रहे न कोय।
यह अभिलाषा हम सबकी भगवन् ! पूरी होय॥

विद्या बुद्धि तेज बल, सबके भीतर होय ।
दूध पूत धन धान्य से, वंचित रहे न कोय ॥२॥
आपकी भक्ति प्रेम से, मन होवे भरपूर ।
राग द्वेष से चित्त मेरा, कोसों भागें दूर ॥३॥
मिले भरोसा नाम का, हमें सदा जगदीश ।
आशा तेरे धाम की, बनी रहे मम ईश ॥४॥
पाप से हमें बचाइये, करके दया दयाल ।
अपना भक्त बनाय कर, सबको करो निहाल ॥५॥
दिल में दया उदारता, मन से प्रेम अपार ।
हृदय में धैर्य वीरता, सब को दो करतार ॥६॥
नारायण तुम आप हो, पाप के मोचनहार ।
क्षमा करो अपराध सब, करदो भव से पार ॥७॥
हाथ जोड़ विनती करूं, सुनिए कृपा निधान ।
साध–संगत सुख दीजिए, दया, नम्रता, दान ॥८॥

सायं के लिए यज्ञपुरुष महिमा (आरती)

यज्ञ रूप प्रभु हमारे, भाव उज्ज्वल कीजिए ।
छोड़ देवें छल कपट को, मानसिक बल दीजिए ॥१॥
हर्ष में हों मग्न सारे, शोक सागर से तरें ।
वेद की बोलें ऋचाएं, सत्य को धारण करें ॥२॥

अश्वमेधादिक रचायें, यज्ञ पर उपकार को ।
धर्म मर्यादा चलाकर, लाभ दें संसार को ।।३।।
नित्य श्रद्धा भक्ति से, यज्ञादि हम करते रहें ।
रोग पीड़ित विश्व के, संताप सब हरते रहें ।४।
भावनाएं पूर्ण होवें, यज्ञ से नर नारी की ।
कामना मिट जाय मन से, पाप अत्याचार की ।५।
लाभकारी हो हवन, हर जीवधारी के लिए ।
वायु जल सर्वत्र हों, शुभ गन्ध को धारण किए ।६।
स्वार्थ भाव मिटे हमारा, प्रेम पथ विस्तार हो ।
"इदन्न मम" का सार्थक, प्रत्येक में व्यवहार हो ।।७।।
हाथ जोड़ झुकाए मस्तक, वन्दना हम कर रहे ।
नाथ ! करुणारूप करुणा, आपकी सब पर रहें ।।८।।

पाक्षिक यज्ञ पद्धति

महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज ने संस्कार विधि में पृष्ठ २१४ (इक्कीसवां संस्करण) पर लिखा :-

"इस प्रकार पक्षयाग, अर्थात् जिस के घर में अभाग्य से अग्निहोत्र न होता हो तो सर्वत्र पक्षयागादि में... ...ईश्वरोपासना, स्वस्तिवाचन, शान्तिकरण भी यथायोग्य करें ।"

पाक्षिक यज्ञ मास में दो बार होता है, पूर्णमासी को और अमावस्या को। इनका पृथक्-२ फल है, जहां मानसिक शुद्धि होती है वहां ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है।

यह दोनों यज्ञ दैनिक यज्ञ की आहुतियों के पश्चात् करने चाहियें।

पौर्णमासी यज्ञ

निम्नलिखित तीन आहुतियां स्थालीपाक की दें।

१. ओं अग्नये स्वाहा ॥
२. ओं अग्निषोमाभ्यां स्वाहा ॥
३. ओं विष्णवे स्वाहा ॥

तत्पश्चात् नीचे लिखी चार व्याहृति आहुति पूर्ण पात्र से घृत की दें। पहली आहुति से दूसरी आहुति ऊंची करके, तीसरी दूसरी से भी ऊंची माथे तक लेजा कर पूर्ण पात्र से छोड़ें, चौथी आहुति-पहली आहुति के स्थान से शनैः शनैः ऊंची करते जाएं, जिससे पूर्णपात्र मास्तिष्क के समाने आ जावे।

अब प्रश्न हो सकता है कि व्याहृति आहुतियां नीचे से ऊपरवाली विधि के अनुसार क्यों दी जाती हैं—इसका समाधान यह है :—

भू: का अर्थ है पृथवी, पृथ्वी का देवता है अग्नि भूव: का अर्थ है अन्तरिक्ष, अन्तरिक्ष का देवता है वायु स्व: का अर्थ है द्यौ, द्यौ का देवता सूर्य—आदित्य पृथिवी नीचा लोक है, हमारे शरीर का निचला भाग भूलोक है। अन्तरिक्ष मध्य स्थानी लोक है, शरीर में नाभि से कण्ठ तक भुव: लोक है। द्यौ ऊंचा लोक है शरीर में मस्तिष्क स्व: स्थानी है।

अत: इन देवताओं की प्रसन्नता के लिए और वचन और कर्म में अनुकूलता के लिए भूरग्नये की आहुति स्रुवा को नाभि भाग तक रखकर दी जाती है भुवर्वायवे की आहुति छाती भाग तक और तीसरी मस्तिष्क तक रखकर दी जाती है। चौथी आहुति से भुव: को होती हुई स्व: लोक मस्तिष्क तक स्रुवा ले जाकर दी जाती है। आहुतियां यह हैं—

१— ओं भूरग्नये स्वाहा।
इदमग्नये, इदन्न मम।।

२— ओं भूवर्वायवे स्वाहा।
इदं वायवे, इदन्न मम।।

३— ओं स्वरादित्याय स्वाहा।
इदमादित्याय, इदन्न मम।।

४– ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा ।
इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः, इदन्न मम ॥

अब विशेष आहुतियां

पूर्णिमा

अथर्ववेद ७-८०

परमेश्वर की परम पूर्ण ब्रह्म शक्ति का नाम पूर्णिमा है । जो उक्त पौर्णमासी यज्ञ में प्रयुक्त होता है । चतुर्वेद भाष्यकार श्री पण्डित जयदेव जी मीमांसातीर्थ ने अब चतुर्थ आवृत्ति में मन्त्रों के भाष्य को परमेश्वर की पूर्ण ब्रह्मशक्ति पर घटा कर पूर्व भाष्यों से कुछ परिवर्तन किया है जो उपयुक्त है । अतः हम भी उन्हीं के भाष्य से अर्थ उद्धृत कर रहे हैं । [सम्पादक]

१– ओं पूर्णा पश्चादुत पूर्णा पुरस्ता-
दुन्मध्यतः पौर्णमासी जिगाय ।
तस्यां देवैः सर्वसन्तो महित्वा
नाकस्य पृष्ठे समिषा मदेम ॥

अर्थ—वह ब्रह्मशक्ति (पश्चात्) इस संसार के प्रलय के अनन्तर भी (पूर्णा) पूर्ण ही थी और (मध्यतः) इन दोनों कालों के बीच के रचना काल में भी वह

(पौर्णमासी) पूर्ण-रूप से जगत् को मापने वा बनाने वाली महती शक्ति (उत जिगाय) सर्वोच विराजमान है (तस्याम्) उसमें (देवैः) मुक्तात्माओं सहित (संवसन्तः) निवास करते हुए (महित्वा) हम लोग अपनी शक्ति और उसकी महिमा से (नाकस्य) परम सुखमय मोक्ष के (पृष्ठे) धाम में (इषा) अपनी इच्छा के अनुसार (सं मदेम) आनन्द का उपभोग करें।

भावार्थ—पूर्णिमा का यज्ञ करनेवाले सुखी होते हैं, सब प्रकार परिपूर्ण होने से पौर्णमासी को पूर्णिमा कहते हैं। इस समय जो लोग देवों की सभा में यज्ञ में संलग्न होते हैं वे अपनी महिमा से स्वर्ग धाम प्राप्त करते हैं ॥१॥

२—ओं वृषभं वाजिनं वयं पौर्णमासं यजामहे।
स नो ददात्वक्षितां रयिमनुपदस्वतीम् ॥

अर्थ – (पौर्णमासम्) समस्त संसार के रचयिता (वाजिनम्) सर्वशक्तिमान् (वृषभम्) सर्वसुखों के वर्षक प्रभु की (वयं यजामहे) हम उपासना करते हैं। (सः) (अनुपदस्वतीम्) कभी किसी के प्रयत्न से क्षीण न होने वाली और (अक्षिताम्) अक्षय (रयिम्) धन वा, शक्ति (ददातु) प्रदान करे।

भावार्थ—पौर्णमास बल और अन्न से युक्त होता है, इस लिए हम सब उसका यजन करते हैं इस पूर्णिमा यज्ञ से अविनाशी धन प्राप्त होता है ॥२॥

३—ओं प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो,
विश्वा रूपाणि परिभूर्जजान ।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु,
वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥

अर्थ—हे (प्रजापते) प्रजाओं के पालक प्रभो ! (त्वत अन्यः) तुम से दूसरा कोई (एतानी) इन (विश्वा रूपाणि) समस्त प्रकाशमान लोकों और पदार्थों को (परिभू) सर्वव्यापक सर्वसामर्थ्यवान् हो कर (न) नहीं (जजान) उत्पन्न करता । हम लोग (यत्कामाः) जिस कामना से प्रेरित होकर (ते) तेरे निमित्त (जुहुमः) आत्म त्याग करते हैं (तत् न अस्तु) भगवन् ! वह हमें प्राप्त हो और (वयम्) हम (रयीणाम्) धनों के (पतयः) स्वामी (स्याम) हों ।

भावार्थ—परमात्मा ही सर्व जगत् का निर्माता और विधाता है । उसके यजन पूजन से हमारी सब प्रकार की शुभ कामनायें पूर्ण हो सकती हैं और सब

धाम में प्रवेश प्राप्त होवे ॥४॥

नोट—अमावस्या और पौर्णमासी के यह दोनों सूक्त "दर्श और पूर्णमास" यज्ञों के सूचक हैं यह दोनों पाक्षिक यज्ञ कहलाते हैं। महर्षि ने इन दोनों यज्ञों को यथोचित समय पर करना प्रत्येक आर्य गृहस्थी के लिए अनिवार्य ठहराया है। यह दोनों यज्ञ मनुष्य को जहां व्यवहार संबन्धी बोध कराते हैं वहाँ त्रुटियों का निवारण करते हुए समुन्नत होने का उपदेश करते हैं। मानव जीवन में उतार चढ़ाव आया करते हैं अतः चन्द्रमा की गति और सूर्य की प्रकृति से शिक्षा ग्रहण करते हुए धैर्य्यवान् होकर आगे बढ़ने का प्रयत्न करें।

"हर कमाले रा जवाले, हर जवाले रा कमाल"

अमावस्या यज्ञ पद्धति

पूर्णिमा यज्ञ की तरह सब विधि पूरी करके स्थालीपाक की तीन आहुतियां निम्न मन्त्रों से दें—

१. ओं अग्नये स्वाहा।

२. ओ इन्द्राग्निभ्यां स्वाहा।

३. ओं विष्णवे स्वाहा।

घृत की पूर्णिमा की विधि अनुसार पूर्णपात्र से

प्रकार का ऐश्वर्य और सम्पति भी उसी की कृपा से प्रात्त होती है ॥३॥

४=ओं पौर्णमासी प्रथमा यज्ञायासीदह्नां रात्रीणा-
मतिशर्वरेषु । ये त्वां यज्ञैर्यज्ञिये अर्धयन्त्यमी ते नाके सुकृतः प्रविष्टाः ॥

अर्थ—(पौर्णमासी) पूर्ण ब्रह्म की सर्वव्यापिनी शक्ति (प्रथमा) सब से अधिक श्रेष्ठ (यज्ञिया) परमात्मा की शक्ति (आसीत्) है, जो (अह्नाम्) दिनों और (रात्रिणाम्) रात्रियों (अतिशर्वरेषु) और महाप्रलय कालों को भी अतिक्रमण करके रहती है । हे (यज्ञिये) यज्ञमय परमेश्वर शक्ते ! (ये) जो (त्वाम्) तुझ को (यज्ञैः) यज्ञमय सत्कर्मों द्वारा (अर्धयन्ति) समृद्ध करते, तेरी महिमा को बढ़ाते हैं (ते) वे (सुकृतः) पुण्यात्मा लोग (नाके) परम लोक-मोक्ष में (प्रविष्टाः) प्रविष्ट होते हैं ।

भावार्थ—पूर्णिमा यज्ञ अवश्य करना चाहिए । इससे स्वर्ग सुख विशेष की प्राप्ति होती है ।

अर्थात् पूर्णिमा दिन में और रात्री में पूजने योग्य है हे पूर्णिमा ! तेरा यजन हम करते हैं, हमें स्वर्ग

चार आहुतियाँ निम्न मन्त्रों से दें—

ओं भूरग्नये स्वाहा ।
इदमग्नये, इदन्न मम ॥
ओं भुवर्वायवे स्वाहा ।
इदं वायवे, इदन्न मम ॥
ओं स्वरादित्याय स्वाहा ।
इदमादित्याय, इदन्न मम ॥
ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा ।
इदमग्निवायय्वादित्येभ्यः इदन्न मम ॥

अमावस्या की चार विशेष आहुतियां

(अथर्ववेद काण्ड ७, सूक्त ७८, मन्त्र १ से ४ तक)

१—ओं यत् ते देवा अकृण्वन् भागधेयममावास्ये संवसन्तो महित्वा । तेना नो यज्ञं पिपृहि विश्ववारे रयिं नो धेहि सुभगे सुवीरम् ॥

अर्थ—हे अमावस्ये ! तेरे गौरव के कारण एकत्र निवास करने वाले विद्वान जो (भागदेयम्) भाग (ते अकृण्वन्) तेरे लिए नियत् करें (तेनः न यज्ञम्) उसी से तू हमारे यज्ञ को (पिपृहि) पूर्ण कर और हे (विश्व वारे) उत्तम गुणों से युक्त। (सुभगे) सौभाग्यवती अमावस्या !

तू ही (नः) हमें (सु-वीरम्) बलयुक्त संतान रूपी (रयिम धन को प्रदान कर।

भावार्थ—अमावस्या के यज्ञ से उत्तम गुण युक्त संतान की प्राप्ति होती है।

२-ओं अहमेवारम्यमावास्या मामावसन्ति सुकृतो मयीमे।
मयि देवा उभये साध्याश्चेन्द्रज्येष्ठाः समगच्छन्त सर्वे ॥

अर्थ— मैं ही अमावस्या हूँ क्यों कि मुझे लक्ष्य करके ही यह पुण्य कर्म कर्त्ता मेरा आश्रय लेकर (आ वसन्ति) निवास करते हैं। (इन्द्र-ज्येष्ठाः) इन्द्र ईश्वर को ही सर्वश्रेष्ठ माननेहारे (देवाः) विद्वद्गण और (साध्याः) साधना करने वाले (उभे) यह दोनों ज्ञानी और कर्मवान्(मयी) मेरे आश्रय पर ही (सर्वे) सब (सम् अगच्छन्ति) एकत्र होते हैं।

भावार्थ—विद्वान् और कर्मकण्डी लोग प्रभु भक्ति के लिए इस रात्री की प्रतीक्षा में होते हैं। प्रभु के गुण कीर्तन द्वारा उसका आशीर्वाद चाहते और अपने हृदय में ब्रह्मबेज को धारण करने का प्रयास करते हैं। जैसे गोताखोर समुद्र में गहरी डुबकी लगाकर रत्न निकाल लाते हैं वैसे भक्त लोग अनुभूतियां प्राप्त करते हैं।

३–ओं आगन् रात्री संगमनी वसूनामूर्जं पुष्टं वस्वावेशयन्ती । अमावास्यायै हविषा विधेमोर्जं दुहाना पयसा न आगन् ॥

अर्थ—(वसूनाम्) वास करने वाले प्राणियों को मिलाने वाली, पुष्टिकारक अन्न और धन के प्रदान करने वाली रात्री आयी है, वह हमें (ऊर्जं दुहाना) अन्न रस प्रदान करती हुई (पयसा नः आगन्) दूध के पुष्टिकारक पदार्थों के साथ प्राप्त हो । उसको हम (हविषा विधेम) अन्न आदि पदार्थों से प्रसन्न करें ।

भावार्थ–अमावस्या यज्ञ से अन्न धन की प्राप्ति होती है ।

४– ओं अमावास्ये न त्वदेतान्यन्यो विश्वा रूपाणि परिभूर्जजान । यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयिणाम् ॥

अर्थ—हे अमावस्ये ! तेरे से भिन्न इन सब रूपों को घेर कर कोई नहीं बना सकता । जो जो कामना करते हुये हम तेरा भजन करें, वह वह कामना हमारी पूर्ण हो और हम धनैश्वर्यों के स्वामी बनें ।

भावार्थ—अमावस्या की रात्री में सब पदार्थ

घटाटोप अन्धकार से घिर जाते हैं, उस के विलीन होने पर जब दिखाई देने लगते हैं, प्रलय की महारात्री जब तक समाप्त न हो परमात्मदेव तब तक सृष्टि की रचना नहीं करते। अमावस्या के यज्ञ से कामनाओं की पूर्ति होती है ॥४॥

अधिक स्पष्टीकरण

अमा [सूर्य की]—नाम की किरण है। इसके कारण अमावस्या [अमा रश्मि में वास योग्य] नाम पड़ा है। विष्णु पुराण २-१२ में स्पष्टीकरण है—

कलाद्वयाविष्टस्तु प्रविष्टः सूर्यमण्डलम् ।
अमाख्यरश्मौ वसति अमावस्या ततः स्मृता ॥

अर्थात्—[इस अहोरात्र में] अमा नाम रश्मि में [चन्द्रमा) बास करता है। अमावस्या इसी कारण से स्मरण की जाती है।

उस कलाद्वय में सूर्य जिस राशि में होता है, उसी राशि में चन्द्रमा भी आ जाता है। अतः कहा है, चन्द्रमा सुर्य मण्डल में प्रविष्ट हो जाता है।

वेद-विद्या-निदर्शन पृ० २२६

वेदों तथा शास्त्रकारों ने दर्श पौर्णमास यज्ञ की

महिमा गाई है। यजुर्वेद के प्रथम तथा द्वितीय अध्याय इसी यज्ञ के ही अध्याय हैं। अथर्ववेद काण्ड ७, सूक्त, ७९ तथा ८० में इन दोनों यज्ञों का निरूपण किस उत्तम भाषा तथा शैली में करते हैं, यह ऊपर दर्शाया जा चुका है

तैत्तिरीय संहिता में लिखा है कि—

१. सुवर्गाय हि वै लोकाय दर्शपूर्णमासों इज्येते ॥
तै० सं० २-२-५॥

अर्थ—स्वर्ग लोक की प्राप्ति के लिए ही निश्चय दर्श और पूर्णमास दोनों यज्ञ किये जाते हैं।

२—एते संवत्सरस्य चक्षुषी यद् दर्शपूर्णमासौ।
एष वै देवयानः पन्थाः यद् पन्थाः यद् दर्शपूर्णमासौ॥
न अमावस्यायां पोर्णमास्यां च स्त्रियम् उपेयात्॥
तै० सं० २-५-६॥

अर्थ—यह निश्चय बरस की दो आँखे हैं जो दर्श (अमावस्या) और पूर्णमास है। यही निस्संदेह देवयान मार्ग (वद्वानों के चलने का रास्ता) है। जो दर्श पौर्णमास है, इस लिये न दर्श में (अमावस्या में) और न पूर्णमास में स्त्री के पास जाए।

इसी प्रकार शतपथ ब्राह्मण में आया है कि—

३—यो विद्वान् अग्निहोत्रं च जुहोति दर्शपूर्णमासाभ्यां च यजते, मासि मासि हि एवास्याश्वमेधेन इष्ट भवति। एतद् उ ह अस्य अग्निहोत्रं च दर्शपूर्णमासौ च अश्वमेधम् अभिसम्पद्यते ॥ शत० १२—२—५—५

अर्थ—जो विद्वान अग्निहोत्र करता है और दर्शपूर्णमास यज्ञ भी करता है, मास मास में निस्संदेह मानो उसका प्रसिद्ध अश्वमेध यज्ञ किया गया होता है, यही उसके प्रसिद्ध अग्निहोत्र और दर्शपूर्णमास दोनों निश्चय अश्वमेध यज्ञ हो जाते हैं,

३-बलिवैश्वदेव यज्ञ

इस यज्ञ से अन्न बढ़ता है, अतिथि यज्ञ से अन्न पवित्र होता है। निम्नलिखित दश मन्त्रों से घृत मिश्रित भात की, यदि भात न बना हो तो क्षार लवणान्न छोड़ कर जो कुछ पाक में बना हो, उसकी आहुति करें

१. ओं अग्नये स्वाहा।
२. ओं सोमाय स्वाहा।
३. ओं अग्निषोमाभ्यां स्वाहा।
४. ओं विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा।
५. ओं धन्वन्तरये स्वाहा।

६. ओं कुह्वै स्वाहा ।

७. ओं अनुमत्ये स्वाहा ।

८. ओं प्रजापतये स्वाहा ।

९. ओं सह द्यावापृथिवीभ्यां स्वाहा ।

१०. ओं स्विष्टकृते स्वाहा ।

तत्पश्चात् निम्न मन्त्रों से बलिदान करें—

ओं सानुगायेन्द्राय नमः । इस से पूर्व

ओं सानुगाय यमाय नमः । इससे दक्षिण

ओं सानुगाय वरुणाय नमः । इससे पश्चिम

ओं सानुगाय सोमाय नमः । इससे उत्तर

ओं मरुद्भ्यो नमः । इससे द्वार ।

ओं अद्भ्यो नमः । इससे जल

ओं वनस्पतिभ्यो नमः । इससे*मूसल और ऊखल

ओं श्रियै नमः । इससे ईशान

ओं भद्रकाल्यै नमः । इससे नैर्ऋत्य

ओं ब्रह्मपतये नमः । ओं वास्तुपतये नमः । इससे मध्यः

ओं विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः । ओं नक्तंचारिभ्यो भूतेभ्य नमः इन से ऊपर ।

---

* मूसल और ऊखल का भाव है कि यह बलि सामग्री तय्यार करने वाले को दी जाए । —सम्पादक

ओं सर्वात्मभूतये नमः । इससे पृष्ठ
ओं पितृभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः । इससे दक्षिण

इन मन्त्रों से एक पत्तल वा थाली में यथोक्त दिशाओं में भाग धरना । यदि भाग धरने के समय कोई अतिथि आ जाए तो उसी को दे देना, नहीं तो अग्नि में धर देना । तत्पश्चात् घृत सहित लवणान्न लेके—

शुनां च पतितानां च श्वपचां पापरोगिणाम् ।
वायसानां कृमीणां च शनकैर्निर्वपेद् भुवि ॥

मनु ३।९२॥

अर्थ—कुत्ता, पतित, चाण्डाल, पापरोगी, काक, कृमि इन छः नामों से छः भाग पृथिवी में धरे और जिस जिस के यह भाग हैं उनको देने चाहियें ।

चेतावनी

१. जिस चौंके में अन्नपान से पूर्व यह आहुतियां नहीं दी जातीं वह भोजन गोमांस के बराबर है ऐसा शास्त्रकार कहते हैं ।

२. इस यज्ञ के करने से आंखों की अत्यन्त पवित्रता हुई द्वेष के दोष से विमुक्ति, प्राणिमात्र से मैत्री

आदि का भाव प्राप्त होकर अनेकों अध्यात्मिक लाभ प्राप्त होते हैं।

यज्ञ कौन कर सकता है ?

परमेश्वर दो प्रकार के मनुष्यों को बड़े यज्ञ की प्रेरणा करते हैं :—

एक उनको जिनके पूर्वजन्मों के पुण्य उदय होने पर उनके यश और कमाई करने के लिए बाधित करता है। ऐसे मानव एक बार यज्ञ कराकर फिर वह रह जाते हैं और यज्ञ में भी वह अपनी आत्मिक उन्नति के साधनों को भूल जाते हैं, तोड़ते रहते हैं और व्रत में अनेक त्रुटियां करते हैं।

दूसरे जिनको वह (परमेश्वर) स्थाई रूप से सन्मार्ग पर लगाना चाहते हैं। ऐसे व्यक्ति कटिबद्ध हो जाते हैं, बड़ी श्रद्धा और प्रेम से प्रत्येक बात को सुनते और उस पर आचरण करते हैं और बहुत प्रसन्न होते हैं, ज्यों-ज्यों आचरण करते हैं त्यों-त्यों उनको रस आता और उत्साह बढ़ता है और वह स्थाई रूप से

सन्मार्ग पर लग जाते हैं और कइयों को लगाते हैं और प्रतिवर्ष यज्ञ करते हैं। [प्रभु आश्रित]

हवन कुण्ड से शिक्षा

पुरुषार्थ से मनुष्य जहां चाहे पहुँच सकता है। एक यज्ञ करने वाला साधक उपासक के लिए हवन कुण्ड एक बड़ी शिक्षा है। यजमान अपनी सामग्री और सम्पत्ति बल (घी) लिए हुए बैठा है। यदि वह उसी स्थान पर रखे रहता है अथवा पृथिवी पर बिखेरता है तो च्योंटी, मकोड़े, क्षुद्रजन्तु ले जावेंगे अर्थात् जो लोग संग्रह करके अपने ही प्रयोग में लाते हैं वह कृपण अदानी च्योंटी, मकोड़े की मृत्यु मरते हैं, उनके जीवन का मूल्य क्षुद्र जन्तुओं के समान है जो मिट गए।

दूसरे वह जो अपनी क माई को अगले लोक में अर्थात पानी में डाल देते हैं। जैसे कुण्ड के चारों ओर पानी भरा हुआ है। यह लोक विषयवासना का लोक है। तमाम संसार विषयवासनाओं से घिरा हुआ है। जो लोग अपनी कमाई को जुआ, व्यभिचार और गन्दे विषयों में डाल देते हैं उनको वह विषय डुबो देते हैं और बदनाम करते हैं जैसे जल में पड़ी सामग्री उसे

दुर्गन्धित कर देती है हालाँकि, सामग्रीसु गन्धित और बलवर्द्धक थी, परन्तु जल में पड़ने से दुर्गन्धित हो जाती है। ऐसे वे लोग डूब जाते हैं, अपयश के भागी बनते हैं।

तीसरे वे जो अपनी कमाई से बलपूर्वक अग्नि की भेंट करते हैं, वे सर्वत्र फैल जाते हैं जैसे अग्नि अपनी शरणागत समस्त सामग्री को वायु से आकाश में फैला देती है ऐसे मानव सर्वत्र फैल जाता है अर्थात् उसका यश होता है। वह बैठे बैठे एक स्थान से अपना दान आहुति सब स्थानों तक पहुँचाता है। ऐसे वह एक स्थान पर पैदा होकर सब स्थानों से वसूल करता है अथवा उसे स्वयं पहुंचाता है। ऐसा व्यक्ति चक्रवर्ती राजा बनता है जो सविता के गुण को धारण करता है।

यज्ञ कब प्रारम्भ करें ?

इस प्रश्न के दो पहलू हैं—

१. किस समय प्रारम्भ करें। इसका उत्तर है सायंकाल को अग्न्याधान करें क्योंकि रात्रि को गर्भाधान किया जाता है और दिन को प्रसव अच्छा होता है। अग्नि में ज्योति निहित है, सूर्य में बाहर है।

२. किस नक्षत्र में शुरु करें। इस पर भिन्न-भिन्न विचार हैं—

(क) कृत्तिका में—क्योंकि नक्षत्र प्रायः अनेक तारों के समूह हैं, किसी में एक, किसी में दो, किसी में तीन-कृत्तिका में बहुत तारे हैं—इससे संगठन बढ़ेगा, बहुत्व के साथ सम्बन्ध होगा।

एक और कारण भी है, कृत्तिका अग्नि नक्षत्र है, अग्नि का अग्नि के साथ सम्बन्ध रहने से अनुकूलता है। इसलिए भी कृत्तिका में अग्न्याधान करें।

(ख) कोई कहते हैं रोहिणी नक्षत्र में करें। प्रजापति (भूमिपति कृषक जमींदार, राजा) नें प्रजा की इच्छा से रोहिणी नक्षत्र में अग्न्याधान किया था (बीज वपन किया था) प्रजाओं को पैदा कर लिया। प्रजायें सब एक ही आकृति की थीं। रोहणी नक्षत्र में अग्न्याधान करने से उसकी सन्तान और पशु बहुत होते हैं।

[ग] कोई कहते हैं मृगशीर्ष में करें। जो मनुष्य संसार में श्री को प्राप्त करना चाहता है उसे मृगशीर्ष नक्षत्र में अग्न्याधान [गर्भाधान] करना चाहिए। इससे

उसकी जो सन्तान होगी संसार में उसकी कीर्ति
द्वारा वह मनुष्य भी कीर्तिमान होगा।

(घ) यदि गर्भ स्थिति न हो तो पुनर्वसु में आ
करें—पुनर्वसु का नाम ही इसलिए है कि जिसमें पुनः
अर्थात निवास स्थिति प्राप्त होती है।

(ङ) फाल्गुनी नक्षत्र में अग्न्याधान करने
संतान में अर्जन करने की अर्थात् कमाने की सामर्थ्य
होगी और वह अर्जन करते-करते परमैश्वर्यशाली
बन जावेगा। (फाल्गुनी का दूसरा नाम अर्जुनी है)

दूसरी बात—यज्ञ का देवता इन्द्र है! इन्द्र
को लक्ष्य करके यज्ञ किए जाते हैं! यज्ञ करने
यजमान भी इन्द्र है!

पूर्वाफाल्गुनी में अग्न्याधान करने से सन्तान
फलवान उन्नतिशील होती है!

और उत्तराफाल्गुनी में अग्न्याधान करने
का आगें-आगें आने वाला कल (दिन) हमेशा
दिखाने वाला होता है!

(च) हस्त नक्षत्र में अग्न्याधान करने से
कुछ मिलता ही रहेगा!

]छ] चित्रा में अग्न्याधान करने से सन्तान अपने शत्रुओं को पराजय करने में अवश्य सफल होती है ! क्षत्रिय को तो चित्रा में ही अग्न्याधान करना चाहिए !

[ज] अन्ततः यदि किसी नक्षत्र में सूर्य आ जाए तो उसी नक्षत्र में अग्न्याधान करें !

३—अथर्ववेद के प्रमाण भी देख लीजिए ?

सुहवमग्ने कृत्तिका रोहिणी चास्तु भद्र मृगशिरः समार्द्रा पुनर्वसू सूनृता चारु पुष्यो भानुराश्लेषा अयनं मघा मे !!
अ० १९-७-७२

हे विद्वन् ! [कृत्तिका और रोहणी] दोनों नक्षत्र उत्तम रीति से यज्ञ करने योग्य हों ! मृगशिरा नक्षत्र सुखकारी हो ! आर्द्रा नक्षत्र शांतिदायक हो ! दोनों पुनर्वसु नक्षत्र शुभ, उत्तम ज्ञान देने वाले हों ! पुष्य नक्षत्र उत्तम हो ! आश्लेषा अतिदीप्तिजनक हो और मघा नक्षत्र मेरे लिए सब सम्पत्ति प्राप्त करने वाला हो

पुण्यं पूर्वा फाल्गुन्यौ चात्र हस्तश्चित्रा शिवा स्वाति सुखो मे अस्तु । राधे विशाखे सहुवानुराधा ज्येष्ठा सुनक्षत्रमरिष्टमूलम् !!
अ० १९-७-३

भावार्थ–पूर्वा फाल्गुनी के दो नक्षत्र सुखकर हों !

इस लोक में हस्त और चित्रा कल्याणकारी हों। स्वाति मुझे सुखकारी हो ! राधा और विशाखा नक्षत्र दोनों उत्तम रीति से यज्ञ करने योग्य और अनुराधा अनुकूल सिद्धि देने वाले हों ! ज्येष्ठा उत्तम नक्षत्र हो ! मूल नक्षत्र भी कल्याणकारी हो ?

इन दोनों मन्त्रों से यही निष्कर्ष निकला कि यज्ञ रोहिणी, कृत्तिका, राधा और विशाखा नक्षत्रों में प्रारम्भ किया जाकर अनुकूल सिद्धि देने योग्य होता है!

४—यज्ञ श्वेत रजित रूप उषा पैदा होती है! उस पर ध्यान करने से याजक की सुषुम्णा नाड़ी यदि चल रही होगी तो याजक के मस्तिष्क में प्रभाव डालेगी ज्योतिष्मती प्रज्ञा जाग पड़ेगी ! सुषुम्णा नाड़ी के चलने की पहचान है कि बायां स्वर [नासिका] चल रहा होगा ! इसलिए विद्वान् पुरोहित यजमान का यज्ञ तब आरम्भ कराते हैं जब उनकी बाई नासिका अथवा सुषुम्णा चल रही होती है !

---

* ओ३म् *

बृहद यज्ञ पद्धति

१-संकल्प

ओं तत्सदद्य श्रीब्रह्मणो द्वितीयप्रहरार्द्धे वैवस्वत-मन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे प्रथम चरणेपंच सहस्त्र वर्षेषु गतेषु जम्बू-द्वीपे भारत खण्डे भारत-वर्षान्तर्गते पुण्यभूमावार्यावर्ते···स्थाने द्विसहस्त्रत्रिंशद् विक्रमाब्दे उत्तरायणे/दक्षिणायने काले·· ऋतौ······मासे··· पक्षे······शुभतिथौ······वासरे प्रातः मध्याह्ने/सायं-वेलायाम् ··· मण्डले (जिला का नाम) ······नगरे/ग्रामे ······गोत्रोत्पन्नोऽहम् (यजमान का नाम ले)······ अमुक (यथा पवित्र यजुर्वेद, ब्रह्मपारायण-महायज्ञ) कृत्यं करिष्ये !!

यजमानस्य दीक्षाग्रहणम्

ओं अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यताम् ! इदमहमनृतात् सत्यमुपैमि !! यजु० १-५ !!

भावार्थ—हे प्रकाशस्वरूप व्रतों के स्वामी परमात्मन् ! मैं सांसारिक असत्य व्यवहार से अलग

होकर श्रेष्ठतम कर्म करने, वेद का यज्ञ करने, सत्य बोलने- करने और मानने का व्रत लेता हूँ। मैं अल्पज्ञ और अशक्त हूँ ! कृपा करके मेरे उस व्रत को सिद्ध कीजिए, जिससे मैं उस व्रत के नियम पालन करने में समर्थ होऊं और उस पर आचरण कर सकूं ।

३-ऋत्विग्वरणम्

ऋत्विजों का लक्षण—अच्छे विद्वान् धार्मिक जितेन्द्रिय कर्म करने में कुशल निर्लोभ परोपकारी दुर्व्य-सनों से रहित कुलीन सुशील वैदिक मत वाले वेदवित् एक, दो, तीन अथवा चार का वरण करें !

जो एक हो तो उसको पुरोहित और जो दो हों तो ऋत्विक् पुरोहित और तीन हों तो ऋत्विक्, पुरोहित और अध्यक्ष और जो चार हों तो होता, अध्वर्यु, उद्-गाता और ब्रह्मा मानें और समझे !

इनका आसन वेदी के चारों ओर अर्थात् होता का वेदी के पश्चिम आसन पूर्व मुख, अध्वर्यु का उत्तर आसन दक्षिण मुख, उद्गाता का पूर्व आसान पश्चिम मुख और ब्रह्मा का दक्षिण आसन उत्तर में मुख होता

चाहिए और यजमान का आसन पश्चिम में और वह पूर्वाभिमुख अथवा दक्षिण में आसन पर बैठ के उत्तरा भिमुख रहे और इन ऋत्विजों को सत्कारपूर्वक आसन पर बैठाना और वे प्रसन्नतापूर्वक आसन पर बैठे और उपस्थित कर्म के बिना दूसरा कर्म वा दूसरी बात कोई भी न करें !

संस्कार विधि—पृष्ठ ३३ रामलाल कपूर ट्रस्ट प्रथम सं० !

(क) ब्रह्मवरणम्—(यजमान तथा यजमान की पत्नी दोनों खड़े होकर ब्रह्मा की ओर मुख कर करबद्ध प्रार्थना निम्न मन्त्र द्वारा करते हैं !]

[ब्रह्मा का आसन दक्षिण में उत्तराभिमुख]

ओं त्वामद्य ऋष आर्षेय ऋषीणां नपादवृणीतायं यजमानो बहुभ्य आ सगंतेभ्य एष मे देवेषु वसु वार्या-यक्ष्यत: इति ता यादे वा देव दानान्यदूस्तान्यस्माआ च शास्वा च गुरस्वेषितश्च होतरसि भद्रवाच्याय प्रेषितो मानुषः सूक्तवाकाय सूक्ता ब्रूहि !! यजु० २१-६१ !!

हे मन्त्रों के अर्थ जानने वाले ! हे मन्त्रार्थ जानने में श्रेष्ठ पुरुष ! ऋषियों की सन्तान ! मैं यजमान

आज बहुत योग्य पुरुषों से आपको बरता हूं ! आप कृपया मेरे धन, जल अर्थात् पत्र पुष्प भेंट को अंगीकार करें ! [यहां यजमान को वस्त्र आदि ब्रह्मा की भेंट करनी चाहिएं!] हे विद्वान् ! जिसकी सब लोग संगति और सत्कार करते हैं और विद्वान् जन जिन देने योग्य पदार्थों को देते हैं उन सबों को मुझ यजमान के लिए कहें और कृपया मुझे भली प्रकार शिक्षा दीजिए और यज्ञ को सावधानी से कराइए, कोई त्रुटि न रह जाए ! और हे देनेहारे ! सबके चाहे हुए आप जिसको उत्तम वचन तथा उपदेश कहने चाहियें, उनको कृपया कहिए क्योंकि आप इन सब गुणों में सम्पन्न हैं !

भावार्थ—इन मन्त्र द्वारा यजमान ब्रह्मा की स्तुति करता हुआ जहां उसे वस्त्र, अन्न, धन आदि भेंट करता है वहाँ प्रार्थना करता है कि महाराज ! इस यज्ञ को आप कराइए, यज्ञ में जो-जो उपदेश हों वह मुझे कहिए और जो पदार्थ देने योग्य हों अथवा वचन कहने योग्य हैं वे मुझे बताइए ! आप इन सब उतम पदार्थों को पाए हुए हैं।

नोट–वस्त्रों में प्रायः धोती, तोलिया, चादर अथवा कुर्त्ता, खड़ाऊं, आसन, लोटा और द्रव्य यथा-

शक्ति देने चाहियें । कहीं-कहीं वेद पुस्तक देने का भी विधान है ।

ब्रह्मोवाच—

ओं वृतोऽस्मि सीदामि च ।

नोट—[१] इस स्थान पर ब्रह्मा अपने आसन पर पधार कर यजमान तथा यजमान की पत्नी के गले में जरी की माला अथवा पुष्पमाला आशीर्वाद रूप में धारण कराता है ।

[२] यदि चारों वेदों का ज्ञानी न हो तो अच्छा यही है कि ब्रह्मा पद पर सदा परमात्मा को ही वरो । इसमें वेद का निम्न प्रमाण है: —

ईश्वर को वरण करें

इन्द्रमिद्विमहीनां मेधे वृणीत मर्त्यः ।
इन्द्रं सनिष्युरूतये ॥ ऋ० ८-६-४४ ॥

पदार्थ—[विमहीनाम्] विशेष महान् पुरुषों के [मेधे] यज्ञ में [मर्त्यः] मनुष्य [इन्द्रम्, इत्] परमात्मा का ही [वृणीत] वरण करे । [सनिस्युः] धन चाहते

वाला (ऊतये) रक्षा के लिए (इन्द्रम्) परमात्मा ही की उपासना करे।

भावार्थ—पुरुष बड़े यज्ञों में परमात्मा को ही वरण करे। अर्थात् उसी के निमित्त यज्ञ करे और ऐश्वर्य की कामना वाला पुरुष उसी की उपासना में तत्पर रहे, वह अवश्य कृतार्थ होगा।

[पं० आर्यमुनि भाष्य]

(ख) होतृ-वरणम्-अब यजमान होता (पुरोहित) की ओर करबद्ध सम्बोधन करे।

(होता का आसन पूर्व में पश्चिमाभिमुख)

१-ओ३म् वयं हि त्वा प्रयति यज्ञे अस्मिन्नग्ने होतारम् वृणीमहीह। ऋधगया ऋधगुताशमिष्ठाः प्रजानन्यज्ञमुपयाहि विद्वान्त्स्वाहा॥ यजु० ८-२०॥

अर्थ—हे ज्ञान के देने वाले। हम लोग इस प्रयत्नसाध्य यज्ञ में आपको होता (पुरोहित) वरते हैं। आप सब विद्यायुक्त क्रियाओं को जानने वाले हैं अतः समृद्धि कारक यज्ञ को शास्त्रोक्त विधि से कराइये और निश्चय इस ऋद्धि,सिद्धि के बढ़ाने वाले यज्ञ में शांति आदि गुणों को ग्रहण कर कराके सुखी होजिए।

अथवा—

२—ओं यदद्य त्वा प्रयति यज्ञे अस्मिन् होतश्चिकित्वन्नवृणीमहीह। ध्रुवमयो ध्रुवमुता शविष्ठः प्रविद्वान् यज्ञमुपयाहि सोमम् ॥ य० ७-९७-३

भावार्थ—से ज्ञानवन्। हे ज्ञानदाता देव। क्योंकि हम यजमान लोग इस अवसर पर आज इस यज्ञ के आरम्भ में आपको ऋत्विक् रूप से वरण करते हैं, इसलिए आप निश्चयपूर्वक यज्ञ करें और हे शक्तिमान्। आप उत्तम कोटी के उतम होकर सोमयज्ञ में अवश्य आइए, पधारिये।

पुरोहित—

ओं वृतोऽस्मि। अथवा

(ग) अन्य ऋत्विक् वरणम्।

यजमान, यजमान पत्नी, ऋत्विक् को करबद्ध प्रार्थना करें (अध्वर्यु का आसन उत्तर में, दक्षिणमुख-उद्गाता का पूर्वासिन पश्चिम मुख)।

ओ३म् देवा गातुबिदो गातुं वित्वा गातुमित।
मनसस्पत इमं देव यज्ञं स्वाहा वाते धाः ॥
य० ८-२१ ॥

अर्थ–(देवाः) ज्ञान के प्रकाश करने हारे पुरुष (गातुविदः) पदार्थों के गुणों के ज्ञाता एवं (गातुं) गमन करने योग्य मार्ग को जानने वाले हैं, हे विद्वान पुरुषो। आप लोग (गातुम्) सब पदार्थों का ज्ञान कराने वाले वेद का (वित्वा) ज्ञान करके (गातुम्) उपदेश करने योग्य यज्ञ की सत् व्यवस्थाओं को (इत) प्राप्त होवो। हे (मनसः पते) बन के परिपालक प्रभो। हे (देव) प्रकाशक। (इमम्) इस संसार रूप यज्ञ को (वाते) वायु प्राण के आधार पर आप धारण कर रहे हो (सुआहा) यही संसार का वायु रूप सूत्रात्मा तुझ में उत्तम आहुति अर्थात् कारण रूप से व्यवस्थित है।

[जयदेव भाष्य]

ऋत्विगासादनम्

[ऋत्विक् को आसन देना]

१–ओ३म् सीद होतः स्व उ लोके चिकित्वान्त्सादया यज्ञं सुकृतस्य योनौ। देवावीर्देवान् हविषा यजास्यग्ने बृहद् यजमाने वयोधाः॥ यजु० ११-३५॥

२—ओं सं सीदस्व महां२ असि शोचस्व देव वीतमः।
विधूममग्ने अरुष मियेध्यसृज प्रशस्त दर्शतम्॥
यजु० ११-३७॥

अर्थ— हे प्रशंसा के योग्य दुष्टों को पृथक करने वाले तेजस्वी विद्वान। विद्वानों को अत्यन्त प्रिय आप निर्मल देखने योग्य सुन्दर रूप को प्रकट कीजिए तथा पवित्र हूजिए। जिस कारण आप बड़े-बड़े गुणों से युक्त विद्वान् हैं, इसलिए यज्ञ की पवित्र वेदी पर आसन अथवा गद्दी पर सुखपूर्वक विराजिए।

यह दोनों मन्त्र यजमान पढ़ के ऋत्विजों को आसन भेंट कर आसनारूढ़ होने की प्रार्थना करे।

"ओ३म् सीदामि"—कहकर ऋत्विज् महानुभाव आसन पर विराजें।

५—ऋत्विक्कर्तृक प्रार्थना

१—ओं एतं ते देव सवितर्यज्ञं प्राहुर्बृहस्पतये ब्रह्मणे। तेन यज्ञमव तेन यज्ञपतिं तेन मामव। य० २-१२।

अर्थ हे जगदुत्पादक। शुभ प्रेरक प्रभो। अपा

के यज्ञ को महापालक तथा महन् का निमित्त कहते हैं, अतः इस यज्ञ के द्वारा यज्ञ की रक्षा कीजिए। यजमान की रक्षा कीजिए और मेरी रक्षा कीजिए।

२—ओं मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमं
तनोत्वरिष्टं यज्ञं समिमं दधातु।
विश्वेदेवासऽइह मादयन्तामो३म्प्रतिष्ठ ॥
यजु० २-१३॥

भावार्थ—हे महापालक प्रभो! यज्ञ को निर्विघ्न पूर्ण करें। सब देव आपस में आनन्दित हों। हे यजमान! भगवान् में तेरा प्रतिष्ठान हो।

३—ओ३म् यत्ते सोम दिवि ज्योतिर्यत्पृथिव्यां
यदुरावन्तरिक्षे। तेनास्मै यजमानायोरु राये
कृद्ध्यधि दात्रे वोचः॥ यजु० ६-३३॥

भावार्थ—हे शांतिदायक भग वान्! आप का जो प्रकाश, द्यौ, अन्तरिक्ष तथा पृथिवी में है उसके द्वारा इस यजमान के लिए ऐश्वर्य की विशालता करो और इस यजमान के हृदय में सदुपदेश करो।

———

ऋत्विक् और यजमान की सम्मिलित प्रार्थना

क–ओं अग्ने व्रतपास्त्वे व्रतपा या तव तनूरियं सा मयि यो ममतनू रेषा सा त्वयि । सह नौ व्रतपते व्रतान्यनु मे दीक्षां दीक्षापतिर्मन्यतामनुतपस्तपस्पतिः ॥ यजु० ५-६

भावार्थ—हे व्रतों के स्वामी परमेश्वर ! आप सत्य धर्मादि नियमों के पालन करने वाले हैं, हम भी पूर्वोक्त व्रतों की क्रिया करने चले हैं, कृपा करो हमें शक्ति प्रदान करो कि हमारे वह सफल हों। आप व्रतोपदेशों की रक्षा करनेवाले हैं सो मेरे लिए व्रतोपदेश की आज्ञा कीजिए जिससे यजमान और ऋत्विज् दोनों प्रीति के साथ वर्त कर दोनों की विद्या वृद्धि सदा होवे।

ख– ओं धामच्छदग्निरिन्द्रो ब्रह्मा देवो बृहस्पतिः ।
सचेतसो विश्वे देवा यज्ञं प्रावन्तु नः शुभे ॥
यजु० १८-७६ ॥

भावार्थ—सब बिद्वान् लोग मनुष्यादि प्राणियों के कल्याणार्थ निरन्तर सत्य उपदेश करें और यज्ञ की अच्छी प्रकार कामना करें।

७-पुनः यजमान प्रार्थना

[सब व्रतियों को सम्बोधन करके]

ओं स्वाहा यज्ञम्मनसः स्वाहोरोरन्तरिक्षात् । स्वाहा द्यावापृथिवीभ्यां स्वाहा वातादारभे स्वाहा ॥
यजु० ४-६ ॥

भावार्थ—हे मनुष्य लोगो ! जैसे मैं वेदोक्त उत्तम शिक्षा युक्त यज्ञ क्रिया करने लगा हूँ, वैसे आप लोग भी भाग लेकर सहयोग दें ।

८—व्रत्तियों का दीक्षा ग्रहण

ओं अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यताम् । इदमहमनृतात्सत्यमुपैमि । यजु० १-५

[अर्थ ऊपर आ चुका है]

९-यज्ञोपवीत-प्रदानम्

प्रत्येक व्रती और यजमान को यज्ञोपवीत अपने दोनों हाथों में इस प्रकार फैलाकर रखना चाहिए कि चारों अंगुलियां यज्ञोपवीत के अन्दर हों और कनिष्ठिका बाहर हो, ...

होता—

ओं यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं

पुरस्तात। आयुष्यमग्रयं प्रति मुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेज ॥१॥

यज्ञोपवीत को देखकर सब व्रती कहें—

यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि ॥२॥

पार० का० २।२।११

नोट—यह यज्ञोपवीत वस्त्रों के ऊपर रहे। यह यज्ञ का अधिकार है। यज्ञ के समय इसे वस्त्रों के ऊपर धारण करके आयें और यज्ञ के बाद इसे उतार कर संभाल कर रखें।

१०-यज्ञ कुण्ड की प्रदक्षिणा

ओ३म् ये तीर्थानि प्रचरन्ति सृकाहस्ता निषगिंणः। तेषां सहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि ॥ यजु० १६-६१

यज्ञ अग्नि के बिना नहीं हो सकता। अग्नि अतिथि है। कुण्ड उसका आवास स्थान है रक्षा तथा आदर के लिए कुण्ड की प्रदक्षिणा आवश्यक है।

११-ऋत्विक्कर्तृकमार्जनम्

यजमान और सब व्रतियों को ऋत्विक् निम्न मन्त्रों से मार्जन करे।

(क) ओं आपो हिष्ठा मयोभुवस्तान ऊर्जे दधातन।
महे रणाय चक्षसे ॥
(ख) ओं यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः।
उशतीरिव मातरः ॥
(ग) ओं तस्माऽअरगंमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ।
आपो जनयथा च नः ॥ यजु० २६ । १४-१६

जल के द्वारा आशीर्वाद देता तथा कर्त्तव्य पालन के लिए सचेत करता है !

१२-तत्पश्चात् दीपक प्रज्वलित किया जाए

दीपक ईशान कोण में रखे हुए घड़े के ऊपर रखा जाए।

दीपक जलाने का मन्त्र

ओ यत्र ज्योतिरजस्रं यस्मिन् लोके स्वर्हितम् । तस्मिन् माँ धेहि पवमानाऽमृते लोके अक्षित इन्द्रायेन्दो परिस्रव
ऋ० ६-११३-७ ॥

अर्थ—हे पवमान सबको पवित्र करने वाले ज्योतिर्मय प्रभो ! तेरी ज्योति अखण्ड है, जिस लोक में सदा सुख बना रहता है, उस अमृत लोक में मुझे रख। हे दयार्द्र स्वभाव वाले प्रभो ! तू इस आत्मा के लिए

सब ओर से सुखों को बहा ।

सावधान—यज्ञ कुण्ड के चारों कोणों पर एक एक कोरा घड़ा जल से भरकर रखा जावे और घड़े के ऊपर कच्चा नारियल रखा जावे ।

घड़े प्रातः सायं ताजे भरे जावें । उनका जल किसी वृक्ष की जड़ में दिया जाए ।

ईशान कोण के घड़े को नहीं हिलाना । यज्ञ के लिए दूसरे घड़ों से जल ले सकते हैं, ईशान कोण वाले से नहीं । तत्पश्चात् प्रत्येक याजक अपने अपने स्थान पर बैठ जावें और ईश्वर स्तुति प्रार्थनोपासना आदि ध्यान-पूर्वक सुनें ।

स्वस्तिवाचन आदि के बाद अग्न्याधान किसी थाली में पूर्ववर्णित विधि से करें ।

पूर्णाहुति की क्रिया

चेतावनी—पूर्णाहुति प्रातःकाल को की जावे । उस दिन स्वस्तिवाचनादि सब पढ़े जावें । सामान्य प्रकरण भी किया जावे । समस्त आवश्यक क्रिया समाप्ति के बाद—

१. यजमान सपत्नीक निम्न प्रार्थना पढ़ें—

ओं अग्ने व्रतपते व्रतमचारिषं तदशकं तन्मेऽराधींदमहं य एवाऽस्मि सोऽस्मि ।

भावार्थ–हे प्रकाशस्वरूप व्रतों के स्वामी ! आपने जो कृपा करके मेरे लिए इस सत्याचरणयुक्त यज्ञरूपी व्रत को सिद्ध किया है, उसके लिए मैं आपको कोटिशः धन्यवाद देता हूं। यह व्रत आपकी सहायता तथा आशीर्वाद के बिना कभी सफल नहीं हो सकता था, क्योंकि मैं अल्पज्ञ और अशक्त था।

२. ऋत्विक् की प्रार्थना—

ओं यज्ञ यज्ञं गच्छ यज्ञपतिं गच्छ, स्वां योनिं गच्छ स्वाहा एष ते यज्ञो यज्ञपते सहसूक्तवाकः सर्ववीरस्तं जुषस्व स्वाहा । यजु० ८-२२

भावार्थ–यज्ञ यज्ञ को प्राप्त हो, यज्ञपति परमात्मा को प्राप्त हो, अपनी योनि को प्राप्त हो अर्थात् प्रभुदेव को स्वीकार हो। हे यज्ञपते ! आपका जो यह उत्तम सूक्तों से युक्त, आत्मा और शरीर के पूर्ण बल को प्राप्त कराने वाला प्रजा की रक्षा करने वाला यज्ञ है, उसे आप स्वीकार कीजिए।

३ ऋत्विक् और यजमान की सम्मिलित प्रार्थना—

१. ओं अग्ने व्रतपास्ते व्रतपा या तव तनूर्मय्यभूदेषा सा त्वयि यो मम तनूस्त्वय्यभूदियं सा मयि । यथायथं नौ व्रतपते व्रतान्यनु मे दीक्षां दीक्षापतिरमंस्तानु तपस्तपस्पतिः ॥ यजु० ५-४०

भावार्थ— जैसे पहले विद्वान् अध्यापक हुये वैसे हम लोगों को भी होना चाहिए। जब तक मनुष्य सुख दुःख हानि लाभ की व्यवस्था में परस्पर अपने आत्मा के तुल्य दूसरे को न जाने तब तक पूर्ण सुख को प्राप्त नहीं होता। अतः मनुष्य लोग श्रेष्ठ व्यवहार ही किया करें।

२. ओं इष्टो यज्ञो भृगुभिराशीर्दा वसुभिः ।
तस्य न इष्टस्य प्रीतस्य द्रविणेहागमेः ॥ यजु० १८-५६

भावार्थ—इच्छा पूर्ण करने वाले प्रथम कक्षा के विद्वानों ने इच्छासिद्धि को देने वाला यह यज्ञ किया है, इस किये हुए मनोहर यज्ञ से हम धन को प्राप्त होवें।

३. ओं इष्टो अग्निराहुतः पिपर्तु न इष्टं हविः ।
स्वगेदं देवेभ्यो नमः । यजु० १८-५७

भावार्थ—मनुष्य अग्नि में जिन अच्छे संस्कार किए हुए पदार्थों का होम करते हैं उनसे संसार में बहुत अन्न उत्पन्न होता है। यह अग्नि हमारे सुख के साधनों की और हमारी रक्षा करता है ऐसा अन्न वा सत्कार विद्वानों के लिए हो।

४. ओं येन बहसि सहस्त्रं येनाग्ने सर्ववेदसम्।
तेनेमं यज्ञं नो नय स्वर्देवेषु गन्तवे ॥ यजु० १८-६२

भावार्थ—जो धर्म के आचरण और निष्कपटता से विद्या देते और ग्रहण करते हैं, वे ही सुख के भागी होते हैं।

५. ओं प्रस्तरेण परिधिनास्त्रुचा वेद्या च बर्हिषा।
ऋचेमं यज्ञं नो नय स्वर्देवेषु गन्तवे ॥ यजु० १८-६३

भावार्थ—जो मनुष्य धर्म से पाये हुए पदार्थों से तथा वेद की रीति से साङ्गोपाङ्ग यज्ञ को सिद्ध करते हैं वे सब प्राणियों के उपकारी होते हैं।

६. ओं यद्दत्तं यत्परादानं यत्पूर्तं याश्च दक्षिणाः।
तदग्निर्वैश्वकर्मणः स्वर्देवेषु नो दधत् ॥ य० १८-६४

भावार्थ—जो अच्छे धर्मात्माओं को दिया जाता है वा जो और से लिया जाता है और कर्म के अनुसार

दक्षिणा दी जाती है उससे वह अग्निदाता को सब प्रकार के दिव्य धार्मिक सुख प्रदान करती है।

७. ओं यत्र धारा अनपेता मधोर्घृतस्य च याः।
तदग्निर्वैश्वबर्मणः स्वर्देवेषु नो दधत्॥ य० १८-६५

भावार्थ—जो मनुष्य वेदी आदि को बना कर सुगन्ध और मिष्टानादि युक्त बहुत घृत को अग्नि में हवन करते हैं, वे सब रोगों का निवारण करके अतुल सुख को उत्पन्न करते हैं।

४. स्विष्टकृत् आहुति :—

नारियल अथवा गोले की आहुति जिसमें घृत तथा शक्कर पहले से भर रखी हो।

ओं यदाकूतात्समसुस्त्रोहृदो वा मनसो वा संभृत चक्षुषो वा। तदनु प्रेत सुकृतामु लोकं यत्र ऋषयो जग्मुः प्रथमजा पुराणाः॥ यजु० १८-५८

भावार्थ—जो लोग प्रत्यक्षादि प्रमाणों से जैसे प्राचीन ऋषियों ने सत्य की विवेचना की ऐसे सत्यासत्य का निर्णय करके सत्य को ग्रहण करते हैं और तद्वत् धर्म का आचरण करते हैं वे अत्यन्त सुख को प्राप्त होते हैं।

५. फल की आहुति [ऋतु के अनुसार]

ओं काले वर्षतु पर्जन्यो पृथिवी च शस्यशालिनी ।
देशोऽयं क्षोभरहितोऽस्तु ब्राह्मणाः सन्तु निर्भयाः ॥

अर्थ—समय पर वर्षा हो, पृथिवी खेती से हरी-भरी हो । यह देश उपद्रव आदि से रहित हो, ब्राह्मण निर्भय हों ।

६. पूर्णाहुति :—

१. ओं पुर्णात् पूर्णमुदचति पूर्णं पूर्णेन सिच्यते ।
उतो तदद्य विद्याम यतस्तत् परिषिच्यते ॥
अ० १०-८-२९ ॥

भावार्थ—पुर्ण परमेश्वर से पूर्ण जगत् उत्पन्न होता है । पूर्ण परमेश्वर से यह समस्त जगत् माली से वाटिका के समान सींचा जा रहा है और अब हम उस परब्रह्म का ज्ञान करें, जिससे यह जगत् सींचा जा रहा है ।

२. ओं पूर्णपदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥ वृ. उ. ५-१-१०

भावार्थ—वह ब्रह्म पूर्ण है, यह जगत् भी पूर्ण है । पूर्ण ब्रह्म से पूर्ण प्रकट होता है । पूर्ण की पूर्णता को लेने पर पूर्ण ही शेष रहता है ।

३. ओ३म् सर्वं वै पूर्णं स्वाहा ॥
ओ३म् सर्वं वै पूर्णं स्वाहा ॥
ओ३म् सर्वं वै पूर्णं स्वाहा ॥

तत्पश्चात् सहस्त्रधारा के लिए एक लौटा घृत से भरकर जिसमें आठवां भाग दूध हो, उसे निम्न मन्त्र द्वारा एक, दो, तीन शक्ति और श्रद्धानुसार छाननी में जो पहले से यज्ञकुण्ड पर लगा दी हो, केवल यजमान आहुति दे :—

ओं वसोः पवित्रमसि शतधारं वसोः पवित्रमसि सहस्त्रधारम् । देवस्त्वा सविता पुनातु वसो पवित्रेण शतधारेण सुप्वा कामधुक्षः ॥ य० १-३

७. यजमान, यजमान पत्नी तथा व्रती लोग सब यज्ञ कुण्ड की प्रदक्षिणा करें, ब्रह्मा और ऋत्विज नीचे लिखे मन्त्रों का पाठ करें :—

ब्रह्मा अपने हाथ से प्रत्येक याजक को एक-एक पुष्पमाला तथा कुछ फल प्रसाद रूप में देकर निम्न मन्त्रों से आशीर्वाद देता है ।

१. ओं इन्द्रं दैवीर्विशो मरुतोऽनु वर्त्मानोऽभवन्यथेन्द्रं दैवीर्विशो मरुतोऽनुवर्त्मानोऽभवन् । एवमिमं यजमानं

दैवीश्च विशो मानुषाश्चानु वर्त्मानो भवन्तु ॥

यजु० १७-८६

भावार्थ—यजमान यज्ञ कराने वाले विद्वान् के अनुकूल हो और ऋत्विक् भी यजमान के अनुकूल वर्त्ते।

२. ओ३म् ध्रुवासि ध्रुवोऽयं यजमानोऽस्मिन्नायतने प्रजया पशुभिर्भूयात् घृतेन द्यावा पृथिवी पूर्येथामिन्द्रस्य छदिरसि विश्वजनस्य छाया ॥ यजु० ५-२८

भावार्थ—गृहस्थी को यदि सुख, शांति, सन्तान, सम्पत्ति और मान की इच्छा है तो वह बड़े-बड़े यज्ञ करें।

३. पुनस्त्वाऽऽदित्या रुद्रा वसवः समिन्धतां पुनर्ब्रह्माणो वसुनीथ यज्ञैः। घृतेन त्वं तन्वं वर्धयस्व सत्यासन्तु यजमानस्य कामाः॥ य० १२-४४॥

भावार्थ—जो मनुष्य प्रयत्न के साथ सब विद्याओं को पढ़ पढ़ाके बारम्बार सत्सगं करते हैं और विषय के त्याग से शरीर तथा आत्मा के रोग को हटा के नित्य पुरुषार्थ का अनुष्ठान करते हैं उन्हीं के संकल्प सत्य सिद्ध होते हैं दूसरों से नहीं।

ओं शुभं भवतु! ओं सौभाग्यमस्तु!! ओं स्वस्ति!!!

नोट—इस तीसरे मन्त्र से प्रातः सायं यज्ञ की

समाप्ति पर शान्तिपाठ से पूर्व पुष्पवर्षा द्वारा आशीर्वाद दी जावे। यह आवश्यक है। प्रायः यह आशीवाद व्यक्तिगतरूप से कुण्ड पर रखे घड़ो से स्नान करके दी जाती है, इस को अवभृथ स्नान कहते हैं। यजमान तथा व्रतियों को करना चाहिए।

सामूहिक प्रार्थना तथा आशीर्वाद

जो वैयक्तिक आशीर्वाद से पहले दी जावे।

१. ओं श्रद्धां मेधां यशः प्रज्ञां विद्यां पुष्टिं श्रियं बलम्।
तेज आयुष्यमारोग्यं देहि मे हव्यवाहन्॥

अर्थ—हे हृदय दर्पण! हमें श्रद्धा, मेधा, यश, प्रज्ञा विद्या, पुष्टि, श्री, बल, तेज, आयु और आरोग्यता प्रदान करो।

२. ओ३म् अपुत्राः पुत्रिणः सन्तु पुत्रिणः सन्तु पोत्रिणः।
निर्धनाः सधनाः सन्तु जीवन्तु शरदां शतम्॥

हे हमारे ईश्वर! हमारे देश में जो पुत्र रहित हैं वह पुत्र वाले हों और पुत्रों वाले पौत्रों वाले हों। निर्धन धनी हों और सौ वर्ष तक जीवें।

३. ओं दातारो नोऽभिवर्धन्तां वेदाः सन्ततिरेव च।
श्रद्धा च नो मा व्यगमद् बहुदेयं च नोऽस्त्विवति॥

अर्थ— हम में दाता बढ़ें, वेद बढ़ें और सन्तान

बढ़ें। श्रद्धा हम से कभी दूर न हो और देने के लिए हमारे पास बहुत कुछ हो।

४. ओं अन्नं च नो बहु भवेदतिथींश्च लभेमहि।
याचितारश्च नः सन्तु मा स्म याचिष्म कंचन॥

अर्थ— हमारे घरों में बहुत अन्न हो और हम अतिथियों को ढूंढ़ते फिरें। हमारे पास याचना करने वाले हों और हम किसी से याचना न करें।

५. ओं काले वर्षतु पर्जन्यः पृथिवी च सस्यशालिनी।
देशाऽयं क्षोभरहितो अस्तु ब्राह्मणाः सन्तु निर्भयाः॥

अर्थ–समय पर मेघ बरसें और पृथिवी खेतियों से भरपूर हो। यह देश क्षोभ से रहित हो और ब्राह्मण निर्भय हों।

६. ओं सर्वेपि सुखिनः सन्तु सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग् भवेत्॥

अर्थ—सब ही सुखी हों। सब ही निरोग हों। सब कल्याण और भद्र देखें। मत कोई दुःख को प्राप्त हों।

यज्ञ की समाप्ति पर

सामूहिक प्रार्थना—विश्वकल्याण की प्रार्थना

६. सब कुण्ड को प्रदक्षिणा करते हुए गावें—

१. ओं भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभि-र्यजत्राः। स्थिरैरंगैस्तुष्टुवां॰ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः॥ य० १५-२१

२. ओं स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥ सा० १८७५

तत्पश्चात् आरती होकर—

सर्वेऽपि सुखिनः सन्तु सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत॥

हे ईश्वर सब सुखी हों कोई न हो दुःखारी।

हों सब निरोग भगवन् धन धान्य के भण्डारी
सब भद्र भाव देखें सन्मार्ग के पथी हों।

दुखिया न कोई होवे सृष्टि में जीवधारी।
सबका भला करो भगवान्, सब पर दया करो भगवान्।
सब पर कृपा करो भगवान्, सबका सब विधि हो कल्याण॥

शांति पाठ

ओं द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष शान्तिः, पृथिवी शांतिरापः शाँतिर्ब्रह्म शाँतिः, सर्वं् शाँतिरेव शांतिः सा मा शान्ति रेधि ॥

ओं शांति ! शांति !! शांति !!!
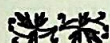
* ओ३म् *

कतिपय महानुभावों के आग्रह पर कई एक सामाजिक कृत्य जो सर्व साधारण जनता में प्रचलित हैं, उन के विषय में भी जो उपयोगो पद्धति है वह भी आगे के पृष्ठों में देना उचित समझा गया है।

१-जन्म दिवस

प्रश्न होता है कि जन्म-दिवस मनाने को प्रथा अर्वाचीन है। महर्षि स्वामी दयानन्द जी ने इसका कहीं विधान नहीं किया अतः क्यों यह नया बखेड़ा गले में डाला जाय ?

उत्तर—ज़न्म दिवस मनाना इतना आवश्यक है जितने कि अन्य संस्कार। वास्तव में सच पूछें तो जन्म दिवस मनाने का महत्व इस लिए बढ़ जाता है कि यह प्रतिवर्ष मनाया जाता है। मानव जीवन का निर्माण बहुत कठिन कार्य है। सौ वर्ष की आयु में केवल १६ संस्कार मना लेने से जीवन की अभीष्ट सफलता प्राप्त नहीं हो सकती। क्योंकि विवाह संस्कार तक १२ संस्कार २५ वर्ष की आयु तक पूरे हो जाते हैं। और इन में से भी ८ संस्कार तो ८ वर्ष की आयु तक पूरे हो जाते हैं। शेष चार में से गृहाश्रम संस्कार और अन्त्येष्टि संस्कार का जीवन निर्माण से कोई सम्बन्ध नहीं तो निष्कर्ष यह निकला कि सौ वर्ष की आयु में केवल १४ संस्कार मना लेने से मानव देव नहीं बन सकता। मानव को पहले मनुष्यत्व और फिर मनुष्यत्व से देवत्व प्राप्त करने के लिए समय समय पर चेतना आवश्यक हैं।

वह समय जन्म दिवस से अधिक सुन्दर और कोई नहीं हो सकता। जिस प्रकार बैंक प्रतिवर्ष अपना पोतामेल तैयार करते हैं और आगामी वर्ष के लिए

अपना आनुमानिक बजट तथा कार्यक्रम निश्चित करते हैं और अपनी आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करते जाते हैं, इसी प्रकार प्रत्येक नर, नारी और बालक को अपना जन्म दिवस मनाना चाहिए और उस दिन गत वर्ष के अपने कार्यक्रम, उसमें सफलता के कारणों को सम्मुख रखते हुए जहां आगामी वर्ष के लिए प्रभु से बल बुद्धि और पथ-प्रदर्शन की याचना करें वहां सावधान होकर उत्तरोत्तर उन्नति करते जाएं।

हमारे इन विचारों की पुष्टि अथर्ववेद ७-३२-१ से हो रही है जिसकी आहुति इसी संस्कार में पांचवें नम्बर पर दी जा रही है।

विधि—जिस तिथि को बालक अथवा नर-नारी का जन्म-दिन हो उस दिन प्रातः ही स्नान कर शुद्ध खादी अथवा स्वदेशी वस्त्र धोती सहित पहन कर यज्ञ मण्डप में विराजें। नया यज्ञोपवीत धारण कर ईश्वर प्रार्थनोपासना स्वस्तिवाचन तथा शांतिकरण के मन्त्रों से परमेश्वर की आराधना करें।

तत्पश्चात् अग्न्याधान आदि क्रिया करके सामान्य प्रकरण कर चुकने पर दैनिक हवन करें और फिर नीचे लिखे मन्त्रों से विशेष आहुतियां दें और मन्त्रों के

भावार्थ भी सुना दें ।

१. तिथि

२. तिथि के देवता की

३. नक्षत्र

४. नक्षत्र के देवता की—आहुति दें ।

तिथि तथा नक्षत्रों के देवता की सूची नीचे दी जा रही हैं—

महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज ने जो नाम-करण संस्कार में यह चार आहुतियां देना लिखा है, क्यों ? आज तक किसी आर्य विद्वान् ने इस पर प्रकाश नहीं डाला । मेरा अनुमान है और कुछ कुछ अनुभव भी बताता है कि जिस नक्षत्र और तिथि से बालक का जन्म होता है, उस नक्षत्र और तिथि के देवता के गुण बीज रूप से उस बालक में होते हैं । उनको विकसित करना माता-पिता और आचार्य का काम है । अतः यह चार आहुतियां जन्म दिवस पर अवश्य दी जानी चाहिये ताकि बालक को अपने अन्दर में विद्यमान रहने वाले गुणों का एक बार पुनः स्मरण हो जाए और अगामी वर्ष के लिए उनके विकसित करने का परिश्रम कर सकें ।

तिथि तथा तिथि के देवता के नाम तथा अन्त में चतुर्थी विभक्ति में स्वाहा कैसे लगाया जाए, यह यज्ञ कर्त्ताओं की सुविधा के लिए नीचे दिए जा रहे हैं :—

[सम्पादक]

तिथि	चतुर्थी विभक्ति	देवता	चतुर्थी विभक्ति
१. प्रथमा	प्रतिपदे	ब्रह्मन्	ब्रह्मणे
२. द्वितीया	द्वितीयायै	त्वष्टृ	त्वष्ट्रे
३. तृतीया	तृतीयायै	विष्णु	विष्णवे
४. चतुर्थी	चतुर्थ्यै	यम	यमाय
५. पंचमी	पंचम्यै	सोम	सोमाय
६. षष्ठी	षष्ठयै	कुमार	कुमारा
७. सप्तमी	सप्तम्ये	मुनि	मुनये
८. अष्टमी	अष्टम्यै	वसु	वसवेय
९. नवमी	नवम्यै	शिव	शिवाय
१०. दशमी	दशम्यै	धर्म	धर्माय
११. एकादशी	एकादश्यै	रुद्र	रुद्राय
१२. द्वादशी	द्वादश्यै	वायु	वायवे
१३. त्रयोदशी	त्रयोदश्यै	काम	कामाय
१४. चतुर्दशी	चतुर्दश्यै	अनन्त	अनन्ताय
१५. पूर्णिमा	पूर्णिमायै	विश्वेदेव	विश्वेदेवेभ्यः
३०. अमावस	अमायै	पितर	पितृभ्यः

इसी प्रकार नक्षत्रों और उनके देवताओं का प्रयोग बताया जा रहा है :—

नक्षत्र	चतुर्थी विभक्ति	देवता	चतुर्थी विभक्ति
अश्विनी	अश्विन्यै	अश्वी	अश्विभ्याम्
भरणी	भरण्यै	यम	यमाय
कृत्तिका	कृतिकायै	अग्नि	अग्नये
रोहिणी	रोहण्यै	प्रजापति	प्रजापतये
मृगशीर्ष	मृगशीर्षाय	सोम	सोमाय
आर्द्रा	आर्द्रायै	रुद्र	रुद्राय
पुनर्वसु	पुनर्वसवे	अदिति	अदितये
पुष्य	पुष्याय	बृहस्पति	बृहस्पतये
आश्लेषा	आश्लेषायै	सर्प	सर्पाय
मघा	मघायै	पितृ	पित्रै
पूर्वाफाल्गुनी	पूर्वाफाल्गुन्यै	भग	भगाय
उत्तराफाल्गुनी	उत्तराफाल्गुन्यै	अर्यमन्	अर्यम्णे
हस्त	हस्ताय	सवितृ	सवित्रे
चित्रा	चित्राय	त्वष्टृ	त्वष्ट्रे
स्वाति	स्वात्यै	वायु	वायवे
विशाखा	विशाखायै	इन्द्राग्नी	इन्द्राग्निभ्याम्
अनुराधा	अनुराधायै	मित्र	मित्राय

ज्येष्ठा	ज्येष्ठायै	इन्द्र	इन्द्राय
मूल	मूलाय	निर्ऋति	निर्ऋत्यै
पूर्वाषाढ़ा	पूर्वाषाढ़ायै	अप्	अद्भ्यः
उत्तराषाढ़ा	उत्तराषाढ़ायै	विश्वेदेव	विश्वेदेवेभ्यः
श्रवण	श्रवणाय	विष्णु	विष्णवे
घनिष्ठा	धनिष्ठायै	वसु	वसवे
शतभिषज्	शतभिषजे	वरुण	वरुणाय
पूर्वाभाद्रपदा	पूर्वाभाद्रपदायै	अजपात्	अजपदे
उत्तराभाद्रपदा	उत्तराभाद्रपदयै	अहिर्बुध्न्य	अहिर्बुध्न्यायै
रेवती	रेवत्यै	पूषा	पूषायै

तिथि देवताः—(१) ब्रह्मन् (२) त्वष्टृ (३) विष्णु (४) यम (५) सोम (६) कुमार (७) मुनि (८) वसु (९) शिव (१०) धर्म (११) रुद्र (१२) वायु (१३) काम (१४) अनन्त (१५) विश्वदेव (१६) पितर

नक्षत्र देवताः—अश्विनी-अश्वी। भरणी-यम। कृतिका-अग्नि। रोहिणी-प्रजापति। मृगशीर्ष-सोम। आर्द्रा-रुद्र। पुनर्वसु-अदिति। पुष्य-बृहस्पति। आश्लेषा-सर्प। मघा-पितृ। पूर्वाफाल्गुनी-भग। उत्तराफाल्गुनी-अर्यमन्। हस्त-सवितृ। चित्रा-त्वष्टृ। स्वाति-वायु।

विशाखा–इन्द्राग्नी । अनुराधा–मित्र । ज्येष्ठा–इन्द्र । मूलनिर्ऋति । पूर्वाषाढ़ा–अप् । उत्तराषाढ़–विश्वेदेव । श्रवरण–विष्णु । धनिष्ठा–वसु । शतभिषज्–वरुण । पूर्वाभाद्रपदा–अजपाद । उतराभाद्रपदा–अहिर्बुध्न्य । रेवती–पूषन् ।

इसके बाद— निम्न मन्त्रों से आहुतियां दें ।

५–ओं उप प्रियं पनिप्नतं युवानमाहुतिवृधम् ।
अगन्म बिभ्रतो नमो दीर्घमायुः कृणोतु मे ।।

अ० ७–३२–१

भावार्थ–हे प्रिय प्रशंसनीय प्रभो ! मेरी दीर्घ आयु करो । जिस प्रकार आज मैं आहुति द्वारा इस यज्ञ की अग्नि को वढ़ा रहा हूँ वैसे ही मैं सात्विक अन्न भक्षरण करके जठराग्नि को तीव् करता हुआ युवा बनुं और अपने जन्म –दिन निरन्तर मनाता रहूं, इससे मेरा वियोग कभी न हो ।

अर्थ कविता में

काबिले तारीफ प्यारे ईश्वर !
तेरे गुण गाता रहूँ मैं उमर भर !!
उमर भी लम्बी करो परमात्मा !
मैं सदा बन कर रहूँ धर्मात्मा ।

अन्न सादा हो जो मैं सेवन करूं !
तेरी कृपा से सदा आगे बढ़ूं ।
यज्ञ करके गीत गाऊं हर बरस ॥
जन्म-दिन अपना मनाऊं हर बरस ॥

विद्वानों का आशीर्वाद—

६—ओं आयुरस्मै धेहि जातवेदः प्रजां त्वष्टरधि निधेह्यस्मै । रायस्पोषं सवितरासुवास्मै शतं जीवाति शरदस्तवायम् ॥

अ० २–२८–२

भावार्थ—हे समस्त पदार्थों के ज्ञाता तथा सर्वव्यापक परमात्मन् ! इस यजमान को दीर्घायु प्रदान करो । हे समस्त शरीरों की रचना करनेहारे परमात्मन इस कुमार के शरीर में सन्तति उत्पन्न करने का विशेष सामर्थ्य स्थापित करो । हे सर्वोत्पादक तथा सर्वप्रेरक प्रभो ! इसको धन जीवन और देह का पालन पोषण सामर्थ्य प्रदान करो । यह कुमार (यजमान) सौ वर्ष तक जीवे ।

अर्थ कविता में—

हे प्रभु ! तू सर्वशक्तिमान है ।
तेरा हरज़ा हर तरफ़ को ध्यान है ॥

जिन्दगी भी आप ने प्रदान की।
उम्र लम्बी हो मेरे यजमान की ॥
खूब बलशाली हो और धनवान हो।
नेक दिल और नेक खू इन्सान हो ॥
यह दुआ है आप से परवरदिगार।
सौ बरस जीता रहे प्यारा कुमार (दुलार) ॥

७. ओ३म् शतं जीव शरदो वर्धमानः शतं हेमन्ताञ्छतमु वसन्तान् । शतमिन्द्राग्नी सविता बृहस्पतिश्शतायुषा हविषेमं पुनर्दुः ॥ ऋ० १०-१६१-४

भावार्थ—हे मनुष्य ! तू बढ़ता हुआ सौ वर्ष तक जीवन धारण कर। सौ हेमन्त और वसन्तों तक जी। इन्द्र विद्युत चिकित्सा, अग्नि चिकित्सा, सूर्य किरण चिकित्सा, बृहस्पति-मानस चिकित्सा तथा हवन चिकित्सा इनका योग्य रीति से सेवन करने पर अवश्य दीर्घायु प्राप्त होती है।

अर्थ कविता में

हे मनुष्य वढ़ता हुआ सौ वर्ष जी,
स्वस्थ रह संसार में सहर्ष जी।
अपनी आंखों से वहारें देख सौ,
और ईश्वर से लगा तू अपनी लौ ॥

चांद तारों, सूर्य के प्रकाश से।
बृहस्पति से हवन से, आकाश से॥
ठीक ढङ्ग से लाभ इनसे तू उठा।
अपनी देही को तू रोगों से बचा॥

८. ओं सं मा सिञ्चन्तु मरुतः सं पूषा सं बृहस्पतिः। सं मायमग्नि सिञ्चन्तु प्रजया च धनेन च दीर्घमायुः कृणोतु मे। अ० ७-३३-१

भावार्थ—(मरुतः) प्राण, अपान, व्यान, समान, उदान आदि शरीरव्यापी मरुद्गण और शुद्ध वायुगण, पुष्टिकारक मन और सूर्य, बृहस्पति परमात्मा और यह यज्ञाग्नि अथवा जठराग्नि मुझे प्रजा से धन से भली प्रकार सींचें और आयु को लम्बा करे, बढ़ावें।

अर्थ कविता में

शुद्ध, पवनें सूर्य मन और बृहस्पति।
लाभदायक होवे, अग्नि यज्ञ की॥
धान्य से, प्रजा से, अच्छे ढ़गं से।
सींचे जीवन को मेरे हर रगं से॥
उम्र मेरी बढ़ावें यह सभी॥
मेरे ज़ीवन को बनावें यह सभी।

९. ओं तनूस्तन्वा मे सहे दतः सर्वमायुरशीय।
स्योनं मे सीद पुरुः पृणस्व पवमानः स्वर्गे॥
अ० १९-६१-१

भावार्थ—हे परमेश्वर ! शरीर, मेरे शरीर व्यापी बल के साथ रहे। इस शरीर से ही मैं सम्पूर्ण आयु का भोग करूं। हे ईश्वर ! तू मेरे शरीर को सुखपूर्वक रख। हे परमेश्वर ! हे सबको पूर्ण करने वाले प्रभु ! तू पवित्र करता हुआ स्वर्गसुखमय लोक में पूर्ण व पालन कर।

अर्थ कविता में

बलयुक्त सदा भगवान् ! मेरा शरीर हो।
सम्पुष्टि भोगदातृ, मेरी तकदीर हो॥
सम्पूर्ण आयु का उपभोग मैं करूं।
स्वच्छ निर्मल मन और नीरोग मैं रहूँ॥
पवित्र स्वरूप ! पवित्रता प्रदान कर।
उपकारों को तेरे भूलूं न मैं उमर भर॥

१०. ओं जीवा स्थ जीव्यासं सर्वमायुर्जीव्यासम् ॥१॥

२३. ओं उपजीवा स्थोपजीव्यासम् सर्वमायुर्जीव्यासम् ॥२॥

१२ ओं सञ्जीवा स्थ सं जीव्यासं सर्वमायुर्जी-व्यासम् ॥३॥

१३ ओं जीवला स्थ जीव्यासं सर्वमायुर्जी-व्यासम् ॥ अ० १९-६९-१ से ४ ॥

भावार्थ—हे जलों के समान आप्त जनो ! आप जीवन अर्थात् प्राण धारण करने में समर्थ हो, जीवन को और भी अधिक बढ़ाने में समर्थ हो ! मैं और भी अधिक जीवन धारण करूं । आप भली प्रकार जीवन-प्रद हो, मैं उत्तम रीति से जीवन धारण करूं । तुम जीवन तत्व को प्राप्त करा देने वाले हो, मैं जीता रहूँ और सम्पूर्ण आयु जीवित रहूं ! ॥ १ से ४ ॥

अर्थ कविता में

दो मुझे, ऐ आप्त जन आशीर्वाद ।
दीर्घ आयु हो मेरी न हो विषाद ॥
बख्श वह जीवन, कि मैं ऊंचा रहूं ।
ऐसा जीवन विश्व में धारण करूं ॥

१४ ओं इन्द्र जीव सूर्य जीव देवा जीवा जीव्या-समहम् । सर्वमायुर्जीव्यासम् ॥ अ६ १९-७०-१

भावार्थ— हे ऐश्वर्यवान् परमेश्वर ! तू हमें जीवन धारण करा । हे सूर्य ! और हे देवगण !

पृथिवी अग्नि विद्युत् आदि पदार्थो !. आप सब भी मुझे जीवन प्रदान करो। मैं जीता रहूँ और सम्पूर्ण आयु भर जीवन धारण करूं।

अर्थ कविता में

ऐ मेरे जगदीश्वर ऐश्वर्यवान् ।
मुझको तुम ऐसा करो जीवन प्रदान ।।
यह प्रकृति के नजारों से कहूँ ।
आयु भर सम्पूर्ण जीवन से जीऊं ।।

१५ ओं आयुषायु:कृतां जीवायुष्मान् जीव मा मृथाः।
प्राणेनात्मन्वतां जीव मा मृत्योरुद्गा वशम् ।।

अ० १९-२७-८

भावार्थ— अपने जन्म-दिवस मनाते हुए मन में यह दृढ़ संकल्प करें कि मैंने अल्प मृत्यु के वश में नहीं होना। पुरुषार्थी तथा आत्मिक बलधारी अध्यात्मनिष्ठ सत्पुरुषों के समान अपनी आयु को पुरुषार्थ द्वारा दीर्घ करता हुआ आयु की समाप्ति पर्यन्त सत्कर्म करता हुआ मैं आनन्द से रहूंगा और प्रशस्त यशस्वी बनूंगा।

अर्थ कविता में

शान से अपना मनाऊं जन्म दिन ।
ध्यान से अपना मनाऊं जन्म दिन ।।

जो इरादे हों मेरे मजबूत हों।
और अटल चगें भले मजबूत हों॥
मौत गर बेवक्त आए मत डरूं।
अपने ही पुरुषार्थ से जीता रहूँ॥
नेक कामों में बिता उम्र तमाम।
विश्व में कर जाऊं अपना, नेक नाम॥

१६ ओं सत्यामाशिषं कृणुता वयोधै,
कीरिं चिद्धयवथ स्वेभिरेवैः।
पश्चा मृधो अप भवन्तु विश्वा-
स्तद् रोदसी शृणुतं विश्वमिन्वे॥ अ० २०-९१-११

भावार्थ— हे विद्वान् पुरुषो! आप लोग दीर्घायु के धारण करने के निमित्त सत्य, यथार्थ आशीर्वाद प्रदान करो। आप लोग अपने ज्ञानों द्वारा, अपने स्तुति कर्ता भक्त, प्रेमी की सदा रक्षा करते हैं। समस्त हिंसा-जनक दुःखदायिनी विपत्तियां पीछे बहुत दूर हो जायें। हे देवियो और भद्रपुरुषो! आप मुझे वेद वचनों द्वारा शुभ शिक्षा दो।

अर्थ कविता में

आज विद्वानो! मुझे आशीश दो,
मेरी झोली ज्ञान पुष्पों से भरो।

भद्र पुरुषो ! भक्त जन और देवियो,
वेद वचनों से भी तुम आशीश दो।
ताकि कोई दुःख न आये मेरे समीप,
सौ बरस तक हो मुझे जीना नसीब ॥

१८ ओं समास्त्वाग्न ऋतवो वर्धयन्तु संवत्सरा ऋषयो यानि सत्या। स दिव्येन दीदिहि रोचनेन विश्वा आभाहि प्रदिशश्चतस्रः। अ० २-६-१ ॥यजु. २७-१

भावार्थ—हे (अग्ने) जीवात्मन् ! (समाः) चान्द्र वर्ष (ऋतवः) ऋतुयें और (संवत्सराः) संवत्सर या सौर वर्ष (ऋषयः) मन्त्रद्रष्टा ऋषिगण और (यानि) जो (सत्या) सत्य ज्ञानमय वेद मन्त्र हैं ये भी (त्वा) तुझ को (वर्धयन्तु) बढ़ावें, तू (दिव्येन) दिव्य, ज्ञानमय (रोचनेन) सब को प्रकाशित करने हारे तेज से (दीदिहि) प्रकाशित हो और सूर्य के समान (विश्वाः) समस्त (चतस्रः) चारों दिशायें और (प्रदिशः) चारों उपदिशायें भी (आभाहि) प्रकाशित कर। [पं० जयदेव]

अर्थ कविता में

चन्द्र वर्ष सम्वतसर और मन्त्र द्रष्टा ऋषि ।
वेद माता और ऋतु, तुझको बढ़ावें यह सभी

ईश के प्रताप से सदा बढ़े यजमान ।
सूर्य सम प्रकाश से सर्वत्र हो उसका मान ॥

तत्पश्चात् गायत्री मन्त्र की न्यून से न्यून उतनी आहुति अवश्य दें जितनी आयु बीत चुकी हो और अधिक से अधिक उतनी माला की आहुति दें। यह आहुतियाँ गिलोय के छोटे-२ टुकड़े (आध इंच जितने लम्बे) दूध में भिगो कर इस भावना सहित दे कि भगवन्! मैं अकाल मृत्यु का ग्रास न बनू ।

तदुपरान्त समस्त उपस्थित नर नारी निम्न शब्दों से यजमान को आशीर्वाद दें।

ओं आयुरस्मै धेहि जातवेदः प्रजा त्वष्टरधि निधेह्यस्मै।
रायस्पोषं सवितरासुवास्मै शतं जीवाति शरदस्तवायम् ॥
अ० २-२९-२

हे—त्वं जीव शरदः शतं वर्धमानः ।
आयुष्मान् वर्चस्वी तेजस्वी श्रीमान् भूयाः ॥

प्रार्थना

ओं नमस्ते हरसे शोचिषे नमस्ते अस्त्वर्चिषे।
अन्याँस्ते अस्मत्तपन्तु हेतयः पावकोऽस्मभ्यं शिवो भव
यजु० ३६-२०

हे परम पवित्र पतित पावन प्रभु ! हे सर्व दुःख विनाशक प्रकाश स्वरूप आप को हमारा नमस्कार हो, श्रद्धा, प्रेम और भक्ति से भरा नमस्कार हो। यह जो कुछ कृत्य हम यज्ञ रूप में कर पाये हैं केवल और केवल आपकी पवित्र प्रेरणा, आशीर्वाद और कृपा से कर पाये है, हमारी अनभिज्ञता तथा विवशता के कारण अनेकों प्रकार की कमियां इसके अन्दर रही होंगी, परन्तु भगवन् जीवनोद्धार तथा सफलता की जिस पवित्र भावना से प्रेरित हो कर यह जन्म दिवस मनाने के उपलक्ष्य में किया है, वह भावना हमारी आपकी कृपा से पूर्ण हो पावे, ताकि मानव जीवन को उत्तरोत्तर सफल तथा समुन्नत बनाते हुए हम प्रति बर्ष इस प्रकार अपने जीवन की गतिविधि की पड़ताल तथा सुधार करते हुए अग्रसर हो सकें और तेरी पवित्र आशीर्वाद के सदा पात्र बने रहें।

अतः आपकी वज्र समान अमिट व्यवस्था हमारे अन्याई दुःखदाई शत्रुओं को सन्मार्ग पर लाकर आप तथा सर्व प्राणी हमारे लिए कल्याणकारी हों। हम निर्भय होकर विचरें और संसार में यशस्वी जीवन बिताते हुए आप की दया, कृपा तथा भक्ति के भाजन बन सकें।

हमारा किया कराया काम सब प्रकार से आप स्वीकार करें और बेड़ा पार करें। ओ३म् शम्

भजन बधाई

यह शुभ दिन आज का आना बधाई हो, बधाई हो !
(रखा है नाम बालक का बधाई हो)……
जन्म-दिन का मनाना भी ॥ बधाई हो……
है जैसा नाम बालक का प्रभु दे इसको गुण वैसे।
बने यह जग में गुणशाली ॥ बधाई हो…… १
सुखी माता पिता इसके सदा देखें सुखी इसको।
हो लम्बी आयु बालक की ॥ बधाई हो……
पिता माता गुरु आज्ञा-धरे सिर पर हमेशा यह।
करे यह कुल को उजियारा ॥ बधाई हो …… ३
प्रभु मेरे करो स्वीकार अब हम सबकी विनती को !
करे यह देश की सेवा ॥ बधाई हो……
यह शुभ दिन आज का आना बधाई हो…… ४

जन्म दिवस सम्बन्धी श्री ओ३म् प्रकाश जी आर्य की कविता गायन करने के योग्य है।

भजन

प्रभु ऐसी कृपा कीजो, मैं दीर्घ जीवन को पाऊं।
सत्कर्मों में नित रत हो, मैं कर्मवीर कहलाऊं।१

मानवता को फैलाऊं, दानवता को दूर भगाऊं ।
दे सत्य ज्ञान की शिक्षा, इक प्रेम की गगां बहाऊं । १
जीवन में संयम लाकर, अनाचार हटाकर।
मैं सदाचार फैलाकर, जीवन को सफल बनाऊं । ३
करके दूर सब अविद्या, मैं सदा पसारूं विद्या ।
ले वेद ज्ञान की ज्योति, जग में प्रकाश फैलाऊं ।
मेरे मन के मन्दिर, आवास हो तेरा प्रभुवर ।
कर जोड़ पिता तुझ से मैं, वरदान यही इक चाहूं । ५
मैं दीर्घ जीवन को पाऊं, नित्य स्व जन्म दिन मनाऊं

२—वाग्दान (सगाई)

विधि—जिस समय लड़के की आयु न्यून से न्यून २५ वर्ष की हो और लड़की की १६ और दोनों पक्ष के माता-पिता लड़के लड़की का सम्बन्ध (नाता) जोड़ना चाहें और शगुन के रूप में वधू पक्ष वाले वर पक्ष वाले को लोकाचार के अनुसार कुछ भेंट करना चाहें तो सर्वप्रथम ईश्वर स्तुति प्रार्थनोपासना स्वस्तिवाचन तथा शांतिकरण आदि के पश्चात् सामान्यप्रकरण की पूरी क्रिया करके दैनिक प्रातः अथवा सांयकालीन आहुतियों के पश्चात् निम्न वेद मन्त्रों की आहुतियां दी जावें ।

ब्रह्मचारी बोले—

ओं भगमस्या वर्च आदिष्यधि वृक्षादिव स्रजम् ।
महाबुध्न इव पर्वतो ज्योक् पितृष्वास्ताम् !!

अ० १-१४-१

भावार्थ—इस मन्त्र के द्वारा ब्रह्मचारी वर की ओर से प्रस्ताव किया जा रहा है कि जिस प्रकार वृक्ष से फूल लेकर गले की माला बनाई जाती है उसी प्रकार समावर्तन संस्कार के अनन्तर गुरुगृह से आये हुए विवाहेच्छुक ब्रह्मचारी वर की ओर से वधू पक्ष को आश्वासन दिलाया जाता है कि इस वधू के ज्ञान आदि सद्गुण तथा तेज को ब्रह्मचारी स्वीकार करता है और यह वधू अपने नूतन माता पिता आदि पूज्यों के बीच बड़े मूल वाले पर्वत, चट्टान के समान स्थिर रहे ।

कन्या का पिता बोले—

२—ओं एषा ते राजन् कन्या वधूर्नि धयूतां यम ।
सा मातुर्बध्यतां गृहेऽथो भ्रातुरथो पितुः ॥

अ० १-१४-२

भावार्थ— कन्या का पिता वरपक्ष को अथवा वर को उत्तर देता है कि हे यम ! यम नियम के पालन कर्त्ता ब्रह्मचारिन् ! हे ज्ञान और ब्रह्मवर्चस् तेज से

प्रकाशमान् नर ! यह कन्या तेरी वधू रूप होकर गृहस्थ का आनन्द उपभोग करे। यह कन्या नई माता अर्थात् सास और नए पिता अर्थात् ससुर के गृह बन्धन में संयुक्त रहे।

३–ओं एषा ते कुलपा राजन् तामु ते परि दद्मसि।
ज्योक् पितृष्वासाता आ शीर्ष्णः समोप्यात्॥

अ० १-१४-३

भावार्थ—कन्या का पिता फिर कहता है—हे प्रकाशमान वर ! यह कन्या तेरे कुल का पालन करने हारी हो, इसलिए इसको हम तेरे लिए प्रदान करते हैं। यह कन्या निरन्तर सास ससुर आदि पितरों के मध्य में स्थित रहे और सुविचार से इन पितरों में शांति और कल्याण के बीज बोवे।

४–ओं असितस्य ते ब्रह्मणा कश्यपस्य गयस्य च।
अन्तःकोशमिव जामयोऽपि नह्यामि ते भगम्॥

अ० १-१४-४

भावार्थ—बन्धन रहित सर्वद्रष्टा सर्वाश्रय तथा प्राणस्वरूप प्रभु के वेद ज्ञान द्वारा तेरे ज्ञान, ऐश्वर्य, धर्म आदि सद्गुणों को ऐसे तुझ में स्थिर रूप से बांधता

हूँ जैसे स्त्रियां छिपे खजाने की रक्षा करती हैं अर्थात् जिस प्रकार कोष को तिजोरी में बन्द करके सुरक्षित किया जाता है इसी प्रकार स्त्रियों का सौभाग्य सुरक्षित रहे ।

५—ओं आ नो अग्ने सुमतिं संभलो
गमेदिमां कुमारीं सह नो भगेन ।
जुष्टा वरेषु समनेषु वल्गुरोष
पत्या सौभगमस्त्वस्यै ॥ अ० २-३६-१

भावार्थ—हे अग्ने ! परमात्मन् ! उत्तम रीति से आदान करने हारा योग्य पात्र हमारे पास आवे । और इस उत्तम ज्ञान वाली, उत्तम मति वाली, नव यौवना कुमारी कन्या को ऐश्वर्यमय धन और सौभाग्य के साथ आकर स्वीकार करे और वह कन्या समान चित्त वाले उत्तम पति के संग मधुर प्रवचन आलाप करे, इस कन्या को सहवास रूप सौभाग्य प्राप्त हो ।

इस मन्त्र में कन्या के पिता ने कन्या के सौभाग्य की कामना की है ।

६—ओं सोमो वधूयुरभवदश्विनास्तमुभा वरा ।
सूर्यां यत् पत्ये शंसन्तीं मनसा सवितादात् ॥
अ० १४-१-९ ॥

भावार्थ—जब वीर्यवान पुरुष वधू की कामना से युक्त होवे, तब स्त्री और पुरुष परस्पर एक दूसरे का वरण करने वाले होवें और जब दोनों की अभिलाषा पूरी तरह हो तब पति की अभिलाषा करने वाली कन्या को उसका उत्पादक पिता अपने मनःसंकल्प द्वारा दान करे, पति के हाथ सौंप दें।

७-ओं इदं हिरण्यं गुल्गुल्वयमौक्षो अथो भगः।
एते पतिभ्यस्त्वामदुः प्रतिकामाय वेत्तवे ॥

अ० २-३६-७

भावार्थ—हे कुमारी यह स्वर्णमय अंगूठी या स्वर्णमुद्रा, यह गूगल का सुगन्धित द्रव्य, यह दूध का बना पदार्थ और यह सौभाग्य सूचक कुंकुम आदि द्रव्य ये सब मान्यपति के पक्ष के लोगों की ओर से तुझ से प्रेम दर्शाते हुये अपने प्रियतम के हाथ उसे प्राप्त करने के लिए तुझ को प्रदान करते हैं।

प्रार्थना

ओं कयानश्चित्र आभुवदूती सदावृधः सखा।
कयाशचिष्ठया वृता ॥ अ० ४-३१-१

हे महान् प्रभु, आपकी इस अद्भुत सृष्टि में आश्चर्यजनक दृश्य दिखाई देते हैं। आप सदैव हमारे

कल्याण के लिये शुभ और मगंल अवसर प्रदान करते है। आप ने सृष्टि के आरम्भ में ही स्त्री पुरुष का जोड़ा उत्पन्न किया और परम्परा से नर नारी का मिलाप उस पवित्र शुभ समय की याद दिलाता है। आपकी रक्षा के साधन अद्भुत हैं। आप से सर्वश्रेष्ठ बनने की मगंल कामना करते हैं। हमारी यह शुभकामना आप ही पूर्ण करें और नव प्रस्तावित जोड़े (यहाँ जोड़े के गोत्र, वंशावली का पितामह तक नाम ले) को आशीर्वाद दें कि जिससे उनका यह पवित्र सम्बन्ध सब प्रकार से उनको सुखदाई सिद्ध हो। हे प्रभो यही हम सब नर नारियों की इस समय प्रार्थना है, कृपया स्वीकार करो, सबका बेड़ा पार करो।

वाग्दान (सगाई) के समय का गीत

१ ब्रह्मचारी ! आज तू पहचान ले,
इस वधू, से तेज, सद्गुण ज्ञान ले।

२ यह वधू, घर में नए मां बाप के,
पर्वत और चट्टान की भांति रहे।

३ ब्रह्मचारी, तेजोमय, प्रकाशवान्,
हो यह कन्या भी वर सी ज्ञानवान्।

४ गृहस्थ का आनन्द यह लेती रहे,
सास ससुर की सदा सेवा करे।
५ तेरे कुल के जान ले रस्मो रिवाज,
तेरे कुल की हो सदा यह शर्म लाज।
६ इसलिए हम करते हैं कन्या का दान,
शुद्ध भावों से बढ़ाये तेरा मान।
७ हे प्रभु ! सौभाग्य स्त्रियों का सदा,
हो सुरक्षित धर्म, सद्गुण से भरा।
८ वेद रीति से हमारा योग्य पात्र,
कन्या ले जाए दुलारा योग्य पात्र।
९ मीठे वचनों से करे स्वागत वधू,
सहवास रूप सौभाग्य हासिल हो वधू।
१० यह विनय है मेरी दीनानाथ से,
कर रहा हूं दान, मन और हाथ से।
११ वर वधू का जोड़ा यह सदा खुशहाल हो,
इनका रौशन विश्व में इकबाल हो।
१२ आपकी रक्षा के हैं साधन अजीब,
आपकी कृपा के हैं साधन अजीब।
१३ यह हमारी कामना है, ऐ पिता,
इनका सम्बन्ध होवे सुखदाई सदा।

१४ यह मेरी प्रार्थना स्वीकार हो,

ताकि भवसागर से बेड़ा पार हो॥

गीत

सदा खुशी हो सदा हो मंगल,

सदा हो उत्सव यह शादियाना।

सदा हो स्वस्ति सदा हो शांति,

सदा सफल हो यह यज्ञ रचाना।

सदा हो कीर्ति, सदा हो लक्ष्मी,

हों बाल वृद्ध और नौजवाना।

सदा हो तुष्टि सदा हो पुष्टि,

सदा हो पराक्रम और बल बढ़ाना।

सदा हो आपस में प्रेम प्रीति,

दो कुलों का परस्पर मिल जाना।

* ओ३म् *

३-मिलनी

बारात के वर के गृह से प्रस्थान करने से पूर्व और वधूगृह तक पहूँचने से पूर्व वर और वधूगृह में जो कृत्य उचित है. वह सब संस्कार विधि में महर्षि ने स्पष्ट रूप से लिख दिया ,परन्तु जब बारात वधूगृह पर पहूँच जाए उसके सम्बन्ध में केवलमात्र यह शब्द लिखे कि "तत्पश्चात् कन्या के और वर पक्ष के पुरुष बड़े सम्मान से वर को घर ले जावें ।" बारात के वधूगृह पर पहूंचने के समय भिन्न भिन्न प्रकार थोड़े-थोड़े भेद के साथ स्वागत करने की रीतियां प्रचलित है जिन को मिलनी का नाम दिया जाता है । आर्यों में मिलनी का रिवाज एकसा ही होना चाहिए, इसी में शोभा है । यद्यपि मिलनी की मोटी-२ बातें एक समान हैं परन्तु आजकल आडम्बर बढ़ता जा रहा हैं, यहां तक कि "सेहरा" पढ़ने की प्रथा बहुत फैल गई है और सेहरा पढ़ने वाले को इतनी भेंट चढ़ाई जाती है कि ऋत्विज की दक्षिणा उसके मुकाबले में शून्य के

बराबर ही प्रतीत होती है। विवाह का मुख्य अंग तो पद्धति है, उसको नजर अन्दाज नहीं करना चाहिए। यह तो संस्कार का अपमान ही है।

जिस समय बारात वधूगृह के पास पहूंचे तो वधू पक्ष के लोग दो पंक्तियों में खड़े होकर वर का स्वागत करें। वर अपने बरातियों के साथ वधूगृह के सामने वधू पक्ष के लोगों से कुछ अन्तर पर ठहर जाए और सब बाजे आदि बन्द करके दोनों पक्षों के लोग श्रद्धा प्रेम से ईश्वर स्तुति प्रार्थनोपासना के आठ मन्त्र मधुर स्वर से मिलकर उच्चारण करें और निम्न वेद मन्त्र का पाठ तथा भावार्थ सुनाने के बाद वधू पक्ष के लोग अन्त में लिखे गीत के गान द्वारा वर तथा बरातियों का स्वागत करें।

ओं आगच्छत आगतस्य नाम गृह्णाम्यायतः।
इन्द्रस्य वृत्रघ्नो वन्वे वासवस्य शतक्रतोः॥

अ० ६-८२-१

भावार्थ—विवाह करने वाले वर का स्वागत करते हुए कहते हैं—हे विद्वान् योग्य पुरुषो! कन्या को प्राप्त करने के लिए द्वार पर आये हुए वर के नाम

को (यहां वर का नाम उच्चारण करें) मैं (वधू का पिता) लेता हूँ स्पष्ट रूप से सब के सामने उच्चारण करता हूँ जिससे आप सब को विदित हो जाये की उत्तम बुद्धिमान क्रियाशील तथा यशस्वी वर इस के साथ मैं अपनी कन्या का विवाह करने लगा हूँ। मैं वर का और आप सब का अपनी बिरादरी सहित स्वागत करता हूँ।

ओ३म् यस्तेऽकंुशो वसुदानो बृहन्निन्द्र हिरण्ययः।
तेना जनीयते जायां मह्यं धेहि शचीपते ॥

ऋ० ३-८२-३

भावार्थ—हे परमात्मन्! जो तेरा अंकुश, शासन, बहुत धन वितरण करने वाला सुवर्णमय बहुत बड़ा है, हे समस्त शक्तियों के स्वामिन्! उसी अंकुश या शासन से पुत्रोत्पादन करने योग्य पत्नी की कामना करने वाले मुझे जाया, स्त्री को प्रदान कर।

अन्त में सब उपस्थित नर नारी तीन बार 'ओ३म् स्वस्ति' का उच्चारण करें।

* गीत बरात का स्वागत *

मेरी कुटिया में था जिस का इन्तजार।
हो बधाई आ गया वह ताजदार ॥

खिल उठा है गुञ्चा-गुञ्चा बाग का।
आई है किस शान से सुन्दर बहार॥

(वधू पक्ष के मिलके गाते हैं)

तशरीफ लाने वालो ! बन-ठन के आने वालो।
आंखों का नूर हो तुम ! दिल का सरूर हो तुम।
अन्दाज यह तुम्हारा ! लगता है प्यारा-प्यारा।
हर इक अदा निराली ! दिल को लुभाने वाली।
किसने मिलाई आखें ! दिल में समाई आंखें।
आंखों को भाई आंखें ! हमने बिछाई आंखें।
रेशम का तार बनकर ! फूलों का हार बनकर।
करते हैं बा अकीदत ! बारात का स्वागत।

गीत सबके गाने योग्य

सज्जना दे दर्शन करके असी निहाल होये।
मिलनी दे चाव अन्दर सारे खुशहाल होये।
धन्य धन्य हैं भाग्य हमारे, मिल गये हैं सज्जन प्यारे।
प्यारा शुभ अवसर आया, सबसे मिल मंगल गाया।
ईश्वर ने मेल मिलाया, दर्शन कमाल होये।
बेला है मंगलकारी, खुश हैं सब नर नारी।
मिलनी शुभ प्यारी-प्यारी सज्जन कृपाल होये।

आशायें पूरी होईं, प्रसन्न है हर कोई।
दर्शन परस्पर करके, खुश वृद्ध बाल होये।

प्रार्थना

हे मंगलमय भगवान्! आपकी महती कृपा से यह शुभ अवसर आज हमें प्राप्त हुआ है। इन दो कुलों का संगम कितना ही आह्लादकारक है, प्रत्येक नरनारी आज खुशी से फूला नहीं समाता। ऐसी कृपा कर और आशीर्वाद दें कि जिससे हम सब प्रेम रज्जु से ऐसे बन्धे रहें, जिस प्रकार माला के मनके एक सूत्र में पिरोये जाकर बन्धे रहते हैं। तेरी दया और कृपा से यह वर वधु परस्पर विश्वास तथा प्रेम से सम्बद्ध होकर अपने गृहस्थ को सफल तथा सुखधाम बना सकें।

व्यापार सूत्र पद्धति

जब कोई दुकान अथवा कारखाना खोलना हो अथवा कोई व्यापार सम्बन्धी नया कार्य करना हो तो निम्न विधि अनुसार कार्य आरम्भ करें।

विधि

प्रातःकाल शुभदिन प्रसन्नचित्त हो ईश्वर स्तुति प्रार्थनोपासना, स्वस्तिवाचन तथा शान्तिकरण के पश्चात्

विधिवत् अग्न्याधान कर सामान्य प्रकरण की कार्यवाही करें। तत्पश्चात् निम्न आहुतियां दें।

१. ओं इन्द्रमहं वणिजं चोदयामि नन ऐतु पुर एता नो अस्तु। नुदन्नरातिं परिपन्थिनं मृगं स ईशानो धनदा अस्तु मह्यम् ॥

भा०—मैं व्यापार व्यवसाय की वृद्धि चाहने वाला पुरुष ऐश्वर्यशाली, धनी व्यापार में निपुण पुरुष को प्रार्थना करता हूं कि वह हमारे इस व्यापार सम्बंधी व्यवसाय का अगुआ बने। वह प्रभु हमें धन देने वाला हो और वह अदानी तथा कर न देने वाले शत्रुओं को अर्थात् व्यापार के मार्ग में विघ्न डालने वाले चोर लुटेरे डाकू आदि को हम से दूर भगाए और मुझे धन देने वाले हो।

२. ओं ये पन्थानो बहवो देवयाना अन्तरा द्यावापृथिवी संचरन्ति। ते मा जुषन्तां पयसा घृतेन यथा क्रीत्वा धनमाहराणि।

भा०—जल, स्थल और आकाश में जहाज, रथ और विमान द्वारा दूर देशों में जाकर मैं बहुत से पदार्थ खरीद कर बहुत सा धन अपने देश में ले आऊं।

३. ओं इच्छमेनाग्न इच्छमानो घृतेन जुहोमि हव्यं तरसे बलाय। यावदीशे ब्राह्मण वन्दमान इमां धियं शतसेयाय देवीम् ॥

भा०—संसार पार करने और इसमें दृढ़ता से चित्त को बल देने के लिये यज्ञ, होम और वेद मन्त्रों से ईश्वर का भजन आवश्यक है, इसी प्रकार व्यापार करने के लिए और नानाविध धन प्राप्त करने के लिये दृढ़ धारणा की आवश्यकता है।

४. ओं इमामग्ने शरणिं मीमृषो नो यमध्वानमगाम दूरम्। शुनं नो अस्तु प्रपणो विक्रयश्च प्रतिपणः फलिनं मा कृणोतु। इदं हव्यं संविदानौ जुषेथाँ शुनं नो अस्तु चरितमुत्थितं च ॥

दूर देश में जाकर व्यापार करने और अपने घर पर माल लाने के लिए एक मध्यस्थ (आढ़ती) की जरूरत है, इसलिए इस मन्त्र में कहा है कि हे साक्षिन्! (जामिन) दोनों के बीच मध्यस्थ पुरुष ही हमारे कष्टों का निवारण करे। हमारे व्यापार में विशेष लाभ हो जो भी व्यवसाय मैं करूं वही मुझे लाभप्रद सिद्ध हो।

मध्यस्थ कहता है हे व्यवहार, व्यापार करने योग्य व्यापारियों! तुम दोनों परस्पर खूब सलाह करके

इस लेन देन के पदार्थ को प्राप्त करो जिससे हमारा यह किया हुआ व्यापार या चालान किया गया माल और उठाया हुआ नफा भी हमें सुखकारी हो।

५—ओं येन धनेन प्रपणं चरामि धनेन देवा धनमिच्छमानः। तन्मे भूयो भवतु मा कनीयोऽग्ने सातघ्नो देवान् हविषा निषेध ॥

भा०—मैं व्यापारी धन से धन को चाहता हुआ, हे विद्वान् पुरुषो! जिस धन से व्यापार करूं, वह मेरा धन बहुत बढ़ जाये वह कमती न हो। हे साक्षिन्! (जामिन) राजन्! इस व्यापार के अन्दर जो, रुकावटें हों उनको दूर करो।

६—ओं येन धनेन प्रपणं चरामि धनेन देवा धनमिच्छमानः। तस्मिन् म इन्द्रो रुचिमा दधातु प्रजापतिः सविता सोमो अग्निः ॥

अथर्ववेद, काण्ड ३, सूक्त १५, मन्त्र १ से ६ तक।

भा०—हे अधिकारी वर्गो! शासको!! जिस मूलधन से मैं व्यापार करता हुआ और अधिक बढ़ाना चाहता हूँ, प्रभु देव मेरे उत्साह को बढ़ावें और शासक लोग भी मेरा सहयोग दें ताकि मैं दिन प्रतिदिन

सर्वोत्पादक प्रभु की उपासना करता रहूं, वही एकमात्र मेरा प्रेरक है।

व्यापार में पांच चीजों की आवश्यकता है।

१—Capital=मूलधन, सरमाया,

१—Commission agents=धनदा, आढ़ती,

३—Commission=आढ़ती को कर,

४—Bargain or transaction=सौदा,

५—Profit=लाभ।

७–उपत्वा नमसा वयं होतर्वैश्वानर स्तुमः।

सनः प्रजास्वात्मसु गोषु प्राणेषु जागृहि॥

अ० ३–१५–७

भा०—हे (होतः) दान प्रतिदान करने वाले! और हे (वैश्वानर) समस्त पुरुषों में व्यापक परमेश्वर (त्वा नमसा उप स्तुमः) तेरी बड़े आदर से हम स्तुति करते हैं। (सः नः प्रजासु) वह तू हमारी प्रजाओं में (आत्मसु) आत्माओं में (गोषु प्राणेषु जागृहि) हमारी ज्ञान-इन्द्रियों और उनकी चेष्टाओं में और कर्म-इन्द्रयों में तू सदा जागृत रहता है, तुझे साक्षी करके हम सब व्यवहार करें।

८–विश्वहाते सदमिद्भरेमाश्वायेव तिष्ठते जातवेदः।

रायस्पोषेण समिषा मदन्तो मा ते अग्ने प्रतिवेषा रिषाम ॥

अ० ३-१५-८

भा०—हे (जातवेदः) सर्वज्ञ परमात्मन् ! जिस प्रकार (तिष्ठते अश्वाय इव) खड़े हुए घोड़े के लिए घास दाना बराबर दिया ही जाता है उसी प्रकार (ते) तेरे नाम से भी (सदम् इत्) सदा ही (विश्वाहा) सब दिनों हम मर्यादापूर्वक (भरेम) दान करें और हम (रायस्पोषेण) धनौ और पुष्टिकारक पदार्थों से और (इषा) अन्नों से (सम्मदन्तः) खूब हृष्ट पुष्ट होते हुए ह (अग्ने) परमात्मन ! (ते प्रतिवेशाः) तेरे पड़ौसी बनकर ही (मा रिषाम) कभी क्लेशित न हों।

अर्थात् परमेश्वर के नाम से या विद्वानों के निमित्त या नित्य अपने आय से कुछ देना चाहिए और लोग उनके समीप रहकर प्रसन्न रहें।

९—ओं प्रजापते न त्वेदतान्यन्यो विश्वा जातानि परिता बभूव । यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नोऽस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥

भा०—हे प्रजापति परमेश्वर ! आप ही एकमात्र

मेरे स्वामी हो, जिस जिस शुभ कामना से प्रेरित होकर हम तेरा पूजन करें वह हमारी कामना पूर्ण हो और हम धनैश्वर्य के स्वामी बनें।

१०–ओं भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात् ॥

भा०—हे प्राण स्वरूप, दुःख विनाशक, सुखदाता प्रभु! आप ही हमारे सच्चे पथप्रदर्शक हो, हमें ऐसी बुद्धि प्रदान करो कि जिससे हम व्यापार के व्यवहार में सब प्रकार का सुख प्राप्त कर सकें और धर्म से कभी विचलित न हों।

११–ओं इन्द्र श्रेष्ठानि द्रविणानि धेहि चित्तं दक्षस्य सुभगत्वमस्मे। पोषं रयीणामरिष्टिं तनूनां स्वाद्मानं वाचः सुदिनत्वमह्नाम् ॥

ऋ० २–२१–६

भा०—हे परमात्मा देव! हमें श्रेष्ठ धन प्रदान कीजिए। बल की उस प्रकृति को जिससे विद्या उपार्जन करते हैं अत्युत्तम ऐश्वर्य, पुष्टि तथा धन और शरीरों की रक्षा, वाणी के बोध, स्वादिष्ट भोग और सुदिन प्राप्त कीजिये।

तत्पश्चात् विश्वानि देव मन्त्र से न्यून से न्यून ३ आहुतियां दिलाकर स्विष्टकृत् आहुति और प्रजापति की आहुति दिला पूर्णाहुति की क्रिया करें। और प्रार्थना के बाद यजमान को आशीर्वाद दें और आए हुए सज्जनों को सत्कारपूर्वक विदा करें और शांतिपाठ से क्रिया समाप्त करें।

प्रार्थना

हे सर्वरक्षक प्रभु ! आप अत्यन्त पुरुषार्थशील हैं। आपके ही तप से यह सारा ब्रह्माण्ड व्यक्त होकर दृष्टि गोचर हो रहा है। आपने ही अपनी पवित्र कल्याणी वाणी वेद में हमें पुरुषार्थी और तपस्वी जीवन बिताने का उपदेश दिया है। तेरे उस पवित्र उपदेश के अनुसार हम व्यापार सम्बन्धी व्यवहार में प्रवृत हो रहे हैं, परन्तु पिता ! जब तक तेरी आशीर्वाद और सहायता न हो हमें अपनें कार्य में सफलता प्राप्त करना असम्भव प्रतीत हो रहा है इसलिए तेरी पवित्र चरण शरण में उपस्थित होकर अत्यन्त विनम्र भाव से प्रार्थना करते हैं कि इस शुभ कार्य में हमारा पथ प्रदर्शन करो ताकि हम इससे अधिकाधिक लाभ उठा

कर बहुत धन के स्वामी बनें और उसे श्रेष्ठतम कार्यों में व्यय करते हुए तेरे प्यारे पुत्र कहला सकें। ओम् शम्

५-शिलान्यास पद्धति

जिस तिथि को नवीन भवन निर्माण, यज्ञशाला अथवा दुकान आदि का निर्माण कार्य आरम्भ कराने का और नींव रखने का विचार हो और किसी भद्र पुरुष अथवा महात्मा सत्संगी, विद्वान् तथा वयोवृद्ध से शिलान्यास कराना हो, प्रातःकाल अपने इष्ट मित्रों सम्बन्धियों तथा हितैषियों को बुला स्तुति प्रार्थनोपासना आदि के मन्त्रों तथा सामान्य प्रकरण की क्रिया के पश्चात् निम्न मन्त्रों से आहुतियां कुण्ड में दिलवायें परन्तु हवनकुण्ड भूमि में खुदा हुआ हो, लोहे और ताम्र का न हो। गृह निर्माण के लिए देखे अथर्ववेद, काण्ड ६ सूक्त १०६—

जहां घर की शोभा व रक्षा के लिये दूब फुलवाड़ी तालाब आदि का होना आवश्यक लिखा है।

१-ओं ऊर्जस्वतो पयस्वती पृथिव्यां निमिता मिता।
विश्वान्नं बिभ्रती शाले मा हिंसीः प्रतिगृह्णतः॥
अ० ६-३-१६

भा०—हे शाले ! तू आरोग्य पराक्रम से युक्त

एवं धन धान्य से सम्पन्न दुग्ध, जल, रस आदि से परिपूर्ण पृथिवी पर माप माप कर बनाई जा रही है, तू सब प्रकार के अन्नों को धारण करती हुई स्वीकार करते हुए स्वामी को सब प्रकार से सुखदाई हो।

२—ओं ब्रह्मणा शालां निमितां कविभिर्निमितां मिताम्।
इन्द्राग्नी रक्षतां शालामृमतौ सोभ्यं सदः॥

अ० ९-३-१९

भा०—ज्ञानपूर्वक बनाई जा रही और बुद्धिमान पुरुषों द्वारा नापी और तैय्यार की जा रही शालां को जीवन की वृद्धि करने वाले वायु और अग्नि गृह को सुखकारी बनाये रखें।

भावार्थ—शिलान्यास किसी धर्मात्मा विद्वान् के पवित्र कर-कमलों से कराया जाए और भवन के चित्र (plan) किसी सुप्रसिद्ध इन्जीनियर ओवरसीयर अथवा (Draftman) से तैयार कराया जाए।

३—ओं कुलायेऽधि कुलायं कोशे कोशः समुब्जि।
तत्र मर्तो वि जायत यस्माद् विश्वं प्रजायते॥

अ० ९-३-२०

भावार्थ—घोंसले पर घोंसला अथवा कोश पर कोश जिस प्रकार चढ़ाया ज़ाता है इसी प्रकार की यह

शाला बनाई जाए, अर्थात् बीच में कमरा इसके बाहर इसे घेरने वाले कमरे, इस प्रकार शाला में नाना कमरे होने चाहियें। प्रत्येक गृहस्थी गृहस्थाश्रम में रहता हुआ समग्र संसार को अपनी सन्तानवत् जान कर उसकी रक्षा करे।

४—ओं या द्विपक्षा चतुष्पक्षा षट्पक्षा या निमीयते।
अष्टापक्षां दशपक्षां शालां मानस्य पत्नीमग्निगर्भ इवा शये॥
अ० ९-३-२१

भावार्थ—मातृत्व सामर्थ्य का पालन करने वाली स्त्री में जिस प्रकार गर्भ रूप जीव सोता है उसी प्रकार मैं गृहपति आठ कोठरियों वाली शाला के बीच में रहूँ।

जो शाला दो कोठरियों वाली, चार कोठों वाली और जो छः कोठरियों वाली भी बनाई जाती है।

५—ओ मा नः पाशं प्रतिमुचो गुरुर्भारो लघुर्भव।
वधूमिव त्वा शाले यत्र कामं भरामसि॥
अ० ९-३-२४

भावार्थ—शिल्पी लोग शाला के जोड़ों को सुदृढ़ बनावें और अच्छी प्रकार लम्बी चौड़ी बना कर सुखदायिनी करें और कुलवधू के समान आवश्यकीय पदार्थों से

उसको परिपूर्ण करें ।

६—ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव ।
यद्भद्रं तन्न आसुव ॥ यजु ३०-३

भावार्थ—सकल जगत् के उत्पादक प्रभु (इस गृह निर्माण में आने वाले) सब संकटों को दूर करें और सुखदायक भद्रकर पदार्थ प्रदान करें ।

७—ओं भूर्भुवः स्वः । तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः । प्रचोदयात् ॥ य० ३६-३

भावार्थ—सच्चिदानन्दस्वरूप, सकल जगत् के उत्पादक सर्वश्रेष्ठ कमनीयतम देव के शुद्ध पवित्र तेज का ध्यान करें कि वह हमारा और शिल्पियों का (इस निर्माण कार्य में) पथ प्रदर्शन करें ।

८—ओं प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जानानि परिता बभूव । यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नोऽस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥ ऋ० १०-१२१-१०

भावार्थ—वह प्रजापति परमात्मा ही सब जगत् का निर्माता है, जिस पवित्र कामना से प्रेरित होकर हम उसका पूजन करें वह कामना हमारी पूर्ण हो और हम (यजमान सहित) धनैश्वर्य के स्वामी बनें ।

९—ओं इन्द्रो विश्वस्य राजति ।
शं नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे ॥ य० ३६-८

भावार्थ—परमात्म-देव सब संसार को प्रकाशित कर रहे हैं। (इस गृह में रहने वाले) मानव तथा पशु हमें कल्याणकारी हों।

फिर शिलान्यास करते समय निम्न मन्त्रों से जल छिड़क कर गायत्री मन्त्र द्वारा शिला रखें।

१०—ओं आपो हिष्ठा मयोभुवस्ता न ऊर्जे दधातन।
महे रणाय चक्षसे ॥१॥
ओं यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः।
उशतीरिव मातरः ॥२॥
ओं तस्माऽरगंमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ।
आपो जनयथा च नः ॥३॥ य. ३६-१४. १५-१६

शीशे अथवा मिट्टी के मरतबान में एक दो अथवा चारों वेद अथवा ऋषि दयानन्द ग्रन्थमाला और जो कार्यक्रम हो चुका है, उसका ब्यौरा तथा यजमान की वंशावली तिथि नक्षत्र, सम्वत् सहित एक पन्ने पर शुद्ध लिखकर रखें और मरतबान के ढकने को उड़द का आटा और चीनी मिलाकर बन्द कर दें कि Air tight (वायु अन्दर जाना बन्द) हो जाए। मरतबान को ढक दें।

फिर यज्ञ की पूर्णाहुति करके उपस्थित सज्जनों का यज्ञशेषादि से सत्कार करके पुरोहित को दक्षिणा आदि देकर विदा करें और सब जनें जाते समय यजमान को आशीर्वाद निम्न शब्दों में दें।

ओं सर्वे भवन्तोऽत्रानन्दिता:सदा भूयासुः ॥

९-पग्गों की पद्धति

यद्यपि महर्षि दयानन्द ने संस्कारविधि के अन्तिम पृष्ठ पर स्पष्ट शब्दों में आज्ञा की है कि "तत्पश्चात् जब तीसरा दिन हो तब मृतक का कोई भी सम्बन्धी श्मशान में जाकर चिता से अस्थि उठाके, उस श्मशान भूमि में कहीं पृथक रख देवे। बस इसके आगे मृतक के लिए कुछ भी कर्म कर्त्तव्य नहीं" फिर भी यह प्रथा सर्वत्र फैल चुकी है कि चौथे, ग्यारहवें अथवा तेरहवें दिन उठाला (उठावनी) की रस्म की जाती है जिसको पग्गों की रस्म भी कहते हैं। पग्गों की रस्म क्या है, यह मृतक की बड़ी सन्तान को उत्तराधिकारी घोषित करने के सिवाय और कुछ नहीं, चूंकि यत्र तत्र सर्वत्र

भिन्न-भिन्न रीति बरती जाती है जो ठीक नहीं, इस लिए यज्ञ की सगंठित रीति नीचे दी जा रही हैं, रुचिकर हो तो इसे अपनाले । अस्तु !

विधि—ईश्वर स्तुति प्रार्थनोपासना के मन्त्रों तथा समयोचित प्रार्थना के बाद नित्यकर्म की क्रिया कर लें और फिर निम्न वेदमन्त्रों की आहुतियां दें अथवा दिलवायें । भावार्थ भी साथ साथ पढ़ते जायें तो अच्छा होगा ।

१—ओं मनसः काममाकूतिं सत्यमशीय । पशूनां रूपमन्नस्य रसो यशः श्रीः श्रयतां मयि स्वाहा ॥

यजु० ३९-४

भा०—जो मनुष्य सुन्दर विज्ञान उत्साह और सत्य वचनों से मरे शरीरों को विधिपूर्वक जलाते हैं, वे पशु प्रजा धन धान्य आदि को पुरुषार्थ से पाते हैं ।

१—ओं प्रजापतिः सम्भ्रियमाणः सम्राट् सम्भृतो वैश्वदेव संसन्नो धर्मः प्रवृक्तस्तेज उद्यत आश्विनः पयस्यानीयमाने पौष्णो विष्पन्दमाने मारुतः क्लथन् । मैत्र शरसि सन्ताय्यमाने वायव्यो ह्रियमाण आग्नेयो हूयमानो वाग्घुतः ॥ यजु० ३९-५

भा०—जब यह जीव शरीर को छोड़ सब पृथिव्यादि पदार्थों में भ्रमण करता हुआ जहां तहां प्रवेश करता और इधर उधर जाता हुआ कर्मानुसार ईश्वर की व्यवस्था से जन्म पाता है तब ही प्रसिद्ध होता है।

३—ओं सविता प्रथमेऽहन्नग्निर्द्वितीये वायुस्तृतीये आदित्यश्चतुर्थे चन्द्रमाः पञ्चम ऋतुः षष्ठे मरुतः सप्तमे बृहस्पतिरष्टमे। मित्रों नवमे वरुणो दशम इन्द्र एकादशे विश्वे देवा द्वादशे ॥ यजु० ३९-६

भा०—हे मनुष्यो ! जब यह जीव शरीर को छोड़ते हैं तब सूर्य प्रकाशादि पदार्थों को प्राप्त होकर कुछ काल भ्रमण कर अपने कर्मों के अनुकूल गर्भाशय को प्राप्त हो शरीर धारण कर उत्पन्न होते हैं तभी पुण्य पाप कर्म से सुख दुःखरूप फलों को भोगते हैं।

४—ओं सविता ते शरीरेभ्यः पृथिव्यां लोकमिच्छतु। तस्मै युज्यन्तामुस्रियाः ॥ यजु० ३५-२

भा०—हे जीवो ! जो परमात्मा तुम्हारे लिए सुख चाहता है और किरणों के द्वारा लोकलोकान्तर को पहुंचाता है वही तुम लोगों को न्यायकारी मानना

चाहिये ।

५–ओं वायुः पुनातु सविता पुनात्वग्नेर्भ्राजसा सूर्य्यस्य वर्चसा । विमुच्यन्तामुस्रियाः ॥ य० ३५-३

भा०–जब जीव शरीरों को छोड़ के विद्युत् सूर्य प्रकाश और वायु आदि को प्राप्त होकर जाते हैं और गर्भ में प्रवेश करते हैं तब किरण उनको छोड़ देती है ।

नोट—इस किरण का नाम सुषुम्णा किरण है । इस विषय पर विस्तार से पढ़ना हो तो श्री महात्मा प्रभुआश्रित स्वामी जी महाराज की "अद्भुत किरण" नामी पुस्तक पढ़ें ।

६–ओं वायुरनिलममृतमथेद भस्मान्तं शरीरम् ओ३म् क्रतो स्मर क्लिबे स्मर कृत् स्मर ॥ यजु० ४०-१५

भा०—मनुष्यों को चाहिए कि जैसी मृत्यु समय में चित की वृत्ति होती हैं और शरीर से आत्मा का पृथक होना होता है, वैसे ही इस शरीर की जलानें पर्य्यन्त क्रिया करें । जलाने के पश्चात शरीर का कोइ संस्कार न करें । वर्तमान समय में एक परमेश्वर की ही आज्ञा का पालन, उपासना और अपने सामर्थ्य को बढ़ाया करे । किया हुआ कर्म निष्फल नहीं होता

ऐसा मानकर धर्म में रुचि और अधर्म में अप्रीति किया करें ।

७-ओं विभक्तारं हवामहे वसोश्चित्रस्य राधसः । सवितारं
    नृचक्षसम् ॥ यजु० ३०-४

भावार्थ—परमेश्वर अपने अपने कर्मों के अनुकूल सब जीवों को फल देता हैं, जिसका जैसा पाप वा पुण्य रूप जितना कर्म है, उतन वैसा फल उसके लिए देता हैं

तत्पश्चात् गायत्री मन्त्र का तीन बार उच्चारण करके उत्तराधिकारी अर्थात् मृत की बड़ी सन्तान को पगड़ी बन्धवा अभिषेक करें, तिलक आदि लगा निम्न प्रकार की प्रार्थना के बाद शांतिपाठ से कार्यवाही समाप्त करें ।

प्रार्थना

हे सच्चिदानन्दस्वरूप, सवितः देव ! आपको हमारा नमस्कार हो। समस्त संसार के निर्माता, विधाता और त्राता आप ही हो। आप सबको गति देने वाले तथा व्यवस्थानुसार अपने शासन को चलाने में स्वतन्त्र तथा महाबली हैं। आपका न्याय रूप शासन

पक्षपात रहित सर्वत्र प्रसिद्ध है। बड़े बड़े ऋषि मुनि, योगी, तपस्वी महाराज अधिराज तेरे शासन के आगे सिर झुकाते हैं। भगवान् राम, भगवान् कृष्ण, भगवान् शंकर, भगवान दयानन्द प्रभृति सब महानुभावों ने तेरे न्याय के आगे गरदन झुकाई और हंसते हंसते प्राण त्याग दिए। ओ प्रभु ? तेरी लीला अद्भुत है तेरे खेल निराले है, हंसतों को रुलाता और रोतों को हंसाता है, पर यह सब काम किसी ऐसे अटूट और सुदृढ़ नियम पर आधारित हैं कि साधरणजन उसके महत्व तथा रहस्य को नहीं जान पाते। सबको तू कर्मानुसार फल देता और जाति आयु, भोग का निश्चय करता है। जिसका भोग जब समाप्त होता है उसके प्राणान्त का समय आ गया होता है, तब आत्मा का शरीर से वियोग उसी तेरे नियम के आधार पर होता है और दिवंगत आत्मा का भी वैसे ही हुआ है। क्रर्मानुसार तू फल प्रदाता है और इसलिए तेरे दरबार में किसी दिवगंत आत्मा की गति अथवा सद्गति की प्रार्थना करना उपहास सा प्रतीत होता है। परन्तु मानव अल्पज्ञ और मोहग्रस्त प्राणी है इसलिए मोहवश ही हम उस मृत आत्मा की सद्गति की प्रार्थना करते हैं और याचना

करते हैं कि कृपया मृत जीव की सन्तान तथा सम्बन्धियों को शक्ति और सुमति प्रदान करें कि वह इस वियोग के क्लेश को भुलाकर अपनी जीवन यात्रा को धर्मानुसार तय करते हुए तेरी दया, कृपा और भक्ति के पात्र बने रहें।

ओ३म् शम्

७. वर्षेष्टि (वर्षा यज्ञ)

यजुर्वेद के ११वें अध्याय के २२वें मन्त्र में आया है "निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु"—अथात् निश्चययुक्त काम काम में अर्थात् जिस जिस काम के लिए प्रयत्न करें उस उस काम में (पर्जन्यः) मेघ (वर्षतु) वर्षे"— [दयानन्द]

दूसरे शब्दों में जब जब हम चाहें वर्षा हो। तो वर्षा अपनी इच्छानुसार कराई जा सकती है।

उसी वेद के १७ वें अध्याय के पहले मन्त्र में वर्षा विद्या का भगवान् उपदेश करते हैं और दूसरे मन्त्र में यज्ञशाला-निर्माण के लिए इष्टका=ईंटो का वर्णन है।

जीवन काल के इस स्वल्प समय में जब से श्री स्वर्गीय वन्दनीय गुरुदेव महात्मा प्रभुआश्रित जी

महाराज के साथ रहने और यज्ञ कराने का सौभाग्य प्राप्त हुआ तबसे अनेक बार वर्षा की असफलता भी हुई मेघ बन आये काले काले, पर छिन्न भिन्न हो गए। अपनी भुल का भी अनुभव हो गया, वर्षा कराई गई उसमें घृत की पुष्कल मात्रा प्रयोग में लाई गई और दोबारा तो बिना घृत और सामग्री के भी वर्षा यज्ञ सफल रहा उस यज्ञ में दूध भाग की छोटी छोटी समिधायें आहूति के लिए और कैर की समिधा गीली डेलो सहित तथा सूखी प्रयोग की गई।

अध्यात्म सुधा–४ अर्थात् सामाजिक यज्ञ पद्धति का चौथा संस्करण नया प्रकाशित करने का समय आया तो हमें विचार आया कि वृष्टि-याग पद्धति जो अपने अनुभव में आई, उपरोक्त परीक्षणों तथा विचारों के प्रकाश (Light) में प्रकाशित कर दी जाए अतः यह साहस किया गया है ताकि याजक लोग यह परोपकार कार्य भी आवश्यकतानुसार कर सकें। अस्तु।

[विज्ञानानन्द सरस्वती]

जम्मू—२६-२-२००५ विक्रमी

वर्षा सम्बन्धी प्रमाण

१—एतान्यग्ने नवतिनर्वं त्वे आहुतान्यधिरथा सहस्रा। तेभिर्वर्धस्व तन्वः शूर पूर्वीर्दिवो नो वृष्टिमिषितो रिरीहि

ऋ० १०-९८-१०

अर्थ—अग्नि में ९९ सहस्र घृत सहित चरू की आहूति देने से अग्नि अनेक ज्वालाओं से बढ़ता है। वह तीव्र होकर आकाश से वृष्टि प्राप्त कराता है।

२— एतान्यग्ने नवतिं सहस्रा सं प्रयच्छ वृष्ण इन्द्राय भागम्। विद्वान् पथ ऋतुशों देवयानानप्यौलानं दिवि देवेषु धेहि ॥ ऋ० १०-९८-११

अर्थ—अग्नि की ९० सहस्त्र आहुतियों को वृष्टि-कारक मेघ के निमित्त वातावरण (अन्तरिक्ष) में प्रदान करे। किरणों के गमन मार्ग को जानता हुआ विद्वान् मेघ को अन्तरिक्ष में किरणों के बल पर बना लेता है।

[जयदेव भाष्य]

३—अयं त इन्द्रो सोमो निपूतो अधि बर्हिषि।
एहीमस्य द्रवा पिब ॥ साम० १५९

अर्थ—जब मनुष्य वृष्टि के हेतु सोम को तैयार करे तब परमेश्वर की स्तुति करके अग्नि में सोम का

हवन करे जिससे इन्द्र नामक अग्नि दौड़ आवे उसे शोषण कर वर्षा का हेतु हो।

यजुर्वेद में तो अनेक प्रमाण मिलते हैं। कुछ एक का वर्णन आ चुका है।

४—अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसंभवः।
यज्ञात् भवतिप जंयन्तो यज्ञः कर्मसमुद्भवः ॥ गीता

भावार्थ—अन्न से प्राणी जीते तथा प्रसन्न होते हैं। अन्न मेघ वर्षण से होता हैं। मेघ यज्ञ से पैदा होते हैं अतः यज्ञ ही श्रेष्ठ कर्म वर्षा का कारण है।

वर्षा-यज्ञ को सफलता के चिन्ह

१. आकाश में निस्तब्धता के परमाणुओं का बाहुल्य और नितांत शान्ति दिखाई देती है।
२. वायु बिल्कुल बन्द हो जाती है, पत्ता तक नहीं हिलता।
३. अग्नि की लाल ज्वालायें ऊपर को छलांग लगाती हैं।
४. आकाश में सफेद-सफेद बादल दीखते हैं।
५. नितरी बदली वर्षा की आगमन की सूचक है।
६. अग्नि का रंग कैर की लकड़ी से लाल स्वर्ण की भांति होता है और १०-१२ फुट ऊपर को उठती है, कुण्ड से ३ फुट ऊपर।

७. लालिमा के साथ बीच में काले वर्ण की रेखाएं ज्वाला में होती हैं यह घनघोर घटाओं का चिन्ह है।

८. सोमरस से वर्षा शीघ्र आती है।

९. घृत की धारा बादल बनाने में बहुत सहायक होती है।

१०: जब अग्नि का रंग सफेद हल्के पीतवर्ण में मिला हो, वर्षा के आने का सूचक है।

(अक्तूबर ७४ चरला के वर्षा यज्ञ के संस्मरण)

विधि

१. यज्ञ में भाग लेने वाले निरामिष भोजी होने चाहियें। मद्य, मास, धूम्रपान आदि का सेवन करने वाले न हों। अनुकूल वैदिक विचारों वाले, शुद्ध अन्तः करणयुक्त, प्रभु पर पूर्ण विश्वास और श्रद्धा रखने वाले हों।

२. स्नान करके बैठे, पुरुषों की धोती, स्त्रियों की साड़ी पीत वर्ण की होनी चाहियें।

धोती आर्यों की प्राचीनतम, मान प्रतिष्ठा बढ़ाने ब्रह्मचर्य की रक्षा करने वाली वेष-भूषा है। पाजामा

अथवा पैंट व सिलवार वर्जित है। महर्षि ने इनकी कहीं आज्ञा नहीं दी।

पीत वस्त्र क्यों हों ? इसलिए कि—

१. पीत वर्ण ब्रह्मचर्य का द्योतक है, यज्ञ में ब्रह्मचारी बनके बैठना है।

२. पतिवस्त्र धारण करते ही यज्ञ की भावना जागृत हो जाती है।

३. पतिवस्त्र व्रतियों की साधारण लोगों से पहचान कराते हैं और दर्शकों का आकर्षण करते तथा उनकी जिज्ञासा को उद्बुद्ध करते हैं।

वस्त्र—पीत वर्ण की धोती और उसके नीचे लगोंट अथवा कच्छा धारण करें। बदन पर पीत वर्ण की चद्दर अथवा तौलिया हो। स्नान करके बैठें।

यज्ञशाला का कुण्ड साढ़े-चार फुट लम्बा चौड़ा उतना ही गहरा हो। नीचे साढ़े-तेरह इन्च चौकोन हो। तीन मेखलाये चार-२ अंगुल मोटीं चौड़ी हों, जलसिचन के ऊपर वाली मेखला के साथ चार अंगुल चौड़ी चारों ओर नाली हो।

यज्ञशाला खुले मैदान में बनानी चाहिए, उसको

छत से ढका न जाए, यज्ञशाला के माप का लाल चन्दुआ कुण्ड के चारों ओर लगाये गए खम्बों से दस फुट ऊंचा बांधा जाये।

यज्ञशाला की सजावट रंग-बिरंगे चित्रों से तथा पत्र, पुष्पमालाओं और पल्लवों से की जावे। चारों कोनों पर चार घड़े ताजा जल के भर कर रखे जावें और ऊपर कच्चे नारियल रखे जावें।

ब्रह्मा और ऋत्विजों का वरण विधि अनुसार किया जावे। विधि का वर्णन इसी पुस्तक में पहले आ चुका है।

यज्ञ प्रारम्भ करने से पूर्व प्रार्थना मन्त्रों के बाद निम्न भाव की प्रार्थना की जावे।

प्रार्थना

हे सर्वशक्तिसम्पन्न दया के भण्डार, करुणा के सागर, विघ्नविनाशक समस्त सुखों के दाता परमेश्वर! हे महान् दानी इन्द्र!

आज सृष्टि सम्वत् १,९७,२९,४९,०७७...मास सम्वत् २०३३ तिथि.....दिनांक.....प्रातः/सायं वेला में हम आपके अबोध बालक और बालिकायें

वर्षेष्टियज्ञ के नाते इस पवित्र स्थान पर उपस्थित होकर श्री चरणों में अत्यन्त श्रद्धा और भक्ति भाव से करबद्ध नतमस्तक (यहां सब को हाथ जोड़कर सिर झुकाना चाहिए) नमस्कार करते हैं बारम्बार नमस्कार करते हैं, कृपा करके नमस्कार की अञ्जलि को स्वीकार करें और आशीर्वाद दें जिससे हम सदैव तेरे पवित्र चरणों में झुकने में अपना उत्थान तथा कल्याण समझें।

प्यारी मां ! तेरे बालक इस समय वर्षा के अभाव को देखकर बहुत भयभीत हो रहें हैं। वर्षा न हो तो हमें भोग पदार्थ कहां से और कैसे मिलेगा। आज देश के अन्दर सूखे की अवस्था उत्पन्न हो रही है। जो देश सोने की चिड़िया कहलाता था जहां अन्न पुष्कल मात्रा में और अत्यन्त सस्ता था, जहां दूध दही की नदियां बहती थीं, आज वही देश सोना देखने को तरसता है, दाने-दाने के लिए मोहताज हो रहा है, अमरीका आदि देशों के आगे अन्न धन के लिए हाथ पसारता है, वहां सूर्योदय से पूर्व सहस्रों गौओं के गले पर छुरी फिर जाती है, ऐसी दुर्दशा में सारी प्रजा पीड़ा पा रही है, चारों ओर हाहाकार है। पशुओं के लिए चारा नही रहा

मनुष्यों के लिए अन्न नहीं रहा। यह हमारा दुर्भाग्य है, परन्तु मां ! आज तक तूने किसी पापी, दुष्टात्मा अथवा नास्तिक का भोग बन्द नहीं किया तो हमारी यह अवस्था क्यों ?

समय पर बादल गरजते थे, वर्षा होती थी, प्रजा, पशु सब खुश निहाल होते थे। माना ! यह हमारा ही दोष है परन्तु मां, इस समय हम सब बालक बड़े आर्त-भाव से इस यज्ञ द्वारा आप से सविनय प्रार्थना करते हैं कि हमारे इस यज्ञ को आप सफल बनायें और उपयोगी यथोचित वृष्टि ले सन्तप्त वसन्धरा को तृप्त करें उर्वरा करें, उस पर फल-फूल, मेवे, अनाज, चारा वनस्पति औषधि इतनी पुष्कल मात्रा में उत्पन्न हो कि प्रत्येक प्राणी को भरपेट अन्न मिल सके और सुख के इतर सामान से भी वह भरपूर और माला-माल हो जाये और हमें आस्तिक बुद्धि तथा अपनी भक्ति का दान दें, हमारी यही प्रार्थना है कृपा करके इसे स्वीकार करें और सब-का बेड़ा पार, संवार सुधार, उद्धार करें।

ओ३म् शम्

किन मन्त्रों से आहुति दी जाए ?

अथर्ववेद काण्ड ४ सूक्त १५ वर्षा सुक्त है, चाहे सारे सूक्त से आहुति दें चाहे पहले मन्त्र से जो नीचे दिया जा रहा है, उससे दें—

समुत्पतन्तु प्रदिशो नभस्वतोः समभ्राणि वाजूतानि यन्तु । मह ऋषभस्य नदतो नभस्वती वाश्रा आपः पृथिवीं तर्पयन्तु ॥ अ० ४-१५-१

भावार्थ— (नभस्वतीः) मेघों से घिरी (प्रदिशः) महादिशायें (सम् उत्, पतन्तु) उमड़ आवें, चारों दिशाओं में मेघ घिर जावें और (वातजूतानि) वायु से प्रेरित (अभ्राणि) जल से भरे बादल (सं यन्तु) खूब आवें तब (मह ऋषभस्य) महान् जल वर्षक (नदतः) गर्जना करते हुए (नभस्वतः) वायु से प्रेरित मेघ की (वाश्राः) छम छम करती हुई (आपः) जलधारायें (पृथिवीम् तर्पयन्तु)इस पृथिवी को परितृप्त करे—उर्वरा करें ।

(अथवा)

शन्नो वातः पवतां शन्नस्तपतु सूर्यः ।
शन्नः कनिक्रदद्देव पर्जन्यो अभि वर्षतु ॥

य० ३६-१०

भा०—हे परमेश्वर ! पवन हमारे लिए सुखकारी चले, सूर्य हमारे लिए सुखकारी तपे, अत्यन्त शब्द करता हुआ उत्तम गुण युक्त विद्युत रूप अग्नि हमारे लिए सुखकारी हो और मेघ हमारे लिए सब ओर से वर्षा करे। [दयानन्द]

सावधान—उपरोक्त मन्त्र की कम से कम सवा लाख आहुति दें।

यदि वर्षा सूक्त सारा पढ़ना है तो २० व्रतियों के पीछे ३६० बार पढ़ना होगा।

अग्नि प्रचण्ड हो, धूआं न दे। जितनी अग्नि प्रचण्ड होगी उतने बादल जल्दी बनेंगे। घृत की धारा बहती रहे। उसके लिए नलकी का प्रयोग करें और ६ माशे से कम आहुति न हो। घृत को धारा कुण्ड के मध्य में ३-४ फुट ऊपर रखी नलकी से चलती रहे। और यदि सोम रस से यज्ञ करें तो शीघ्र बादल आ जाते हैं।

बिना घी के वर्षा यज्ञ

१ भाण (भान) की छोटी समिधायें अंगूठे जितनी मोटी और आठ, दस अंगुल लम्बा सवा लाख (भाण सिन्धु नदी के तट पर बहुत होता है)।

२ दूध जिसमें समिधायें डुबोई जावें।

३ करीर की समिधा सूखी बीस मन और गीली फल सहित आठ दस मन। जितने भी व्रती आहुति डालें दो व्यक्तियों के आगे एक दूध का पात्र रखा जाए जिसमें समिधा डुबो सकें, समिधा सूखी लकड़ी की हों अग्नि प्रज्वल सूखी लकड़ियों से करें और प्रचण्ड अग्नि में गीली करीर की समिधायें समय समय पर डालें, अग्नि प्रचण्ड रहनी चाहिए।

इस प्रकार यज्ञ करने से तीन दिन उपरान्त वर्षा होनी सम्भव है। (अनुभूत)

वृष्टि निरोध

अति वृष्टि को कैसे रोका जाये ?

जब मूसलाधार वर्षा हो रही हो तो निम्न मन्त्रों के द्वारा भस्म की एक सौ आहुति जल में दी जावे

अथवा बरसती वर्षा में। यज्ञ की भस्म सर्वोतम रहेगी
[अनुभूत]

ओं अग्निर्वृत्राणि जङ्घनद् द्रविणस्युर्विपन्यया। समिद्धः शुक्र आहुतः ॥ (साम० ४) यह अनुभूत है।

२ पीली सरसों, सामग्री समभागः गुग्गुल १/३ भाग मिलाकर गायत्री के साथ १००० आहुति दें।

मन्त्र मौन होकर उच्चारण करें, केवल स्वाहा उच्चघोष से बोलें। [श्री ज्ञानेश्वरानन्द वनस्थ]

३ भस्म की सौ आहुति गायत्री मन्त्र द्वारा जल में दें। [देवी भागवत पुराण]

सावधान—मन्त्रों के उच्चारण में उच्च-घोष मन्त्र का प्रयोग शीघ्र सफलता लाने वाला होता है।

अग्नि कब दुःख दूर करती है ?

गार्हपत्य अथवा हवन की अग्नि दुःखों को कब और कैसे दूर करती है ?

उत्तर—जब प्रचण्ड हो। आहुति पड़ते ही वस्तु छिन्न भिन्न होकर स्वाहा हो जाए, तब उसके सूक्ष्म प्रमाणु अपने गुणों से सबको सुख पहुँचाते हैं।

रोग विनाशक—रोग दूर करते हैं, पौष्टिक-

पुष्टि प्रदान करते हैं सुगन्धित जीवन को सुगन्धमय बनाते हैं और मीठे-वाणी और जीवन में मधुरता लाते हैं, तब सब दुःख दूर हो जाते हैं। मरियल और धुयें वाली अग्नि दुःख दूर नहीं कर सकती, बढ़ाती जरूर है।

सामवेद में कहा है कि यह अग्नि ऐसे दुःखों को दूर करती है जैसे घोड़ा अपनी गर्दन तथा पूंछ के बालों से मक्खियों को दूर करता है।

अश्वं न त्वा वारवन्तं वन्दध्या अग्निं नमोभिः।
सम्राजन्तमध्वराणाम् ॥ साम० १७

यज्ञ शेष

कई सज्जन यज्ञ शेष अथवा यज्ञ प्रसाद लेने से कतराते हैं, यह उनकी भूल है। यज्ञ शेष के सेवन से यज्ञ भावना जागृत होती है और अनेक प्रकार के पाप दूर होते हैं। इसमें अनेकों प्रमाण दिये जा सकते हैं। कई एक नीचे याजकों की श्रद्धा बढ़ाने के लिए दिए जाते हैं।

१—अघत्तं मेदस्तः प्रतिपचताग्र भीदवीवृधत्पुरोडाशेन ।
यजु० २८-२३

अर्थ—(पचता पुरोडाशेन) पकाये हुए यज्ञ पाक की (मेदस्तः) चिकनाई से (त्वाम्) आपको (प्रति अग्र-भीत्) ग्रहण करें और (अवीवृधत्) बढ़े वैसे हे यजमान और होता लोगो तुम दोनों यज्ञ के शेष को (अघत्तम्) खाओ ।

२—स्वाहाकृतं हविरदन्तु देवाः । यजु० २९-३६

अर्थ—(स्वाहाकृतम्) होम किये से बचे (हविः) भोजन के योग्य अन्नादि को (देवाः) विद्वान् लोग (अदन्तु) खायें ।

३—हुतभागा अहुतादश्च देवाः । ऋ० १-३०-४

अर्थ—लेन देन और यज्ञ से शेष रहे पदार्थों का आहार विजय करने वाला होता है ।

४—यज्ञशिष्टामृतभुजो यांति ब्रह्म सनातनम् ।
गीता ४-३१

अर्थ—यज्ञ से रहा शेष जो अमृत है, उसको खाने वाले ब्रह्म ज्ञान को प्राप्त होते हैं ।

५–यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्विषैः ॥

गीता ३-१३

अर्थ–यज्ञ शेष खाने वाला सब पापों इत्यादि से छूट जाता है।

बृहद् यज्ञ के आवश्यक सामान की सूची तथा नियमावली

सामान

घड़े कोरे, नारियल कच्चे, लोटा अथवा गंगा सागर,
४ ४ १
झाड़ू, चिमटा आग उठाने के लिए, अङ्गीठी घृत गरम करने के लिये,
स्रुवे नलकी घृतधारा के लिए, कुण्ड का ढकन, घण्टी, घड़ियाल
२ १ १ १ १
कार्यक्रम को सुव्यवस्थित चलाने के लिए, घृत रखने का पात्र,
१
चन्दुआ कुण्ड के माप का (लाल रंग का), चौकियां, आसन, दीपक, दियासलाई थाली, रूई (बत्ती
४ ४ १ १ १
के लिए) चन्दन की समिधा आठ आठ अंगुल की तीन

तीन समिदाधान के लिए प्रति व्रती के लिए, उरसी चन्दन रगड़ने के लिए १, चन्दन का टुकड़ा घिसने के लिए १, यज्ञ शेष बांटने के लिए, पुष्प मालायें प्रत्येक व्रती के लिए, एक-एक जरी की माला यजमान, यजमान पत्नी के लिये।

धोती खद्दर, तोलिया अथवा द्विपट्टा, आसन, लोटा, खड़ाऊं जिस वेद का यज्ञ हो, उसकी एक प्रति प्रत्येक ऋत्विज के लिए।

समिधा— आम, ढाक, पीपल बढ़, गूलर अथवा जाण्ड की कुण्ड के माप की साफ सुथरी।

सामग्री—१५ सेर प्रति व्रती के हिसाब से। घृत आध मन में एक मन तक, कापूर कच्चा २ तौले धूप, केशर ३ माशे कस्तूरी ४ रत्ती, गुलाल, मेंहदी, आटा हल्दी इत्यादि।

नोट—यह सब सामान यजुर्वेद अथवा सामवेद के अनुमान से लिखा गया है।

नियम

१. यज्ञ आरम्भ होने से पूर्व जितने दिन का यज्ञ हो, उतने दिन का और कम से कम तीन दिन का ब्रह्मचर्य हो।

२. यज्ञ आरम्भ से पूर्व एक दिन मौन रहें २५ माला गायत्री जाप करें। माला इस्तेमाल न करनी हो तो किसी और प्रकार से गिनती करके पूरा करें। अन्न न खायें, केवल दूध पान करें।

३. मांस, मदिरा, सिग्रेट, बीड़ी, तम्बाकू का सेवन करने वाला न हो अथवा सर्वदा के लिए प्रतिज्ञा रूप में त्याग कर दे।

४. यज्ञ के दिनों का भोजन सात्विक होगा, लसुहन, प्याज आदि निषिद्ध हैं।

५. यज्ञ के दिनों में यम नियम का पालन करें, हजामत न बनवायें। खाली समय में जप अथवा स्वाध्याय करें।

६. यज्ञ से पूर्व स्नान करना होगा,

७. यज्ञ के समय पीत वस्त्र धारण करने होंगे जो यज्ञ के बाद उतार दिए जायेंगे।

८. यज्ञोपवीत जो यज्ञ के समय दिया जायेगा वस्त्रों के ऊपर रहेगा।

९. यज्ञ के वस्त्रों को पहने हुये कोई चीज नहीं खानी चाहिए अथवा शौच तथा लघुशङ्का के समय भी यह वस्त्र उतार देने चाहियें। आवश्यकता निपट जाने

पर यदि शौच किया है तो स्नान के बाद और दूसरी सूरत में मुंह हाथ धोकर वस्त्र पहनें और पग धोकर यज्ञशाला में जायें।

१०. चमड़े की कोई वस्तु हाथ में अथवा जेब में न हो।

११. यज्ञोपवीत नये धारण करने होंगे।

१२. जो आसन मिल जाये, यज्ञ समाप्ति तक उसी पर रहें, चाहे गरमी भी हो।

१३. रात्री को यथा संभव व्रती, भाई और बहनें ऋत्विज सहित एक ही स्थान पर विश्राम करें शासन और आत्मिकोन्ति कें भाव से यह शैली लाभदायक सिद्ध हुई है।

१४. यज्ञशाला के पास जूता ले जाना वर्जित है, यज्ञशाला में प्रवेश करने से पूर्व हाथ, पांव धो लें।

१५. स्त्रियो की मांग सीधी, सिर पर कपड़ा और यथा संभव सादा अथवा रेशमी पीली साड़ी का प्रयोग करें।

१६. मासिक धर्म की सम्भावना यज्ञ के बीच में हो तो देवी को यज्ञ में ब्रती नहीं बनाना चाहिए मासिक धर्म से निवृत हो कर चौथे दिन व्रती बन सकती हैं।

१७. छोटे छोटे बालकों को यज्ञ में न लायें ।

१८. यज्ञ की वस्तु अथवा पात्र दूसरे काम में न लायें ।

१९. यज्ञशाला पर सोना वर्जित है ।

सत्यभूषण
आचार्य

वैदिक भक्ति साधन आश्रम रोहतक
११–७–१७५९
२७ आषाढ़ २०१६
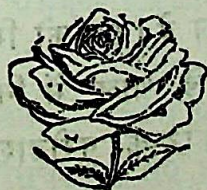
पुरोडाशम्

पुरोडाशम का संकेत तथा प्रयाप्त रूप से वर्णन ऋग्वेद मण्डल ३, सूक्त ५१ के आठ मन्त्रों से मिलता है कल्प सूत्र आदि में भी पाया जाता है। उसके बनाने की विधि नीचे दी जा रही है—

विधि—१ किलो साठी चावल, घृत शुद्ध ४०० ग्राम, चीनी ८०० ग्राम। चावलों को पानी में १५ मिनट भिगो रखें। दूसरे पतीले में ३ किलो पानी डालकर अग्नि पर चढ़ा दें। जब पानी उबलने लगे, चावलों को धोकर पतीले में डाल दें। जब पानी सूख जाए तत्काल अग्नि से उतार कर उसमें घी डाल कर हिला दीजिये और चीनी डाल कर कोयले के अंगारों पर १० मिनट रखकर उतार लीजिये। उसमें केसर १ माशा और इलायची दाना या जो मेवा डालना हो डाल दें। सब को मिलाकर दो मिण्ट ढ़क दें। फिर किसी बड़े थाल में निकाल कर फैला दीजिये। यह उत्तम प्रकार का पुरोडाश है।

हवन सामग्री

हविः शमीष्व सुशमि शमीष्व ॥ यजु० १-१५

अर्थात्

उत्तम प्रकार के दुःख शान्त करने वाले, यज्ञ करने योग्य पदार्थों की अत्यन्त शुद्धि करो, अत्यन्त शुद्धि करो।

सामग्री के पदार्थ उत्तम और शुद्ध होने चाहियें।

नीचे कई प्रकार की उपयोगी सामग्रियों के प्रयोग दिये जाते हैं :—

हवन सामग्री के नुस्खे

(१) जौ, तिल, चावल मखाने, चार-चार छटांक, किशमिश गोला (खोपरा), छुहारे, चिरौंजी बादाम, चूरा चन्दन सफेद, देवदारू आध आध पाव, अगर, तगर, पिस्ता तुमुल, कपूरकचरीं, गुग्गुल, नागर मोथा, बालछड़, नरकचूर, असगन्ध सुगन्ध वाला, तज, तेजपत्र कुलंजन, चीनी एक एक छटांक, इलायची, जायफल, लौंग आधी आधी छटांक, चीणां चार छटांक, गरम शुद्ध देशी घी दो सेर, समिधां दस सेर।

[पं० विद्यानन्द काशी निवासी का बताया हुआ]

२. सर्व ऋतु सामान्य हवन सामग्री

सफेद चन्दन का चूरा २४ भाग, अगर १५ भाग, तगर १५ भाग, गूगल ३० भाग, जायफल ७ भाग, जावित्री ७ भाग, दाल चीनी १५ भाग, तालीस पत्र १५ भाग, पनड़ी १५ भाग, लौंग १५ भाग, बड़ी इलायची १५ भाग, गोला ३० भाग, छुहारा ३० भाग, नागरमोथा १५ भाग, गुलाब के फुल ३० भाग, इन्द्र जौ १५ भाग, कपूर कचरी १५ भाग, आंवला १५ भाग किशमिश ३० भाग, बालछड़ ३० भाग, नागकेसर ७ भाग, तुम्बुर (तूम्बर) ३० सुपारी, नीम के पत्ते, राल १५ भाग, बूरा व खांड ६० भाग, घी ६० भाग, कुल=६०० भाग।

नोट—कपूर, घृत, खांड, मेवे आदि हवन के समय मिलाने चाहिएं।

वर्षा यज्ञ की सामग्री

१. आंवला १ सेर, छड़ेला ५ सेर, वायविड़ङ, २ सेर, उड़द (मास) २ सेर, जौ २ सेर, भात चावल ५ सेर, सरसों के पत्ते ३ सेर, सरसों के बीज १ सेर, पीली सरसों ३ सेर, दारु हल्दी १ सेर, निर्मली १ सेर, कुल=२६ सेर।

२. दाल चीनी १ पाव, खस १ पाव, शतावर २ पाव, लौंग २ पाव मजीठ २ पाव पद्माख २ पाव, चूरा चन्दन सफेद २ पाव =३ सेर दोनों समय के लिए

३. कापूर, २ तोले ऋतु ऋतु के फल आदि।

४. एक सेर चीनी के घृत से बने मिष्ठान में कस्तूरी एक रत्ती, केसर एक मासा, जायफल दो माशा जावित्री दो माशा।

५. समिधा—करी (करीह) की दस मन।

वर्षा यज्ञ की सामग्री

तिल १२ कि०, जौ ६ कि०, अक्खाचावल १० कि०, चीनी ५ कि०, चन्दन चूरा सफेद २ कि०, दारु हल्दी १ कि०, जटामासी १ कि०, सुगन्ध बाला १॥ कि०, कपूर आधा कि०, केला ३ दर्जन, गन्ना ४ नग, धूप की लक्कड़ सवा कि०, छड़छड़ी १ कि०, उड़द १ कि०, गोला आधा कि०, नागर मोथा २ कि०, किशमिश आधा कि०, छुहारा १ कि०, मूंगफली १ कि०, चनेका सत्तू ६ कि०, गाय की दही ६ कि० गाय का दूध ६ कि०, गुड़ ६ कि०, जावित्री…अगर, इलायची…, चावल तिल मिश्रित गोदुग्ध में खीर ५ कि०, गुग्गल… जायफल

६ कि०, शुद्ध घृत आधा कि०, दस कि० सामग्री को चर्व करने के लिये तथा शुद्ध घृत ३४ कि० प्रवाह के लिए।

समिधा—आम, पीपल, बड़, गूलर, बेर, बेंत, प्लाश, करीर (कैर), की समिधा सर्वोतम हैं।

[इस प्रयोग का अधिक भाग सविता से लिया गया है]

सुगन्धित लपटों वाली सामग्री का नुस्खा

(लेखक का अनुभूत)

काकड़ा सिंगी आधा भाग, तेजबल १ भाग, तग़र २ भाग, बालछड़ २ भाग, छड़ेला ५ भाग, नागर मोथा १ भाग, फूल गुलाब २ भाग, नीलोफर (कमल फूल) ५ भाग, शतावर १ भाग, शङ्ख पुष्पि १ भाग, नीम के पत्ते १ भाग, यूकलिप्टस के पत्ते आधा भाग, मैंहन्दी के पत्ते १ भाग, हरमल ४ भाग, बादाम १ भाग, गोला २ भाग, गोखरू ५ भाग, इटसिट आधा भाग, गिलोय १ भाग़, गुग्गल ढ़ाई भाग, चन्दन चूरा लाल ५ भाग, चन्दन चूरा सफेद ५ भाग, धूप लक्कड़ १ भाग, इलायची बडी आधा भाग़, चिरौंजी। भाग, मखाने १ भाग दारु हल्दी १ भाग, खस १ भास, असगन्ध १भाग, वायविडंग

॥ भाग, राल १ भाग, वन तुलसी ॥ भाग, कमललट्टे ॥ भाग, मुण्डी एक भाग, जावित्री । भाग, सौंफ एक भाग, कच्चूर ॥ भाग, नागकेसर एक भाग, तालीस पत्र एक भाग, तेजपत्र एक भाग, शीतल चीनी एक भाग मूङ्ग २ भाग चावल २ भाग, जौ एक भाग, कुठ कौड़ी । भाग, त्रिफला ३ भाग, अनानास के पत्ते डेढ भाग, गोंद कतीरा एक भाग = ७६॥ भाग ।

खाँसी दूर करने की हवन सामग्री

गूगल, लौंग, बिसौंटा, कपूर, कपूर देशी, बहेड़ा, गोखरु छोटा, गिलोय ताजी, किशमिश, मुनक्का, देवदारु अगर, चन्दन लाल, लसूड़ा, अखरोट की गिरी । यह सब सम भाग, मुलहटी चार भाग कूट लें ।

विधि—हवन करते समय चौथाई भाग मधु और इतना गोघृत मिलावें कि सामग्री खूब तर रहे । पीपल की सूखी लकड़ी से यज्ञ करें और छः छः माशे की कम से कम २१ आहुति निम्न मन्त्र की दें। यज्ञ दोनों समय करें । नित्य कर्म के बाद यह आहुति दें और मन्त्र के अर्थों पर विचार करें ।

ओं इन्द्रस्य या महो दृषत् क्रिमेर्विश्वस्य तर्हणी ।
तथा पिनष्मि सं क्रिमीन् दृषदा खल्वां इव ॥
अथर्व २-३१-१

अर्थ—बड़े ऐश्वर्य वाले यज्ञ की जो विशाल शक्ति प्रत्येक रोग के क्रिमी का नाश करने वाली है, उससे रोगकारो क्रिमियों को एक साथ ही ऐसा पीसकर विनाश करूं । सब्र जैसे शिला से चनों को पीसते हैं ।

पथ्य—भोजन में प्रातः किशमिश, मुनक्का, और गाय का दूध खूब गरम लेवें । मधु के साथ दोपहर को रोटी और शलगम, गाजर, परमल, पालक, मूली के साथ और सन्तरा, सेव अमरूद फल खावें । फल और सब्जी रोटो से दुगनी खानी चाहियें रात्री को भोजन में फल न खावें । मुनक्का किशमिश खा सकते हैं । रात को फिर दूध पीवें ।

क्षय रोग नाशक सामग्री

[डा० फुन्दन लाल क्षयरोग विशेषज्ञ का नुस्खा]

मण्डूक पर्णी' ब्राह्मी इन्द्रायण की जड़' शतावरी असगन्ध' विधारा, शालपर्णी' मकोय' अडूसा' गुलाब' के फूल' तगर' रासना' बंशलोचन [तवाशीर]' खीर

काकोली' जटामांसी' कुंडरी' गोखरू' पिस्ता' बादाम' मुनक्का' जायफल' लौंग' हरड़ बड़ी गुठली सहित' आमला' जीवन्ति' पुनर्नवा' नगेन्द्र' वामड़ी' चीड़ का बुरादा' खूबकलां' सम भाग। गिलोय' गुग्गुल चार भाग। केसर' शहद' कपूर देसी शक्कर—दस भाग' घी इतना कि सामग्री खूब चर्ब हो जाये जिसके लड्डू बन सकें शुष्क रह जाने पर खांसी हो जाने का भय है। सांठी के चावलों की खीर अलग बनाई जाए।

नोट—यज्ञ सूर्योदय तथा अस्त दोनों समय करना चाहिए। शीतकाल में प्रातः के स्थान पर दोपहर को भी कर सकते हैं।

चील अथवा वांस के जगंल में बैठकर यज्ञ करनां रोगी को विशेष हितकारी है, यज्ञ की अग्नि प्रदीप्त होनी चाहिए। आम अथवा ढाक की सूखी समिधा होनी चाहिए। धुआं विशेष स होना चाहिए। हवन के समय रोगी उच्चस्वर से यज्ञ मन्त्र उच्चारण करे। चिकित्सा के साथ साथ बस्ती कर्म तथा जल चिकित्सा भी रोग दूर करने में विशेष सहायक है। निर्बल स्वस्थ मनुष्य जिनको क्षय रोग होने का भय हो,

इसी सामग्री से नित्य प्रति यज्ञ करके क्षय रोग के भय से मुक्त हो सकते हैं।

दूसरा नुस्खा

[मेहता सीताराम दत्त लाहौर वाले का]

रोगी के कमरे में निम्नलिखित सामग्री प्रतिदिन दो अथवा तीन बार जलाओ ताकि घर और कमरे की वायु में इन औषधियां के परमाणु सम्मिलित होकर श्वास के साथ फेफड़ों में जाते रहें।

लोबान तथा बुरादा चन्दन सफेद ५-५ तोला। नीम के पत्ते, गिलोय के पत्ते, अडूसा के पत्ते दस दस तोया, मुशक काफूर २॥ तोला मिलाकर तैयार कर लो और पीपल या बेर की लकड़ी जलाकर उसमें धीरे धीरे आहुतितां डालें।

चेचक सामग्री का नुस्खा

हल्दी, नीम की निमोली, बहेड़ा, मेंहदी, चिरायता मधुयष्टि (मुलहटी=मीठी लक्कड़), खूवकलां, मुन्तका—आध आध छटांक। सरसों सफेद, हरमल—एक एक छटांक खांड—२ छटांक—कुल आठ छटांक

इसमें एक तोला शहद मिला दें। आध सेर साधारण हवन सामग्री में मिलाकर घृत में चरब करें और गायत्री अथवा मृत्युञ्जय मन्त्र द्वारा रोगी के कमरे में प्रातः सायं एक माला की आहुति दें।

मृत्युंजय मन्त्र

ओ३म् भूर्भुवः स्वः त्र्यंबकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्
उर्वारुकमिव बन्धनामृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥

खुजली के लिए सामग्री

हवन यज्ञ द्वारा टाईफाईड अथवा निरन्तर चढ़े रहने वाले ज्वर की अनुभूत सामग्रीं का नुस्खा

नीभ के पत्ते, चिरायता, पितपापड़ा, त्रिफला, शहद,
= = = = =
साधारण सामग्री।
॥

इन सबकी घृत मिलाकर एक माला गायत्री से आहुति दें।

खूबकलां ५ तो०, पीपल (मघा), २॥ तो०, करण्जवा १० तो०, गिलोय १० तो०, अजवायन ५ तो० जीरा सफैद ५ तो०, काली मिर्च ५ तो०, तुलसी के

पत्ते ५ तो०, गोघृत ५ तो०, गूगल १० तौला त्रिफला १० तो० ।

सब सामग्री को कूटकर घृत गरम करके उसमें मिला दें और कुछ चीनी भी मिला दें । प्रातः सायं रोगी के पास बैठकर कम से कम २४ आहुतियां ६-६ मर्शि की दें जब यह सामग्री समाप्त हो जाए, इसी अनुपात से और तैयार कर लें । प्रभु की कृपा ले ज्वर शीघ्र जाता रहेगा ।

आहुति मृत्युञ्जय मन्त्र से दें

त्र्यल्बकं यजामहे (पृष्ठ ३१९ पर)

सोमरस के लिए चार डिब्बे कुण्ड से ५-६ फुट ऊंचे लटकायें । प्रत्येक डिब्बे में नीचे ५ छोटे-छोटे छिद्र हों । एक डिब्बे में केवल सोमरस, एक में दूध जिसमें आठवां भाग जल शुद्ध मिला हो । एक में गरम किया शहद, एक में गरम किया घृत डालें । अग्नि खूब प्रचन्ड हो ।

इसके अतिरिक्त गूगल, चन्दन सफेद, चन्दन लाल और अजवायण की आहुतियाँ दिलवायें । सब रोग नष्ट हो जायें । अग्नि के रंगों को देखें तो मानसिक दोष दूर होकर अन्तःकरण शुद्ध हो ।

विशेष आहुतियों का विशेष फल

अजवायण से ज्वर दूर,

मोम से यक्ष्मा-दमा को लाभ,

मुन्नका से—नजला, कास को लाभ, सिर की थकान दूर।

शहद से नेत्र ज्योती बढ़ती है। अथर्ववेद ६-६९-२ में आया है कि शहद से कण्ठ शुद्ध होता है। गले की गांठें नहीं बढ़ती और इससे स्वर शक्ति बढ़ जाती है।

घृत से तेज बढ़ता है।

सफेद चन्दन से मास्तिष्क को बल मिलता है।

एक समय में मुन्नका और दूध मिलाकर गूगल सोमरस शहद तथा घृत की आहुत्तियां दिलवाई जायें तो अग्नि में सुन्दर रंग निकलते हैं जिनसे काम क्रोध लोभ मोह अहंकार पर विजय प्राप्त होती है सोमरस की आहुति सदा जलती समिधा पर डालें तो ब्रह्मरन्ध्र जैसा आकार बन जाता है।

केवल गूगल की आहुति से सर्व प्रकार के रोग और बुढ़ापा दूर होता है। स्वर्ग की प्राप्ति होती है।

राजयक्ष्मा (टी० बी०) के रोग शीघ्रगामी हिरणों के समान कांपते डरकर भाग जाते हैं। देखिए अथर्ववेद काण्ड १९ के नीचे दिये मन्त्र—

गूगल के लाभ

न तं यक्ष्मा अरुन्धते नैन शपथो अश्नुते।
यं भेषजस्य गुल्गुलो सुरभिर्गन्धो अश्नुते। अ १९-३८-१
विष्वञ्चस्तस्माद् यक्ष्मा मृगा अश्वा इवेरते।
यद् गुल्गुलुः सैंधवं यद् वात्यासि समुद्रियम् ।२।
उभयोरग्रभं नामास्मा अरिष्टतातये ॥३॥

भा०—जिसके शरीर को रोग नाशक गूगल का उत्तम गन्ध व्यापता है उसको राजयक्ष्मा (तपेदिक टी० वी०) के रोग नहीं पीड़ा देते नहीं घेरते और उसको दूसरे का निन्दा वचन भी नहीं लगता है वह सदा स्वस्थ प्रसन्न रहने से दूसरे के बूरे वचनों को भी बुरा नहीं मानता, उससे सब प्रकार के राजयक्ष्मा आदि शीघ्रगामी हिरणों के समान कांपते, डर कर भागते हैं ॥२॥

भा०—जो गूगल सिन्ध से उत्पन्न होता है अर्थात् नदी के तटों पर, उत्पन्न होता है और जो

समुद्र के तट पर उन दोनों के नाम स्वरूप का उस पुरुष के कल्याण के लिए उपदेश करता हूँ ॥ २-३॥

हवन सामग्री के नुस्खे

ऋतु अनुकूल

बसन्त ऋतु (चैत्र, वैशाख)

छरेला 4 भाग, तालीस पत्र 4 भाग, पत्रज 2 भाग, लज्जावन्ती 2 भाग, शीतल चीनी 2 भाग, कपूर 1 भाग, चीड़ 2 भाग, देवदारु 5 भाग, गिलोय 5 भाग अगर 3 भाग, तगर 3 भाग, नागकेसर 2 भाग, इन्द्र जौ 5 भाग, गूगल 5 भाग, कस्तूरी आधा भाग, तीनों चन्दन (सफेद, लाल, पीला) 8, 8, 8 भाग, जावित्री 4 भाग, जायफल 3 भाग, धूप 4 भाग, सरसों 10 भाग । कमल गट्टा 5 भाग, मजीठ 2 भाग, बनकचूर 4 भाग, दाल चीनी 2 भाग, गूलर की छाल 4 भाग तेजफल 4 भाग, शंखपुष्पी 6 भाग, चिरायता 5 भाग खस 8 भाग गोखरु 5 भाग चीनी 8 भाग, गोघृत 9 भाग ऋतु अनुकूल फल भात अथवा मोहन भोग । जाण्ड की समिधा 20 किलो ।

ग्रीष्म ऋतु (ज्येष्ठ आषाढ)

मुरा 4 वायविडंग 2, कपूर 1, चिरौंजा 2, नागर मोथा 1, पीला चन्दन 1, छरेला 4, निर्मली4, शतावर 4, खस 6 गिलोय 5, धूप 4, दालचीनी 1, लौंग 1, कस्तूरी 1/16, चन्दन 2, तगर 2, भोजपत्र 1, भात 4, कुशा की जड़ 4, तालीस पत्र 2, पद्माख 2, दारुहल्दी 2, लाल चन्दन 2, मजीठ 1, केसर 1/8, जटामांसी 2, नेत्रबाला 1, इलायची बड़ी 1, उनाब 2, आँवला 2, चन्दन चूरा 2, ऋतुफल 1, मूंग के लड्डू 8।

—:o:—

वर्षा ऋतु (श्रावण- भाद्रपद)

काला अगर 2, पीला अगर 2, जौ 4, चीड़ 2, धूप 2, सरसों 5, तगर 2, देवदारु 2, गूगल 8, नकछिकनी 2, राल 2, जायफल 4, मुण्डी 5, गोला 4, निर्मलो 4, कस्तूरी 1/16 मखाने 4, तेजपत्र 2, कपूर 1, बनकचूर 2, बेल 2, जटामांसी 4, छोटी इलायची 1, वच 2, गिलोय 4, तुलसी के बीज 3, वायविडंग 2, मुण्डी 4, शहद, चन्दन का चूरा 4, नाग केसर 2,

ब्राह्मी ३, चिरायता ३, उड़द के लड्डू, छुहारे ४, शंखाहुली ४ मोचरस २।

ढाक की समिधा, गोघृत, चीनी, भात।

—:o:—

शरद ऋतु (आश्विन कार्तिक)

तीनों चन्दन (सफेद, लाल, पीला) २, २, २, गूगल ८, नागकेसर २, इलायची बड़ी १, गिलोय ४, चिरौंजी २, बिदारीकंद २, गूलर की छाल ४, ब्राह्मी ४, दालचीनी २, कपूरकचरी २, मोचरस २, पितपापड़ा १, अगर १, भारंगी १, इन्द्र जौ ४ रेणु का १, मुनक्का ४, असगन्ध २, शीतल चीनी २, जायफल २, पत्रज २, चिरायता २, केसर १/८, कस्तूरी १/१६, किशमिश २, खांड ८, जटामासी २, तालमखाना २, सहदेवी २, ढाक की समिधा, धान की खील, क्षीर, कपूर, गोघृत, ऋतुफल।

—:o:—

हेमन्त ऋतु (मार्गशीर्ष-पौष)

कुट १, मूसली २, गन्ध कोकिला २, पितपापड़ा २, कपूरकचरी २, नकछिकनी २, गियोय ४, पटीलपत्र

१, दारचीनी २, भारंगी १, सौंफ ४, मुनक्का ४, कस्तूरी १/१६, चीड़ १, गूगल ८, अखरोट ४, रासना २, शहद ४, पुष्करमूल २, केसर ४, छुहारे ४, गोखरू २, कोंच के बीज २, कांटेदार गिलोय २, बादाम ४, मिलहटी २, काले तिल ४, जावित्री २, लाल चन्दन २, मुश्क बाला २, तालीस पत्र २, रेणु का १, खोआ ४, बिना लवण की खिचड़ी ८, आम या खैर की समिधा, गोघृत, देवदारू।

—:o:—

शिशिर ऋतु (माघ, फाल्गुन)

अखरोट ४, कचूर २, वायविडंग २, राल १, मुण्डी २, मोचरस २, गिलोय ४, मुनक्का ५, रेणु का २, काले तिल ५, कस्तूरी १/१६ केसर १/८, चन्दन ४, चिरायता ४, छुआरे ४, तुलसी के बीज ४, गूगल ८, चिरौंजी २, काकड़ा सींगी 4, शतावर ४, दारुहल्दी ४, शंखपुष्पी ५, पद्माख २, कौंच के बीज २, मोहन भोग १५ खांड ८।

नोट—औषधियों के सामने जो अंक दिए हैं, वे

भाग' के अर्थात् यदि 'भाग' से आपका अभिप्राय १ तोला हो तो जितने 'भाग' औषधि लिखी है उतने तोले 'लें। इस प्रकार न्यूनाधिक कर सकते हैं।

—:o:—

* ओ३म् *

परिशिष्ट—१

सोमरस

वेदों में सोम का बहुत बार वर्णन आया है। ऋग्वेद का ९ वां मण्डल सारा पावमान सोम का ही वर्णन करता है। यजुर्वेद में सोम की धाराओं से यज्ञ किये जाने का संकेत मिलता है, जैसे यजुर्वेद अध्याय २१ मन्त्र ३० के शब्द "पयः सोमः परिस्रुत घृतं मधु व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज" सोम, मधु धृत और दुग्ध की धाराओं से यज्ञ का विधान बता रहे हैं। १५, २१, २८ अध्यायों में प्रायः ऐसा ही सकेत धारा-प्रवाह आहुति का मिलता है। सामवेद के मन्त्रों में तो "पावमान पर्व" के अनेकों मन्त्र न केवल सोम का वर्णन करते हैं अपितु

इसका प्रयोग यजमान और ऋत्विज के लिए आवश्यक बताते हैं, कैसे तैयार किया जाये, क्या इसका लाभ है इस पर पर्याप्त प्रकाश मिलता है।

वन्दनीय स्वर्गीय महात्मा प्रभुआश्रित जी के चरणों में २५ वर्ष रहकर सोम क्या है कैसे उसका रस तैयार करें, कैसे धारायें प्रवाहित करें इसके लिए अनेकों परीक्षण किये गये। सोम एक जड़ी बूटि है जो आयुर्वेद के अनुसार हिमालय की हिमाच्छादित चोटियों पर मिलती है। गरुड़, गीध और कई आचार्य कव्वे तक को इसका ज्ञान है ऐसा वर्णन करते हैं इन पक्षियों की विशेषकर प्रथम दो की नेत्रशक्ति कितनी प्रबल है यह सब जानते है। मीलों ऊंचाई से अपने आखेट (शिकार) को देख लेते हैं।

हमारे एक आयुर्वेदाचार्य ने कहा था कि यह बूटी चन्द्रमा की कलाओं के साथ घटती बढ़ती है, मैं आपको (मुझे) किसी समय ला दूंगा। बरसों बीत गए, अब तक तो असल नहीं मिलो। श्री महात्मा जी महाराज मीठी कुठ को सोम जड़ी का बदल बताते थे और उसी के जोशांदा की धारायें बहाने का परीक्षण करते थे और बाद में इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि जो औषध अग्नि

में पड़ने से तिड़ तिड़ की ध्वनि करती है, वह सोम के गुण रखती है इसलिए चन्दन दुग्ध मधु आदि का प्रयोग साथ होने लगा।

उनके जीवनकाल में नागपुर में हमने अष्टग्रह तुष्टियज्ञों में अनेकों प्रकार की आठ धारायें चलाकर विचित्र परिणाम देखे। झांसी सदर समाज से सोमरस का प्रयोग किया तो पूर्णाहुति पर, सुगन्धित वर्षा हुई, लोगों ने बालटियाँ भर-भर उस सुगन्धित जल का प्रयोग किया और तृप्त हुए। भिवानी में ऋग्वेद के यज्ञ में ९ वें मण्डल की समस्त आहुतियां दिलवाईं जो कई एक औषधियों के प्रयोग से तैयार की गई थीं, उससे सर्वसाधारण जनता को बड़ा लाभ हुआ। सिर दर्द, पेट दर्द आदि तो तुरन्त ही काफूर हो गए। रोहतक आश्रम में अनेकों बार साम का सारा यज्ञ सोमरस से कराया, सोमरस का ही यज्ञ शेष बांटते रहे। कई पीड़ित रोगियों पर इसके प्रयोग ने आश्चर्यजनक प्रभाव किया। मण्डेट ग्राम में भी ऐसा ही प्रयोग किया। अब जिन औषधियों के मिश्रण से अद्भुत लाभ होता है वह कई आयुर्वेदाचार्यों के परामर्श से सोमरस तैयार किया जाता

है, उसके कतिपय लाभ तो निम्न वेदमन्त्रों से आपको मालूम हो जायेगा।

१–मीठी कुठ—

वनस्पति में सबसे अधिक बलशाली कुठ नामक औषधि पर्वतों में उत्पन्न होती है और कष्टदायक रोगों को दूर करती है। हिम आच्छादित देशों में होती हैं, गरुड़ पक्षी और गीध इसे जानते हैं। अ० ४–४–१

शतावर—सैंकड़ों रोगों को दूर करती, बलवर्धक राज्ययक्ष्मा का नाश करती है। अ० २०–३६–६

कुठ सोमवत गुणों से युक्त है, प्राण, व्यान और चक्षु के बल को बढ़ाती है। अ० ४–८–७

सबसे अधिक बलशाली है। अ० ५–४–१

सब प्रकार के ज्वरों, शिर के रोगों को इरेदित, निरन्तर रहने वाले, एक वर्ष पुराना रोग को दूर करती है। सब पीड़ाओं को हरती है।

अ० २०–३६, १, १०

सिर के रोग, चक्षु और शरीर के सबसे भीतरी मलों (गुर्दों) को निकालकर शरीर को हृष्ट-पुस्ट स्वच्छ और नीरोग करती है। अर्वव [जयदेव भाष्य]

२—पिप्पली (मघा)

पिप्पल्यः समवदन्तायतीर्जननादधि ।
यं जीवमश्नवामहै न स रिष्यासि पूरुषः ।।

भा०—(पिप्पल्यः) सब प्रकार की पिप्पली (सम् आवदन्त) परस्पर मानो ऐसा कहती हैं जन्म से लेकर हम (यम् जीवम्) जिस जीव को (अश्नवामहै) व्याप लेती हैं (सः पुरुषः) वह पुरुष कभी वात आदि रोगों से पीड़ित नहीं रह सकता ।

कुष्ट औषधि सिर के रोग, चक्षु और शरीर के सब भीतरी मलों (गद्दों) को निकाल कर शरीर को हृष्ट-पुष्ट स्वच्छ नीरोग करती है। अ० ५-४-१०

—:o:—

साम के प्रमाण

२— अत्यन्त इन्द्र सोमो निपूतो अधि बर्हिषि ।
एहीमस्य द्रवा पिब साम १५९

भा०—हे (इन्द्र !) जीवात्मन् ! (ते अयम् सोमः) तेरे लिये यह सोम भोग्य पदार्थ (निपूतः) नितराम पवित्र (अधि बर्हिषि) संसार में उत्पन्न किया

गया है। तू (एहि) आ (ईम् अस्य) इसको (द्रवा) प्राप्त कर और (पिब) इसका उपभोग कर।

२—य इन्द्र चमसेष्वा सोमश्चमूषु ते सुतः ।
पिबेदस्य त्वमीशिषे ॥ साम १६२

भा०—हे (इन्द्र) जीव ! (चमसेषु) चमसपात्रों में रखा हुआ (सोमः) सोमरस (चमूषु) ग्रह नामक पात्र में तैयार (ते) तेरे लिये (आसुतः) चलाया गया है। (पिव) इसका तू पान कर (इत्) ही (अस्य) इसका (तवं) तू (ईशिषे) स्वामी है।

३—सामवेद मन्त्र २६४ में लिखा है कि मधुर-भाषी स्तोता के सुख के लिये सोमपदार्थ सुख के लिए चिकित्सा करते हैं।

४—स्वादिष्ठया मदिष्ठया पवस्व सोम धारया ।
इन्द्राय पातवे सुतः ॥ साम० ४६८

भा०—अर्थात चुआया हुआ सोमरस जीवात्मा के पीने के लिये सुन्दर स्वादिष्ट और आनन्द दायक धार के रूप में टपकता है।

५—इन्द्रायेन्दो मरुत्वते पवस्व मधुमत्तमः ।
अर्कस्य योनिमासदम् ॥ मन्त्र ४७२

भा०—अति मधुर सोमरस ऋत्विजों के साथ यज्ञमान के लिये चूता है। मैं मन्त्रों के रचने वाले परमात्मा को प्राप्त करता हूँ।

६—असाव्यंशुर्मदायाप्सु दक्षो गिरिष्ठाः।
श्येनो न योनिमासदत् ॥ मन्त्र ४७३

भा०—पर्वतीय प्रदेशों में उत्पन्न होने वाला सोम यज्ञों में आनन्द के लिए चुआया गया है। जैसे पक्षी अपने घोंसलों में आ जाते हैं ऐसे ही सोमरस भी यज्ञगृह में लाया जाता है।

७—प्र सोमासो मदच्युतः श्रवसे नो मघोनाम्।
सुता विदथे अक्रमुः ॥ मन्त्र ४७७

भा०— जगत् में उत्पन्न हुए विद्वान् पुरुष आनन्ददायक सोमरस हमारे यज्ञमानों और धनवानों की कीर्ति तथा अन्न के लिए यज्ञशाला में पहुँचाये जाते हैं।

८—उपो षु जातमप्तुर गोभिर्भङ्गं परिस्कृतम्
इन्दुं देवा अयासिषुः ॥ सामवेद ४८७

भा०—विद्वान्जन चुआएं, दूध से साफ किये हुए

और जल से मिलाये हुए प्रसिद्ध सोमरस को प्राप्त करते हैं।

९—आविशन् कलशं सुतो विश्वा अर्षन्नभि श्रियः।
इन्दुरिन्द्राय धीयते। सामवेद ४८९

भा०—शरीर में प्रविष्ट होता हुआ सोमरस समस्त श्रियों को प्राप्त कराता हुआ जीव के लिए शक्तिदाता होता है।

१०—अध्वर्यो अद्रिभिः सुतं सोमं पवित्र आ नय।
पुनाहीन्द्राय पातवे॥ सामवेद ४९९

भा०—हे अध्वर्यु! पाषाणों के चुआये हुए सोम को दशा पवित्र में डाल, यजमान के पीने के लिए पवित्र कर।

११—तरत्स मन्दी धावति धारा सुतस्यान्धसः।
तरत्स मन्दी धावति॥ सामवेद ५००

भा०—जो पुरुष, अन्नरूप, सुन्दर चुआए गए सोमरस की धारा से यज्ञ करता हुआ परमेश्वर की स्तुति करता है वह स्तुति करने वाला अवश्य ही तर जाता है अर्थात् उत्तम गति पाता है।

१२–आ पवस्व सहस्त्रिणं रयिं सोम सुवीर्यम् ।
अस्मे श्रवांसि धारया । सामवेद ५०१

भाव— हे परमेश्वर ! तू हमें वेद ज्ञान के द्वारा सहस्रों प्रकार का धन, उत्तम बल और अन्न तथा यश प्रदान कर ।

१३–अनु प्रत्नास आयवः पदं नवीयो अक्रमुः ।
रुचे जनन्त सूर्य्यम् ॥ सामवेद ५०५

भा०— ज्ञानवृद्ध मनुष्य नवीन नवीन ज्ञान को क्रमशः प्राप्त करते हैं । वे ज्ञान प्रकाश के लिए कर्म तथा ज्ञान में प्रवृत्त कराने वाले सोमरस को औषधियों से निकालते हैं ।

१४–परीतो षिञ्चता सुतं सोमो य उत्तमं हविः ।
दधन्वां तो नर्यो अप्स्वा३न्तरा सुषाव सोममद्रिभिः ॥
सामवेद ५१२

भा०– हे यज्ञ करने वालो ! चुआए हुए सोमरस को इस पात्र में रखो, यह यज्ञ की उत्तम सामग्री है । इससे संसार की रक्षा होती है, यह मनुष्य मात्र का हितकारक है । इसको यजमान या ऋत्विक लोग यज्ञों के अवसरों पर पत्थरों के टुकड़ों से चुआते हैं ।

१५–आ सोम स्वानो अद्रिभिस्तिरो वाराण्वव्यया ।
जनो न पुरि चम्वोर्विशद्धरिः सदो बनेषु दध्रिषे ॥
सामवेद ५१३

भा०– पाषाणों से चुआया हुआ सोम, भेड़ के बालों (ऊनी कपड़ों) से छनकर, द्यु और पृथिवी लोक में शक्ति से वैसे ही प्रविष्ट होता है जैसे कोई मनुष्य किसी नगर में । यह सोम सभा में और यज्ञों में उपयोग किया जाता है ।

१६–सोम उ ष्वाणः सोतृभिरधिष्णुभिरवीनाम् ।
अश्वयेव हरिता याति धारया मन्द्रया याति धारया ॥
सामवेद ५१५

भावार्थ–जिस प्रकार यज्ञ कर्त्ताओं द्वारा पाषाण खण्ड से निचोड़ा गया, सोमरस विशेष शीघ्रगामिनी हरितवर्ण की धारा के साथ पात्र को प्राप्त होता है। वैसे परमेश्वर आनन्ददायक धारा के साथ योगी पुरुष को प्राप्त होता है ।

१७–इन्द्राय पवते मदः सोमो मरुत्वते सुतः ।
सहस्रधारी अत्यव्यमर्षति तमी मृजन्त्यायवः ॥
सामवेद ५२०

भा०—अनेक धाराओं से बहने वाला आनन्ददायक सोमरस ऋत्विजों से युक्त यजमान के लिए चुआया जाता है। वह रक्षा के योग्य मनुष्यों को प्राप्त होता है। मनुष्य ही उसको पवित्र करते हैं।

[पं० वैद्यनाथ शास्त्री के भाष्य से]

तुलसीकृत भाष्य देखिए—

पवस्व सोम मधुमां ऋता आपो वहानो अधिसानो अव्ये।
अव द्रोणानि घृतवन्ति रोह मदिन्तो मत्सर इन्द्रपानः॥

५३२

भा०— (सोम) सोमरस (अपः वसानः) जलों से मिला हुआ (मधुमान्) मधुर रस युक्त (ऋतावः) यज्ञ वाला (अव्ये) उर्णामय दशापवित्र पर (अधिसानः) अभिषेक किया हुआ=छना हुआ (मत्सरः) हृष्टि पुष्टि युक्त और (मन्दिन्तमः) अति हृष्टि पुष्टि कारक (इन्द्र-पानः) इन्द्र=सूर्य, राजा वा यजमान के पीने योग्य (पवस्व) प्राप्त हो तथा (घृतवन्ति) जल वाले द्रोणकलश में (अव रोह) रखा जाए।

सोम रस के सम्पादन करने वालों को उसमें मिठाई मिलाकर जलयुक्त गोली करके उनके दशापवित्र

पर द्रोण कलशों में भर कर रख के यज्ञ में वर्तना चाहिए। यह हृष्टि पुष्टि स्वाद से युक्त हृष्टि पुष्टि स्वादु बल देता है। [पं० तुलसी कृत भाष्य]

प्रतेधारा मधुमतीरस्टग्रन्वारं यत्पूतो अत्येष्यव्यम्।
पवमान पवसे धाम गोनां जनयंत्सूर्यमपिन्वो अर्कैः ॥ ५३४

भा०—(पवमानः) हे सोम! (मधुमतीः ते धारा) मधुरता युक्त तेरी धारै (तव अस्टग्रन) छुटती हैं (यत्) जब कि (पूतः) स्वच्छ किया हुआ (अव्येवारम्) उन के दशा पवित्र को (अत्येषि) लाँघ कर अग्नि में जाता है (गीना धामः) किरणों के पुञ्ज को (जनयन) उत्पन्न करता हुआ (अर्कैः) अपने तेज से (सूर्यं अपिब्वः) सूर्य को आयायित करता और (पवसे)गगन मण्डल को जाता है। [पं० तुलसी कृत भाष्य]

प्र गायताभ्यर्चाम देवान्त्सोमं हिनोत महेत् धनाय।
स्वादुः पवतामति वारमव्यमा सीदतु कलशं देव इन्दुः ॥ ५३५

भा०— हे मनुष्यो ! (देवःइन्दुः) दिव्य उत्तम सोम रस (कलशम्) द्रोणकलश में (आसीदतु) रखा जावे और फिर स्वादयुक्त सोमरस (अव्यं वारम्) ऊनी दशा पवित्र में (अति) उत्तर कर (पवताम्) छोड़ा जावे तुम।

(सोमं हिनोत्) सोमरस को अग्नि में हवन करो। उसमें (देवान्)वायु आदि देवताओं को (अभ्यर्चामि)सत्कृत करो-सुधारो और (महते धनाय) बड़े धन की प्राप्ति के लिए (प्रगायत) भली प्रकार परमात्मा का उच्चारण करो।

(५३७) के भावार्थ में पं० तुलसीदास जी लिखते हैं कि यद्यपि द्रोणकलश में स्थापित सोमरस का जल अग्नि में होम किया जाय तब उस सोम को संपर्क किरणों से होवे परन्तु जितने समय का आरंभ ही होता है और सोम रस द्रोण कलश में रखा जाता है और प्रशंसा करने वाले याजक पुरुष की वाणी वेद मन्त्रों में उसका वर्णन करती है इतनी ही किरणें मानों कोई स्त्रियां अपने प्यारे पति से स्पर्श करती है, ऐसी कामना करती हुई झट द्रोण कलश स्थित सोम रस से स्पर्श करती हैं।

सोमरस से यज्ञ पर किरणें ऐसी दौड़ती हैं जैसे पत्नी अपने प्रिय पति से स्पर्श करती है। ५३७

सोम के सम्बन्ध में अद्भुत विचार

सामवेद का पावमान पर्व ११९ मन्त्रों का है। जीवात्मा को १९ करण जीवन सिद्धि के मिले हैं पांच ज्ञानेन्द्रियां, पांच कर्मेन्द्रियां, पांच प्राण, मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार—यह सूक्ष्म शरीर है जो जीव के साथ सदा रहता है। इसी में उसको कर्मफल मिलता है। सूक्ष्म शरीर के १९ अवयव और उतने ही प्रकार के रोग हैं। भगवान् की अपार दया है कि रोग के साथ साथ उसका प्रतिकार औषध भी विद्यमान है। सामवेद और आयुर्वेद इस बात का संकेत करते हैं कि सोमरस ही इन सब रोगों की अचूक औषध है मानो सोम सर्वोषधियों का शिरोमणि प्राण रूप है। जिन रोगों का निदान न हो सका वहां पर भी इसने अलौकिक प्रभाव दिखाये। जितने प्रमाणों का हमने ऊपर वर्णन किया है उनमें आपने देखा कि यह सर्वोत्तम सामग्री है– (प्रमाण १४) इससे संसार की रक्षा भी होती है यह मनुष्य मात्र का हितकारक है।" यह जीवात्मा के पीने के लिए सुन्दर, स्वादिष्ट और आनन्द-दायक है। (प्रमाण ४)

सोमरस यजमानों और धनवानों की कीर्ति तथा अन्न के लिए यज्ञशाला में लाया जाता है। (प्रमाण ७) "सोमरस समस्त श्रियों को प्राप्त करता हुआ जीव के लिए शक्तिदाता होता है।" ६

"सोमरस से यज्ञ करने वाला उत्तम गति को पाता है।" ११

११६ मन्त्रों में पहला १ तो जीवात्मा का बोध कराता है और १६ उसके सूक्ष्म शरीर का, ऐसे देह-धारी आत्मा के लिए सोमरस एक विचित्र औषध है। परीक्षण करके देखिए। हम यह नहीं कहते कि यही सोमरस जिसका प्रयोग नीचे दिया जा रहा है अथवा जिससे हमने अनुभव लिए हैं, यही ही है और नहीं, हमारा तो एक बच्चों का सा परीक्षण है, विद्वान् और श्रद्धावान् इसे अधिक उपयोगी बना सकते हैं। याजकों को इससे अवश्य लाभ उठाना चाहिये।

मात्रा २॥ तोले प्रातः सायं अथवा कमोबेश अस्तु !

अब प्रयोग

सोमरस तैयार करने की विधि

शंखपुष्पी आधा किलो, ब्राह्मी १/४, शतावर १ किलो, चन्दन चूरा सफेद २५० ग्राम, गिलोय २५० ग्राम, गुलाब के फूल २४० ग्राम, जटामांसी ५० ग्राम, वच ५० ग्राम, बनतुलसी २५० ग्राम, (अतिबला, महा-बला, नागबला, बला) सब ५०० ग्राम, मुनक्का २५० ग्राम, कर्पूर १ माशा, अर्जुन की छाल २५० ग्राम, अपामार्ग ५० ग्राम, कुठ मीठी १०० ग्राम, पीपल बड़ी ५० ग्राम, मुलहटी ५०० ग्राम, असगन्ध ५०० ग्राम, बिदारीकन्द ५०० ग्राम, कपूरकचरी २५० ग्राम, माल-कंगनी ५०० ग्राम, काकड़ासींगी १२५ ग्राम, इटसिट (पुनर्वा), मेधा, महानिधा, काकूली, खीरकाकूली, वृद्धिक, वृद्धि, जीवत रिषभक्, जोबला, प्रत्येक ५० ग्राम, बालछड़ ५० ग्राम ।

इन सब दवाईयों को कूटकर आठ गुणा जल में भिगो रखें। १२ घण्टे के बाद इनका जुशांदा बनायें, १/३ जल शेष रह जावे ।

अब यदि एक किलो जुशांदा हो तो उसमें मधु ३०० ग्राम, गोघृत १५० ग्राम, गोदुग्ध एक किलो,

नारियल २५० ग्राम मिला दें। फिर इसकी आहुतियाँ दें।

यदि अर्क निकालना हो तो पांच गुणा पानी मिला कर अर्क निकाल बोतलों में रखें और यथा समय प्रयोग करें।

यदि सोमरस की आहुतियां दिलवानी हों और धारा चलानी है तो ५ डिब्बे दो-दो किलो वाले लें। उनके नीचे १, २, ३, ५ क्रमशः छोटे छिद्र मोटी सूई से निकालें और आहनी तार के द्वारा कुण्ड पर लटका दें, पांच छिद्रों वाले डिब्बे में शहद, तीन वाले में दुग्ध १/४ भाग जल मिला हुआ, दो वाले में सोम रस और एक वाले में घृत डालें। अग्नि खूब प्रचण्ड हो। धारायें पड़ने से अग्नि के रंग बदलते रहेंगे, उन रंगों की ओर ध्यान से दृष्टि रखें, आपकी आन्तरिक कुवासनायें काम क्रोध आदि की दग्ध होकर अन्तःकरण शुद्ध पवित्र होता जायेगा।

अथवा यजुर्वेद के अध्याय १८-१९-२९ मन्त्र से अन्त तक २२ और २८ में दूध और सोमरस की धारा के साथ-साथ घृत की धारा नलकी के द्वारा जारी रखें, अग्नि में जहां सफेद, लाल, नीला, हरा रंग से

संयुक्त ज्वाला उठेगी वहां नलकी से शुभ्र रंग की आकर्षक लड़ी नीचे जल की धारा की भांति नीचे बहती दिखाई देगी, परमेश्वर की अद्भुत लीला का स्मरण होगा। यह सफेद लड़ी सुषुम्णा नाड़ी का रूप रंग दिखाती है।

यह अनुभूत रहस्य है जो वर्षों के बाद प्राप्त हुआ है। आजमाइये, लाभ उठाइये।

* ओ३म् *

परिशिष्ट--२

पावमानीर्दधन्तु न इमं लोकमथो अमुम्।
कामान्त्समर्धयन्तु नो देवीर्देवैः सामाहिताः॥

साम १३०१

भा०—समस्त देवों के ज्ञान से युक्त दिव्य गुण वाली वेद वाणियां हमें यह लोक और इसके अनन्तर परलोक प्राप्त कराती हैं। वे हमारे मनोरथों को सफल करती हैं। [वैद्यनाथ भाष्य]

उपरोक्त मन्त्र से केवल यह दिखाना अभीष्ट है

कि वेदवाणी के अन्दर हमारे कल्याण की और मनोरथों को सिद्ध करने की शक्ति है। भगवान् ने स्वयं यजुर्वेद-२६-२ में वेदबाणी को कल्याणी वाणी कहा, देखिये—

यथेमां वाटं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः।
ब्रह्मराजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय।
प्रियो देवानां दक्षिणायै दातुरिह भूयासमयं मे कामः समृध्यतामुपमादो नमतु ॥

भा०—परमात्मा सब मनुष्यों के प्रति इस उपदेश को देता है कि चारों वेद रूप कल्याणकारिणी वाणी सब मनुष्यों के हित के लिये मैंने उपदेश की है, इस में किसी को अनाधिकार नहीं है। जैसे मैं पक्षपात को छोड़के सब मनुष्यों में वर्तमान हुआ प्यारा हूं, वैसे आप भी होओ। ऐसा करने से तुम्हारे सब काम सिद्ध होंगे।

[दयानन्द भाष्य]

इसी प्रकार ऋग्वेद १०–१६४–४ में कहा—

ओ३म् शतं जीव शरदो वर्धमानः शत हेमन्साञ्छतमु वसन्तान्। शतमिन्द्राग्नी सविता बृहस्पतिः शतायुषा हविषेमं पुनर्दुः ॥

भा०—हे मनुष्य! तू बढ़ता हुआ सौ वर्ष तक जीवन धारण कर। सौ हेमन्त और वसन्तों तक जी।

इन्द्र विद्युत् चिकित्सा, अग्नि चिकित्सा, सूर्य किरण चिकित्सा, बृहस्पति-मानस चिकित्सा तथा हवन चिकित्सा इनका योग्य रीति से सेवन करने पर अवश्य दीर्घायु प्राप्त होती है।

कष्ट कैसे दूर होते हैं

यथा वातश्च्नावयति भूम्यां रेणुमन्तरिक्षाच्चाभ्रम् ।
एवा मत् सर्वेदुर्भूतं ब्रह्मनुत्तमपायति ॥

अथर्व १०—१—१३

भा०—(यथा) जिस प्रकार [वातः] वायु का तेज झोंका [भूम्याः] भूमि से [रेणुम्] धूली को और [अन्तरिक्षात च अभ्रम्] अन्तरिक्ष से मेघ को [च्यावयति] उड़ा ले जाता है, [एवा] इसी प्रकार [सर्वम्] सब प्रकार के [दुर्भूतम्] कष्ट [ब्रह्मनुत्तम] ब्रह्मज्ञान या वेदज्ञान से ताड़ित होकर [अप अयति] दूर भाग जाते हैं ॥ [जयदेव]

मनु महाराज ने सबसे ज्येष्ठ और श्रेष्ठ आश्रम गृहस्थ को बताया। श्रेस्ठ पुरुष को दुख क्यों? परन्तु वास्तव में वर्तमान युग में सबसे बड़ा दुखी कोई है तो वह गृहस्थी है। चुनांचि जहां भी हमें यज्ञ तथा वेद प्रचारार्थ जाने का अवसर मिला वहां प्रायः देवियां अपनी गार्हस्थ्य की व्यथित गाथायें बड़े दर्दभरे शब्दों

में सुनाती हैं। जो-जो उपचार जाप तथा यज्ञ द्वारा हमने बताये और उपयोगी सिद्ध हुये वह हम गृहस्थियों के हितार्थ नीचे दे रहे हैं। अस्तु !

गृहस्थ दुःख निवारण कायाकल्प यज्ञ की विधि विधान की पुस्तक मंगलमयी मां की प्रेरणा से १९७८ में प्रकाशित की गई जिससे अनेकों गृहस्थियों को घरेलू व व्यवहार सम्बन्धी कष्ट दूर होकर अब निहाल हैं। इस लघु पुस्तिका का मूल्य केवल १-२५ पै० है प्रत्येक कष्ट के दूर करने के लिए अलग-अलग प्रकार की सामग्री है। आप भी मंगवाकर लाभ उठा सकते हैं।

१. सन्तान सम्बन्धी—

क) सन्तान नहीं हुई। इसका एक कारण तो भाग्य में नहीं है, अर्थात् पूर्व जन्म में ऐसा कोई कर्म नहीं किया जिससे सन्तान हो। उसका प्रतिकार है नया कर्म करो अर्थात् ब्रह्मचर्यपूर्वक जीवन बिताते हुये कम से कम २४ लाख गायत्री का पहले दोनों स्त्री-पुरुष अनुष्ठान रूप से जाप करें। इस पर कम से कम ८ मास लगेंगे फिर किसी विज्ञ निष्ठावान पुरुष से पुत्रेष्ठि यज्ञ करायें। पुत्रेष्ठि यज्ञ की विधि अलग से छपवाई जायेगी। अनुष्ठान में सर्व प्रकार के दुर्व्यसनों का सर्वथा परित्याग अनिवार्य है।

ख) सन्तान न होने का एक और कारण स्त्री अथवा पुरुष के रज वीर्य में दोष है। यह दोष किस में है उसकी पहचान के लिए दो मिट्टी के प्याले लेकर उनमें खेत की शुद्ध मिट्टी भर दें और अलग-अलग स्थान पर रखकर जौ के दाने अर्द्ध मुट्ठीभर बीज दें और प्रति-दिन अपने-अपने मूत्र से उनको सींचा करें। दाने खुली हवा में रखें जहां धूप भी लग सके। दो चार दिनों में दाने फूट पड़ेंगे। जिसके न उगें उसमें दोष है, उसका उपचार करना चाहिये। औषधोपचार के दिनों में ब्रह्मचर्य का पालन करें।

मासिक धर्म (रक्त) बन्द हो तो कपास के पत्ते, कपास के फूल ४-४ तोले लेकर एक किलो पानी में जुशादा करें, चौथाई रह जाये, छानकर दो-से-चार तोले तक गुड़ मिलाकर कई दिन प्रयोग करें।

स्त्रियों का स्वभाविक ऋतुकाल १६ रात्रि का है अर्थात रजोदर्शन दिन से लेके सोहलवें दिन तक ऋतु-समय है, उसमें से प्रथम की चार रात्री अर्थात जिस दिन रजस्वला हो उस दिन से लेके चार दिन निन्दित हैं, प्रथम, द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ रात्री में पुरुष स्त्री और स्त्री पुरुष का सम्बन्ध कभी न करे अर्थात् उस रजस्वला के हाथ का छुआ पानी भी न पीवे

न वह स्त्री कुछ करे किन्तु एकान्त में बैठ प्रभु भजन करे अथवा स्वाध्याय करे। क्योंकि इन चार रात्रियो में समागम करना व्यर्थ और महारोग कारक है। रजः स्त्री के शरीर से एक प्रकार का विकृत उष्ण रुधिर, जैसा कि फोड़े में से पीप रुधिर ही निकलता है।

इसी प्रकार इन चार रात्रियों के अतिरिक्त ११वीं और १३वीं रात्री भी निन्दित हैं और बाकी दस रात्री ऋतुदान देने में श्रेष्ठ हैं।

जिनको पुत्र की इच्छा हो वह ६ठी, ८वी, १०वीं, १२वीं, १४वीं, १६वीं यह ६ रात्री ऋतुदान में उत्तम समझें परन्तु इनमें भी उत्तरोत्तर श्रेष्ठ है और जिनको कन्या की इच्छा हो वह ५वीं, ७वीं, ९वीं, १५वीं रात्रि यह चार रात्रि उत्तम समझें। अतः पुत्र को इच्छा वाला सम रात्रियों में और कन्या की इच्छा वाला विषम रात्रियों में गृहस्थ करे।

परन्तु सावधान रहें कि पौर्णमासी, अमावस्या, चतुर्दशी वा अष्टमी रात्रि को भी ऋतुदान वर्जित है यदि इन दिनों में समागम किया और गर्भ ठहर गया तो

सन्तान बटमार लफंगी, दुःखदायी होगी अतः बहुत सावधान रहें ।

(ग) रज वीर्य में दोष नहीं अथवा पुत्रियां ही पैदा होती हैं तो उसके लिए निम्न प्रयोग बर्तिये, प्रभु कृपा से पुत्र ही होगा :—

रजस्वला को चौथे दिन प्रातः स्नान करके वस्त्र पहन सिर के बाल बिखेर कर पति सहित सूर्य के सामने खड़ा हो जाना चाहिए, दोनों स्त्री पुरुष ९—९ दाने मोटे शिवलंगी के बीज हाथ में लेकर सूर्य भगवान् की ओर मुख कर तीन बार मन ही मन गायत्री का उच्चारण कर अपने-अपने मुख में डालें और चबाते हुए ऊपर से डेढ डेढ पाव दूध गरम काली गाय का मीठा मिला हुआ पान करें। याद रहे कि दूध काली गौ का ही हो, दूसरी का नहीं। यह क्रिया ९ दिन जारी रखें अर्थात् ८१-८१ दाने शिवलिंगी के अलग उपरोक्त विधि से प्रयोग करें और ब्रह्मचर्य से रहें।

बारहवें दिन रात्रि को १२ बजे के बाद प्रभु प्रार्थना करते अपने मनोरथ को सामने रखते हुए गृहस्थ करें। वीर्य सिंचन के बाद स्त्री योनि संकोच करे।

विमुक्त होने पर गरम दूध पीकर अलग अलग सो जायें। प्रभु ने चाहा गर्भ ठहर गया तो सावधानी से गर्भ की रक्षा करें। गर्भ न ठहरा हो तो दूसरे मास पुनः वही प्रयोग करें। प्रभु कृपा करेंगे।

[यह अनुभूत प्रयोग है]

(घ) उपर्युक्त अवस्था में आवश्यक है कि परम पिता परमेश्वर के चरणों में अगाध श्रद्धा तथा निष्ठा हो। उसके लिए दो बातों की ओर ध्यान देना परमावश्यक है :—

(१) प्रतिदिन कम से कम २५ माला गायत्री जाप करें और उसका दसवां भाग आहुति दें।

आहुति स्नानान्तर शुद्ध पवित्र (पीत वर्ण) हो तो और अच्छा है, धारण कर दें।

(२) माँस, मदिरा, तम्बाकू, सिगरेट, नसवार का सर्वथा त्याग कर दें क्योंकि कहा है—

अग्ने यं यज्ञमध्वरं विश्वतः परिभूरसि।
स इद्देवेषु गच्छति॥ ऋ. १-१-४

अर्थात् प्रभु देव को वही यज्ञ स्वीकार होता है जो अध्वर है। जिस में हिंसा न हो।

(३) गर्भ ठहर जाने पर निम्न वेद मन्त्र से प्रतिदिन २४ आहुति दिया करें जब तक कि प्रसव नहीं होता।

इदं हविः प्रजननंमेऽस्तु दश वीरम् सर्वगणम् स्वस्तये।
आत्मसनि प्रजासनि पशुसनि लोकसन्यभयसनि।
अग्निः प्रजां बहुला मे करोत्वन्नं पयो रेतोऽअस्मासु धत्त ॥ यजु० १६–४८

भा०– जो स्त्री पुरुष ऋतुगामी होकर प्रजा की उत्पत्ति करते हैं उनकी वह प्रजा सुखयुक्त होकर माता पिता आदि को निरन्तर सुखी करती है।

रोष

कभी कभी पति पत्नि में कलह इतना बढ़ जाता है कि पारस्परिक सद् व्यवहार में रोष उत्पन्न हो जाता है और एक दूसरे का मुख नहीं देखना चाहते और प्रायः यह अत्याचार देवियों पर होता है। उसका एक उपचार है जो सब के लिए लागू है।

उपचार

जिस किसी को मनाना अथवा वश में करना हो तो निम्न मन्त्र को स्नान के बाद शुद्ध वस्त्र पहन कर

सूर्य देवता के सामने बैठकर अनुष्ठान रूप से १० लाख जाप करें। मध्यान्ह पश्चात् नहीं।

ओ३म् यदद्य कच्च वृत्रहन्दुगा अभि सुर्य।
सर्वं तदिन्द ते वशे ॥ [सामवेद १२६]

हे (वृत्तहन्) आवरणकारी अज्ञानपटलों के नाशक ! हे (सूर्य) सूर्य समान तेजस्विन् (एवम्) एवं (इन्द्र) आत्मन् (यत् अद्य) जो आज के समान नित्य (सम् अभि) जिस पदार्थ को भी लक्ष्य करके तू (उद्ध अगाः) उठता है (तत् सर्वं ते वशे) वह सब तेरे वश हो जाता है। [जयदेव भाष्य]

अर्थ—हे सबके प्रेरक प्रभो ! जो कुछ भी उत्पन्न दिखाई देता है, वह सब तेरे ही अधीन है। कृपया मेरे पति/मेरी पत्नी को मेरे अनुकूल करें।

नोटः— अन्तिम रेखाङ्कित शब्दों के उच्चारण के समय रुष्ट व्यक्ति का आकार सामने लावें और अपने भावों को प्रार्थना रूप में सम्मुख व्यक्त करें।

अथवा—इसी मन्त्र से एक किलो शंखपुष्पी में एक छटांक घृत मिलाकर छः छः माशे की प्रतिदिन सवा लाख तक आहुति दें। प्रभु कृपा से मनोरथ सिद्ध होगा।

(३) कभी कभी यह भी सुना गया कि देवी पर

जिन भूत की छाया है अथवा पकड़ में है। हम जिन भूत अथवा पकड़ नहीं मानतें, यह केवल भ्रम ही होता है जो मन में उठकर देवी को चैन नहीं लेने देता परन्तु चूंकि हमारे सामने विशारद पास देवियां भी इसी शिकार की वशीभूत लाई गईं तो निम्नलिखित प्रयोग से गायत्री की आहुति दिलवाने से भ्रम निवारण हो पकड़ से मुक्ति मिली, आप भी आजमा देखें।

प्रयोग :– गूगल की एक-२ माशे की गोली बना कर कम से कम एक माला की आहुति दें जब तक सिद्धि न हो जाए।

अथवा निम्न मन्त्रों से गूगल और अपामार्ग की आहुति दें :—

१—गायत्री मन्त्र से १ माला प्रतिदिन आहुति दें।

अथवा

१—अव मा पाप्मन्त्सृज वशी सन् मृडयामि नः।
आ मा भद्रस्य लोके पाप्मन् धेह्यविह्रुतम्॥ अ६-२६-१॥

भावा०—हे (पाप्मन्) पाप के भाव! (मा अवसृज) मुझ से दूर रह तू (वशी सन्) वश में आकर (नः) हमारे (मृडयासि) सुख का कारण हों। हे पाप्मन्! पाप के भाव (माम्) मुझको (अविह्रुतम्) निष्कपट

भाव से (भद्रस्य लोके) कल्याणमय लोक में (आधेहि) रहने दे।

२—परोऽपेहि मनस्पाप किमशस्तानि शंससि।
परेहि न त्वा कामये वृक्षान् वनानि सं चर गृहेषु
गोषु मे मनः ॥ अ ६-४५-१ ॥

भा०हे (मन पाप) मानसिक पाप ! कुविचार ! (परः अपेहि) दूर हट जा, (अशस्तानि किं शंससि) तू निन्दा करने योग्य कार्य करने को क्यों कहता है। (परा इहि) चल परे हो ! (न त्वा कामये) मैं तुझे नहीं चाहता ! हे (मनः) मेरे मन ! तू पाप से हटकर (वृक्षान् वनानि संचर) हरे हरे वृक्षों और वनों उपवनों में विहार कर और (गृहेषु संचर) अपने घर की व्यवस्थाओं और गोपालन में तत्पर हो।

४—यदि बुरे स्वप्न आते हों अथवा दौरे पड़ जाते हों तो निम्न मंत्र से अपामार्ग (पुटकण्डे) की मूल, डण्डी, पत्ते, शाखाओं और चावलों से छः छः माशे की कम से कम २४ आहुति जब तक आवश्यकता हो, दें, इस सामग्री में १/१६ भाग प्रति किलो घी मिलायें।

[विदित हो कि स्वप्न में इन्द्रियां प्राण में मन में लीन हो जाती हैं और स्वप्न केवल पांच सैकिण्ड रहता है।]

३—अपाघमप किल्बषमप कृत्यामपो रपः ।
अपामार्ग त्वमस्मदप दुःस्वपन्य ँ् सुव ॥
॥ यजु० ३५।११ ॥

अपामार्ग औषधि से पाप, मन की मलिनता, चञ्चलता तथा अनेकों प्रकार की दुष्ट क्रियायें तथा दुःस्वप्न दूर होते हैं।

५ शत्रु तथा विपत्ति टालने का मन्त्र

निम्न मन्त्र से कई दिन निरन्तर प्रातः सायं २४ आहुतियों द्वारा स्निग्ध सामग्री गूगल दो भाग, चन्दन चूरा सफेद एक भाग से विपत्ति दूर हो सकती है—

मन्त्र—अग्निवत्राणि जंघनद् द्रविणस्युर्विपन्यया ।
समद्धि शुक्र आहुतः ॥ ऋग्वेद ॥

भा०—यज्ञ द्वारा प्रेरित किया हुआ स्तुत्य, शुद्ध स्वरूप तथा समस्त धनों का स्वामी परमेश्वर शत्रुओं तथा विपत्तियों का नाश करता है, (हे प्रभो ! हमारे कष्ट का निवारण करो) अथवा

पाहिनोऽग्ने रक्षसः पाहि धूर्त्तेरराव्णः ।
पाहि रीषत उत वा जिघासतो बृहद् भानो यविष्ठच॥
ऋ० १/३/१०/१५

भा०– (अग्ने) हे सर्व शत्रु दाहकाग्ने परमेश्वर ! राक्षस हिंसक दुष्ट स्वभाव देहधारियों से हमारी पालना और रक्षा करो। कृपण (कंजूस धूर्त)—जो बटमार उस पुरुष से भी हमारी रक्षा करो। जो हमको मारने लगे तथा जो मारने की इच्छा करता है, हे महातेज, बलवजम ! उन सबसे हमारी रक्षा करो ॥ (दयानन्द)

अग्नि प्रचण्ड रहे, धुआं न करे।

६—बालक या कोई सम्बन्धी गुम हो गया हो और पीछे वाले परेशान हों तो घनिष्ठ नजदीकी सम्बन्धी निम्न मन्त्र का कम से कम २५ माला निरन्तर जाप करे। गुमशुदा का या तो आकार सामने आकर पता लग जाएगा कि जीवित है या मर गया है। प्रभु प्रेरणा से वह स्वयं ही आपको सूचना देगा या लोट आएगा।

मन्त्र—यद्‌धावसि त्रियोजनं पञ्चयोजनमाश्विनम्।
ततस्त्वं पुनरायसि पुत्राणां नो असः पिता ॥
अ० ६-१३१-३

भा०—पत्नी कहती है–हे प्रियतम ! (यद्‌ धावसि त्रियोजनम्) यदि तू तीन योजन या (पञ्चयोजनम्) पांच

योजन या २० मील वा (आश्विनम्) घोड़े जैसी शीघ्र गामी सवारी से जाने योग्य दूरी पर भी (धावसि) चला जाए तो भी (ततः) उस दूर देश से (त्वं पुनः आ अयसि) फिर लौट आ, क्यूंकि तू ही (नः) हमारे पुत्राणाम्) पुत्रों का पिता है ॥ (जयदेव भाष्य)

नोट—योजन का अभिप्राय केवल मीलों की दूरी से नहीं अपितु जितनी भी दूरी पर है, उससे मुराद है।

अथवा

यदि वासि तिरोजनं यदि वा नद्यस्तिरः ।
इयं मह्यं त्वामोषधिर्बद्ध्वेव न्यानयत् ॥

अ० ७-३८-५ ॥

भावा०—हे पुरुष ! (यदि वा) चाहे तू (तिरः जनम्) जनों से भी परे, जंगलों में (यदि वा) और चाहे (नद्यः) नदी के (तिरः) पार हो। (इयम्) यह (औषधिः) औषधि जिसे मैं स्वयं धारण करती हूँ (त्वाम्) तुमको (मह्यम्) मेरे लिए (बद्ध्वा इव) मानो बांधकर (नि-आनयत्) ले आएगी। [जयदेव भाष्य]

महर्षि दयानन्द ने यजुर्वेद अध्याय १४, मन्त्र १० के भाष्य में "पंचाविर्वयो गायत्री छन्दः" पंच इन्द्रियों

की रक्षा के हेतु औषधि के समान तू (गायत्री) गायत्री (छन्दः) मन्त्र के (वयः) विज्ञान को बढ़ा" अर्थ किया है। अर्थात् इस मन्त्र के स्थान पर गायत्री द्वारा दी हुई आहुति भी लाभदायक हो सकती है।

इस मन्त्र से शंखपुष्पी की कम से कम पांच माला प्रतिदिन आहुति दें। अधिक से अधिक सवा लाख आहुति दें। आहुति के साथ साथ मन ही मन भगवान् से प्रार्थना करें कि भगवन्! रुष्ट अथवा गुम गया जीव तेरी महती कृपा से शीघ्र पुनः अपने घर लौट आये, परिवार तथा सम्बन्धियों की परेशानी और चिन्तायें दूर हों। प्रभु देव अवश्य कृपा करेंगे।

परन्तु स्मरण रहे कि भावना अथवा प्रार्थना में चार चीजों का होना अत्यावश्यक है, यही वेद की आज्ञा और परमेश्वर की स्वीकृति देने की प्रतिज्ञा है, (१) नम्रता (२) व्याकुलता (३) सत्यता और (४) मधुरता

अथ श्री सूक्त—

(७) आर्थिक संकट निवारण करने के लिए गूगल ४ भाग तथा श्वेत चन्दन चूरा १ भाग, मिलाकर ३-३

माशे की कूट कर जल का छींटा दे, ६ ग्राम गोघृत या शुद्ध घृत मिलाकर प्रतिदिन प्रातः नित्यकर्म के पश्चात् एक बार निम्न मन्त्रों को शुद्ध भावना सहित आहुति दिया करें जब तक संकट दूर न हों।

१. वाजश्च मे प्रसवश्च मे प्रयतिश्च मे प्रसितिश्च मे धीतिश्च मे क्रतुश्च मे स्वरश्च मे श्लोकश्च मे श्रवश्च मे श्रुतिश्च मे ज्योतिश्च मे स्वश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥ यजु० १८-१

भा०—अन्न धन आदि पदार्थों से सब के सुख के लिए यज्ञ द्वारा ईश्वर की उपासना करो यज्ञ से सब प्रकार के आवश्यक पदार्थ प्राप्त होते हैं।

२. प्राणश्च मेऽपानश्च मे व्यानश्च मेऽसुश्च मे चित्तं च मऽआधीतं च मे वाक्च मे मनश्च मे चक्षुश्च मे श्रोत्रं च मे दक्षश्च मे बलं च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥

यजु० १८-२

भा०—प्राण तथा इन्द्रियों की स्वस्थता और बल यज्ञ से ही प्राप्त होता है।

३. ओजश्च मे सहश्च मे आत्मा च मे तनूश्च मे शर्म च मे वर्म च मेऽङ्गानि च मेऽस्थीनि च मे परूँषि च

मे शरीराणि च मऽआयुश्च मे जरा च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥ यजु० १८—३

भा०— ओज, सहनशक्ति, आत्मा शरीर आदि की रक्षा यज्ञ से होती है ।

४. सदस्पतिमद्भुत पियमिद्रस्य काम्यम् ।
सनिं मेधामयासिषॅं स्वाहा ॥

भा०— परमेश्वर की उपासना से सब प्रकार के सुख मिलते हैं ।

५. यां मेधां देव गणा पितरश्चोपापासते ।
तया मामद्य मेधयाग्ने मेधाविने कुरु ॥

भा०— परमेश्वर की उपासना व प्राप्त विद्वानों के संग से शुद्ध धर्मानुसार धन प्राप्त करें और दूसरों को भी कराएं ।

६. मेधां मे बरुणो दधातु मेधामग्निः प्रजापति ।
मेधामिन्द्रश्च वायुश्च मेधां धाता ददातु में स्वाहा ॥

भा०— जैसा अपना सुख चाहो वैसा दूसरों का भी चाहो । केवल प्रार्थना ही प्रयाप्त नहीं अपितु तद्वत् सत्याचरण भी क़रें । जब जब विद्वानों के निकट जावें तो सबके कल्याण की ही चर्चा करें ।

७. इदं मे ब्रह्म च क्षत्रं चोभे श्रियमश्नुताम् ।
मयि देवा दधतु श्रियमुत्तमां तस्यै ते स्वाहा ॥
यजु० ३२-१६

भा०—सब का हित चाहने वाला जहां परमेश्वर की आशीर्वाद का पात्र बनता है वहां सब के सत्कार को प्राप्त होता है ।

८. मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीय ।
पशूनाᳬं रूपमन्नस्यरसो यश श्रीः श्रयतां मयि स्वाहा ।
यजु० २६-४॥

भा०— जो सुन्दर विज्ञान उत्साह और वचनों से मरे शरीरों को विधिवत् जलाते हैं वे पशु प्रजा धन-धान्य आदि को पुरुषार्थ से प्राप्त करते हैं ।

९. कया नश्चित्र आभुवदूती सदावृधः सखा ।
कया शचिष्ठया वृता ॥ यजु० ३६-४ ॥

भा०—परमेश्वर के रक्षण तथा कर्म फल देने के ढंग निराले हैं, मानव नहीं जान सकता ।

१०. अग्नेनय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् । युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठाते नमऽउक्तिं विधेम स्वाहा ॥ यजु० ७-४३

भा०—परमेश्वर की भक्ति के बिना किसी भी प्रकार का ऐश्वर्य प्राप्त नहीं हो सकता। धनैश्वर्य की प्राप्ति के लिए उसकी उपासना आवश्यक है। वह हमारे नाम, स्थान जन्मों को जानता और बाधाओं को दूर कर निहाल कर देता है।

११. दिवो वा विष्णऽउत वा पृथिव्या महो वा विष्णऽ-
उरोरन्तरिक्षात। उभा ही हस्ता वसुना पृणस्वा-
प्रयच्छ दक्षिणादोते सव्याद्विष्णवे त्वा॥

यजु० ५–१६॥

भा०—हे सर्व व्यापि परमेश्वर! आप कृपा करके हम लोगों को प्रसिद्ध अग्नि से द्रव्य के साथ सुखों से पूर्ण कीजिये और भूमि तथा अन्तरिक्ष से द्रव्य के साथ सुखों का निश्चय करके पूर्ण कीजिये, हे सब में प्रविष्ट परमेश्वर! आप दक्षिण और वाम दो पार्श्वों से सुखों को दीजिये, हम आप के उपासक यज्ञ द्वारा आप की पूजा कर रहे हैं।

१२. तमिन्द्रं जोहवीमि मघवानमुग्र
सत्रा दधानम प्रतिष्कुत श्रवांसि भूरी।
मंहिष्ठो गीर्भिरा चे यज्ञियो ववर्त
राये नो विश्वा सुपथा कणोतुवज्री॥ साम ४६०

भा०—महान दानी सदा जागरुक परमेश्वर की बार-बार पुकार से धन के सारे मार्ग निर्विघ्न खुल जाते हैं।

१३. यद्वीडाविन्द्र यत्स्थिरे यत्स्थरे यत्पर्शाने पराभृतम्।
वसुस्पार्हं तदा भर ॥ साम २०७

भा०—हे भगवन्! हमें वह सम्पति प्रदान कर कि जो बहुमूल्य बल में और पर्वतों के अन्दर विद्यमान है और जिसकी सब कामना करते हैं।

१४. इन्द्र श्रेष्ठानि द्रविणानि धेहि चित्तं दक्षस्य सुभग-त्वमस्मे! पोषं रयीणामरिष्टिं तनूनां स्वाद्मानं वाचं सुदिनत्वमह्नाम्। ऋ० २-१२-६ ॥

भा०—हे परमेश्वर्यबल प्रभो! कृपया हमें सर्वोत्तम ज्ञान और धन बल वीर्य प्रदान करें। बलवान् सामर्थ्यवान् पुरुष की सुचेतनता, सावधानता और उत्तम ऐश्वर्य प्रदान करो। ऐश्वर्य की वृद्धि निरोगता और वाणी की मधुरता और सुदिन प्रदान करो॥

१५. ॐ भूर्भवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो योनः प्रचोदयात् ॥ यजु ३६-३

१६. प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परिता बभूव यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नोऽस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम ॥ यजु० २३--६५ ॥

१७. भूरिदा भूरि देही नो मा दभ्रं भूर्या भर।
भूरि घेदिन्द्र दित्ससि ॥ ऋ० ४-३२-२०

स्मरण शक्ति के लिए :—

एक बताशे में दो तीन बून्द मालकांगनी का तेल डाल कर २-३ मास खाने से बहुत लाभ होता है।

शरीर की खारिश और चिंगारियां

प्रातः सायं एक एक मात्रा रस माणिक्य २-२ रत्ती एक-एक चमच शहद में मिला कर खाएं। भोजन के दोनों समय बाद एक-एक औंस सारिवाधासक सम भाग मिला कर पिया करें।

अधिक खाँड, चाय, लाल मिर्च, तेज करारी वस्तु न खाएं।

कपिल मुनि पंजाबी बाग का अनुभव

१. कमल के लाल पत्तों से घृत में डुबो गायत्री द्वारा हवन करने से धन का संकट दूर होता है। अनुभूत

परिशिष्ट-३

एक नाम धारी शास्त्रार्थ महारथी जी यज्ञ क्रिया से शून्य है। सर्व साधारण जनता को सद् मार्ग दिखाने के विचार से जो सर्वथा अमान्य और विपरीत यज्ञों के सम्बन्ध में कुछ समय २-४ शंकाएं खड़ी कर बार-बार सामाजिक पत्रों में दे रहा है और हमारे प्रत्युत्तर पर तनिक भी ध्यान न दे ढोल पीट रहा है। उनकी उठाई शंकाओं का यहाँ प्रमाण और युक्ति सहित समाधान किया जा रहा है। पाठक तथा याजक वृण्द स्वयं ध्यान पूर्वक पढ़कर अपने मंतव्य और क्रिया से विचलित नहीं होंगें। अस्तु।

[सम्पादक]

॥ शंकाएं तथा समाधान ॥

(१) गायत्री महा यज्ञ नहीं हो सकता ?

उत्तर— हो सकता है।

प्रमाण— यजुर्वेद मंत्र ३० अध्याय १-

भावार्थ-सर्व मनुष्यैरपं जगदीश्वरं प्रतिवस्तुषु स्थित प्रतिपादितः पूज्यश्च भववीति मंनव्यम्। तथा चायं यज्ञः प्रति मंत्रेण सम्यगनुष्ठितः सर्वप्राणिभ्यः प्रतिवस्तुषु पराक्रम बल प्राप्तये भवतीति। (दयानंद)

भावार्थ हिन्दी—इस मन्त्र में श्लेषालंकार है। सब मनुष्यों को जैसे जगदीश्वर वस्तु वस्तु में स्थित तथा वेद के मन्त्र मन्त्र में प्रतिपादित और सेवा करने योग्य है वैसे ही यह यज्ञ वेद के प्रति मन्त्र में अच्छी प्रकार प्रतिपादित विद्वानों ने (से) सेवित किया।

(२) किया हुआ सब प्राणियों के लिए पदार्थ पदार्थ में पराक्रम और बल के पहुँचाने के योग्य होता है॥

[दयानन्द]

टिप्पणी—यज्ञ परमेश्वर का नाम भी है। "यज्ञो वैविष्णु" यज्ञ समस्त संसार का पालन, पोषण और धारण करने वाला है। यज्ञ से जहां देव पूजा-बड़ों का मान, सगंतिकरण—परस्पर मिलकर सद् विचार, सद् व्यवहार करना और दान दीन दुखियों और बच्चों तथा छोटों पर कृपा दृष्टि तथा सहायता करनी अभीष्ट है वहां सर्व प्राणी मात्र का कल्याण भी तो करना है। प्राणी जश, वायु पर जीवित है। इन शुद्ध पवित्र करने का एक ही साधन यज्ञ है यज्ञ मन्त्रों के बिना नहीं हो सकता। वेद भगवान की आज्ञा है कि यज्ञ मन्त्र मन्त्र से हो सकता है और वही प्राणियों के बल और पराक्रम

को बढ़ाता है। गायत्री भी वेद मन्त्र है अतः गायत्री से यज्ञ हो सकता है। शङ्का निर्मूल है।

२. गायत्री एक छन्द है जिसके २४ अक्षर होते हैं परन्तु जिस मन्त्र के अक्षर कुछ कम भी हों, उसका छन्द नहीं बदलता–"तत्सवितुर्वरेण्यं—।" के २३ अक्षर है, "विश्वानि देव—" के पुरे २४ हैं। इतना होने पर भी दोनों का छन्द गायत्री है और तत्सवितुर्वरेण्यं–को ही गायत्री नाम से मन्सूब किया जाता है। सृष्टि के आद में परमेश्वर ने इसी मन्त्र को ऋषियों के हृदय में गानकर सुनाया। "गाय तो मुखाद् उदपदतीम गायत्री" निरुक्त–विश्वानि देव–का मन्त्र नहीं गाया सुनाया गया

(३) दोनों मन्त्रों का देवता सविता है परन्तु जिस मन्त्र अर्थात् "ओ३म् भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं— के द्वारा यज्ञ किया जाता है। उसका ऋषि विश्वामित्र है। विश्वानी देव का नारायण ऋषि है। ऋषि का भाव यह होता है कि वैसा हमने बनना है। जब तक विश्वामित्र न बनें संसार का कल्याण नहीं हो सकता। आर्य समाज का छटा नियम झूठा पड़ जाता है। नारायण ऋषि बनने से तो केवल मानव का ही कल्याण कर

सकता है। और न यजुर्वेद अध्याय ३६-१८ का कि "मित्रस्य चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्---" पालन हो सकता है। यह ईश्वरीय आज्ञा है। प्रभु की महत्ती कृपा है कि एक ही मन्त्र के द्वारा मानव के अन्दर समस्त प्राणियों के कल्याण की भावना जागृत हो जाती है।

वेद में एक पाद वाले मन्त्रों का छन्द भी गायत्री दिखाया है। देखिये सामवेद १६५४—सुमन्मा वस्वीरूती सूनरी ॥—इसका छन्द गायत्री है।

(४) विश्वानि देव प्रार्थना का मन्त्र है। उसमें केवल इच्छा ही प्रकट की गई है कि भगवान् हमारी बुराइयां दूर करो और भलाई दो। गायत्री मन्त्र में उपासना के तीनों अंग विद्यमान हैं।

(१) परमेश्वर की स्तुति नौ शब्दों में—

(१) ओ३म् (२) भूः (३) भुवः (४) स्वः (५) तत् (६) सवितः (७) वेरण्य (८) भर्गः (९) देव ज्ञान प्रार्थना (कर्म) धीमहि—उपासना-धियो योनः प्रचोदयात्

ऋषि दयानन्द ने ऐसा ही माना है।

(५) यज्ञ श्रेष्ठतम कर्म का नाम है। गायत्री श्रेष्ठतम मन्त्र है वेदों का प्राण है (यजु १३।५४)—श्रेष्ठतम

कर्म के लिए जहां श्रेष्ठतम सामग्री सोम (साम ५१२) है । वहां श्रेष्ठतम मन्त्र गायत्री (पञ्च महायज्ञ विधि) पृष्ठ २७—सप्तम संस्करण बनारस में छपा । "अथ गुरु मन्त्रः— ओ३म् भूर्भुवः स्वः । तत्सवितुर्वरेण्यं—।।यजु ३६-३-पृष्ठ २८-भाष्यम्—अस्य सर्वोत्कृष्टस्य गायत्री मन्त्रस्य संक्षेपणार्थ उच्यते—

(४) अथ गुरु मन्त्र—

भावार्थ- पृ० ३९- इस प्रकार प्रातः और सांयकाल संध्योपासना के पीछे इन पूर्वोक्त मन्त्रों से होम करके अधिक होम करने की जहां तक इच्छा हो वहां तक स्वाहा अन्त में पढ़ कर गायत्री मन्त्र से आहुति दें ।

भाव यह निकला कि यज्ञ रूपी श्रेष्ठतम कर्म के लिए सर्वोतम सामग्री सोम रस और सर्योत्कृष्ट मन्त्र गायत्री है । विश्वानि देव का जिक्र नहीं ।

(६) गायत्री गुरु मन्त्र है । वेदारंभ संस्कार में इसी मन्त्र की पहले दीक्षा दी जाती है । किसी और मन्त्र की नहीं ।

(७) इस मन्त्र के पाच नाम हैं ।

१) गुरु मन्त्र (२) गायत्री मंत्र (३) सावित्री

मन्त्र (४) वेद माता (५) वेद मुख। विश्वानी देव अथवा किसी और मन्त्र को यह पद प्राप्त नहीं।

(८) इस मंत्र के अभ्यास जाप से काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार पर विजय प्राप्त हो सकती है। ओ३म्—सबसे महान् है उसके जाप तथा चिंतन से अहंकार नम्रता में बदल जाता है। "भूर्भुवः स्वः" के जाप से मोह विशाल प्रेम में परिवर्तित हो जाता है। "तत्सवितुर्वरेण्यम्" के जाप से लोभ विनष्ट होकर संतोष का रूप धारण कर लेता है। "भर्गोदेवस्य धीमहि" के जाप से क्रोध की क्रूरता और हठधर्मी दूर कर सहनशीलता का रूप धारण कर लेती है। "धियो-योनः प्रचोदयात्" के चिंतन तथा जाप से काम, सद्काम, संसार का भला करने का स्वभाव बन जाता है। मानो मानव साधारण मानव नहीं रहता, विश्वामित्र बन जाता है। इसके पांचों नाम सार्थक हैं।

गुरु मंत्र— सबसे बड़ा, शिरोमणी मंत्र, सबका प्राण।

गायत्री मंत्र— गाया जाने वाला।

गय=प्राणों का बल--अर्थात् आयुवर्धक।

गय=इन्द्रियों का बल—चरित्र की रक्षा करने वाला।

गय=(धन नाम निघण्टु) की रक्षा करने वाला।

द्रविण–भाग्यशाली धन प्रदान करने वाला।

त्र–रक्षा करने वाला (सब में सांझा) है।

बाह्य जगत के तीन बड़े तीर्थ ग--य--त्र !

गंगा—यमुना—त्रिवेणी।

(९) महर्षि जी की जीवनी बताती है कि उन्होंने २४ ब्राह्मणों को बिठा गायत्री महायज्ञ किया।

इन प्रमाणों से यदि सिद्ध नहीं हो सकता कि गायत्री हो सकता है तो अधिक शंकाओं के उपस्थित होने पर समाधान का प्रयास किया जायेगा।

(१०) गायत्री और यज्ञ दोनों का लक्ष्य संसार प्राणी मात्र का उपकार संवार, सुधार करना है। दोनों "ओ३म् भूर्भुवः स्वः" से प्रारम्भ होते हैं जिनका अर्थ परमेश्वर प्राण दाता, दुःख विनाशक और सुख स्वरूप सुख दाता है। प्राणी सब सुख चाहते और चिरकाल तक जीवित रहना चाहते हैं, इस इच्छा की पूर्ति गायत्री और यज्ञ (हवन) ही करते हैं। इस लिए एक दूसरे में

समा रहे हैं। गायत्री आन्तरिक क्रियाओं (धारणा, ध्यान, समाधि) से और यज्ञ बाह्य क्रियाओं से इस लक्ष्य की पूर्ति करते हैं। गायत्री में परमेश्वर के गुणों और स्वरूप का चिन्तन करने से अन्दर के मल विकार क्रमशः नष्ट हो जाते और मन निर्मल हो कर आनन्द के स्रोत को ले जाता है। गायत्री के इस भाव को आन्तरिक अग्नि (प्राण आदि) पूरा करते हैं और हवन यज्ञ बाह्य अग्नि से समस्त कुवासनाओं को दग्ध करता और मनको पवित्र कर देता है। जहां दोनों का समन्वय हो जाए वहाँ सफलता शीघ्र प्राप्त होती है। अतः गायत्री यज्ञ हो सकता है। शंका निर्मूल है।

दूसरा वर्षेष्टि यज्ञ--

परमेश्वर ने मानव को कहा जीवातुं तेदक्षतातिं कृणोमि तेरेजीवन के अन्दर डायनेमाइट की शक्ति मैंने भर दी है। तू मेरा अमृत पुत्र है। मां पर पूत पिता पर घोड़ा और नहीं तो थोड़ा थोड़ा। परमेश्वर सर्वज्ञ सर्व शक्तिमान है, जीव अल्पज्ञ अल्प शक्ति वाला है। यह नहीं की जीव कुछ कर ही नहीं सकता। वेद में भगवान् ने जीव को और विद्या दी वहां वर्षा की विद्या

भी दी। यजु० अध्याय १७ मन्त्र १—का शीर्षक और भावार्थ पढ़िए।

इसके पहिले मन्त्र में वर्षा की विद्या का उपदेश किया है।

मन्त्र—अश्मन्नूर्ज पर्वते शिश्रियाणामनभ्याऽ ओषधिभ्यो वनस्पतिभ्यो अधि सम्भृतं पयः तां न इषमूर्जं धत्त मरुतः सँ्सराणाऽअश्मंस्ते क्षुन्मयि तऽकुर्ग्यं द्विष्मस्तं ते शुगृच्छतु॥ यजु० १७–१॥

हे (संरराण मरुतः) सम्यक् दानशील वायु के तुल्य क्रिया करने में कुशल मनुष्यो! तुम लोग (पर्वते) पहाड़ के समान आकाश वाले (अश्मन्) मेघ के (शिश्रियाणाम्) अवयवों में स्थिर बिजली तथा (ऊर्जम्) पराक्रम और अन्न को (नः) हमारे लिए (अधिधत्त) अधिकता से धारण करो।

(अर्थात् आकाशस्थ मेघों से विद्युत द्वारा जल वर्षा कर हमारे लिए अन्न और बल प्राप्त कराओ। वर्षा द्वारा हमारी खेतियों को हरा भरा करो।) और (अद्भ्यः) जलाशयों (औषधिभ्यः) जौ आदि औषधियों और(वनस्पतिभ्यः)पीपल आदि वनस्पतियों से (सम्भृतम्)

सम्यक धारण किये (पयः) रस युक्त जल (इषम्) अन्न (ऊर्जम्) पराक्रम (ताम्) उस पूर्वोक्त विद्युत को धारण करो—

भावार्थः— मनुष्यों को चाहिए कि जैसे सूर्य जलाशय और औषध्यादि से रस का हरण कर मेघमंडल में स्थापित करके पुनः वर्षाता है,उससे अन्नादि पदार्थ उत्पन्न होते हैं उसके भोजन से क्षुधा की निवृत्ति, क्षुधा की निवृत्ति से बल की बढ़ौतरी, उससे दुष्टों की निवृत्ति, दुष्टों की निवृत्ति से सज्जनों के शोक का नाश होता है वैसे अपने समान सबके मित्र हो के एक दूसरे के दुःख का विनाश करके सुख की निरन्तर उन्नति करें।

अर्थात दुष्काल के समय वर्षा यज्ञ द्वारा वर्षा कर भूमि को उर्वरा कर अन्न उपजायें और अन्न से पराक्रम बढ़ाते दुष्टों का नाश करें और सज्जनों की सहायता करें।

दूसरे मन्त्र यज्ञशाला निर्माण का और उसके लिए लगाई हुई एक एक ईंट का फल लिखा है।

वर्षा यज्ञ की पद्धति जो अनुभव पर आधारित है, इससे पूर्व दी जा चुकी है लङ्गडी युक्तियों से काम नहीं चलता। सत्यार्थ प्रकाश में महर्षि ने लिखा कि जब इस देश में राजे महाराजे बड़े-बड़े यज्ञ कराते थे तो यह

देश सुखों से पूरित था, अब भी करायें तो वैसा ही हो जाए।

करना कराना कुछ नहीं, दोष चुनना ऐसे व्यक्तियों का व्यवहार बन गया है।

परमेश्वर की अपनी पवित्र वाणी में आया कि जब जब चाहो, वर्षा करा लो।

तीसरी शंका है छालनी द्वारा घृत की धाराएं बहाना सो जो क्रिया की जाती है वह सब वेदानुकूल महर्षि के मन्तव्य का पूरा समर्थन करती है, देखिए।

१. कन्या इव वहतु मेतवा उऽअञ्जयञ्जानाऽअभि चाकशीमि। यत्र सोमः सूयते यत्र यज्ञो घृतस्य धारा अभि तत्पवन्ते॥ यजु० १७-९७

भावार्थ– यज्ञ में जहां सोम टपकता और घृत की धारा सब ओर से बहती है, उनको मैं (ईश्वर) अच्छे प्रकार बार-२ प्राप्त होता हूं जैसे स्वयम्बर की क्रिया अपने पति को वरने के लिए श्रृंगारयुक्त होकर पति को वरने के लिए आती है।

अर्थात् ऐसे यज्ञ में जहां सोम टपकता है और घृत की धारा बहती है उसमें परमेश्वर की अद्भुत लीला का

बार बार ज्ञान होता है, ऐसे यज्ञ को प्रभु देव स्वीकार करते हैं।

२. यत्र धारा अनपेता मधोर्घृतस्य च याः ।
तदग्निर्वैश्वकर्मणः स्वर्देवेषु नो दधत् ॥

यजु० १८–६५

पदार्थ :— जिस यज्ञ में मधुरादि गुण युक्त सुगन्धित द्रव्यों और घृत के जिन अटूट प्रवाहों (धाराओं) को विद्वान लोग करते हैं, उन धाराओं से सब कर्म होनें का निमित्त अग्नि हमारे लिए दिव्य व्यवहारों में सुख को धारण करता है।

अर्थात् जहाँ मधु, घृत आदि की निरन्तर धारायें पड़ती हैं, वह अग्नि याजक को दिव्य सुख सम्पन्न करता है, महर्षि ने लिखा— जो मनुष्य वेदि आदि को बना के सुगन्ध और मिष्टादि युक्त बहुत घी को अग्नि में हवन करते हैं वे सब रोगों का निवारण कर अतुल सुख को उत्पन्न करते हैं।

३. यजुर्वेद अध्याय १९ मन्त्र ३० से "पयः सोमः परिस्रुता घृतं मधु व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज ॥" –यह शब्द अन्तिम पंक्ति में बार-बार आए हैं जिनका भाव है कि

दुग्ध, सोम, घृत और मधु की धाराओं से ओ यजमान ! यज्ञ करा यह चारों पदार्थ रोग नाश का बल और तेज़ वर्धक और वातावरण को स्वास्थ्य और सुख प्रद बना देते हैं जिनसे संसार के प्राणियों का भला होता है।

४. २२ और २८ अध्याय क्या जहां तहां यजुर्वेद 'स्वाहा' 'स्वाहा' का ही आदेश देता है। 'स्वाहा' बिना घृत, सामग्री, काष्ठ आदि के कैसे होगा ?

५. अध्याय १ मन्त्र ३

वसोः पवित्रमसि शतधारं वसोः पवित्रमसि सहस्रधारम्। देवस्त्वा सविता पुनातु वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वा कामधुक्ष ॥

भा०— जो यज्ञ पवित्र है, सैंकड़ों, सहस्रों धाराओं से संसार को पवित्र करता है, प्रभु देव उसे पवित्र करे स्वीकार करे।

यज्ञ में प्रायः तीन प्रकार के वस्तु प्रयोग में आते हैं :—

१. घृ काष्ट—जितनी साफ सुथरी होगी, सुखी होगी, अग्नि जल्दी प्रकाशित होगी।

२. घृत– अग्नि में पड़ते ही उसे प्रचण्ड करेगा उसके तेज को, उपयोगिता को बढ़ायेगा ।

३. सामग्री– अग्नि की क्षुधा निवृत करती प्रकाश बनाए रखेगी । बल बढ़ेगा ।

सहस्रधारा- छलनी के द्वारा चलाने से अग्नि न केवल प्रचण्ड होती है अपितु शीघ्र ही सामग्री को परमाणुओं में बदल आकाश को मेघाच्छादित करती और वृष्टि लाकर संसार के सुख को बढ़ाती है । एक छोटे से चमच अथवा धार से वह कार्य सिद्ध नहीं हो सकता ।

महर्षि ने यजु० ३-५१ के भावार्थ में लिखा—

इस मन्त्र में उपमालङ्कार है । मनुष्यों को उचित है कि प्रतिदिन नवीन-नवीन ज्ञान व क्रिया की वृद्धि करते रहें जैसे मनुष्य विद्वानों के संत्संग वा शास्त्रों के पढ़ने से नवीन-नवीन बुद्धि, नवीन-नवीन क्रिया को उत्पन्न करते हैं वैसे ही सब मनुष्यों को अनुष्ठान करना चाहिए ।

इसी प्रकार अध्याय ४ मन्त्र ७ में—

आकूत्यै प्रयुजेऽग्नये स्वाहा मेधायै मनसेऽग्नये स्वाहा

दीक्षायै तपसेऽग्नये स्वाहा सरस्वत्यै पूष्णे ऽग्नये स्वाहा । आपो देवी बृंहतीर्विश्वशंभुवो द्यावापृथिवी ऽउरो ऽअन्तरिक्ष । बृहस्पतये हविषा विधेम स्वाहा ॥"

अर्थ– हे मनुष्यों ! जैसे हम "लोग उत्साह, उत्तम धर्मयुक्त क्रियाओं अग्नि के प्रदीपन वेदवाणी के प्रचार, विज्ञानयुक्त वाणी, पुष्टि करने, बड़े बड़े अधिपतियों के होने, बिजली की क्रिया के ग्रहण, पढ़ने पढ़ाने से विद्या, बुद्धि की उन्नति, विज्ञान की वृद्धि, कारण रूप, सत्य वाणी की प्रवृत्ति, धर्म नियम और आचरण की रीति, प्रताप, जठराग्नि के शोधन, उत्तम स्तुति युक्त वाणी से, महागुण सहित, सबके लिए सुख उत्पन्न करने वाले, दिव्य गुण सम्पन्न, प्राण वा जल से, सत्य भाषण, भूमि और प्रकाश की शुद्धि के लिए, बहुत सुख सम्पादक, आन्तरिक्ष में रहने वाले पदार्थों को शुद्ध और जिस (स्वाहा) उत्तम क्रिया वा वेदवाणी से यज्ञ सिद्ध होता है, उन सबों को सत्य और प्रेमभाव से, सिद्ध करें, वैसें तुम भी किया करो ।

भा०– यज्ञ के अनुष्ठान के बिना उत्साह, बुद्धि, सत्यवाणी, धर्माचरण की रीति, तप धर्म का अनुष्ठान

ग्रौर विद्या की वृद्धि का सम्भव नहीं हो सकता ग्रौर इनके बिना कोई भी मनुष्य परमेश्वर की ग्राराधना करने को समर्थ नहीं हो सकता। इससे सब मनुष्यों को इस यज्ञ का ग्रनुष्ठान करके सब के लिए सब प्रकार ग्रानन्द प्राप्त करना चाहिए।- [दयानन्द]

ग्रान्तरिक्ष की शुद्धि बहुत घी—सहस्र धाराग्रों के बिना नहीं हो सकती, विशेषकर ग्राज जबकि चारों ग्रोर मानव के तबाह करनें के बम्ब ग्रादि बनाए जा रहे हैं और ग्रनेकों साधनों से आकाश को धूमिल ग्रौर विषाक्त किया जा रहा है। इसी यजुर्वेद के ५–२८ में कहा, "घृतेन द्यावापृथिवी पूर्येथाम"— घी से पृथिवी ग्रौर द्यौलोक को भर दो।

तो प्रिय याजक! ग्रापत्ति उठाने वाले कोरे कागजी ज्ञान रखने वाले हैं, उनके झांसे में न ग्राकर ग्रपने जीवन को न बिगाड़ना।

वेद--सूक्तियां

१. न यस्य हन्यते सखा न जियते कदाचन।
ऋ० १०।१५२।१

[ईश्वर के भक्त को न कोई नष्ट कर सकता है और न जीत सकता है।]

२. यत्र सोमः सद्मित् तत्र भद्रम्। अ० ७ १८।२

[जहाँ परमेश्वर की ज्योति है वहां सदा कल्याण ही है।]

३. ओ३म् क्रतो स्मर। यजु० ४०।१५

[हे कर्मशील मनुष्य ! तू ओ३म् का स्मरण कर]

४. त्वमस्माकं तव स्मसि। ऋ० ८।९२।३२

[प्रभु तू हमारा है हम तेरे हैं।]

५. तमेव विद्वान् न विभाय मृतयोः। अथर्व० १०।८।४४

[आत्मा को जानने पर मस्नुय मृत्यु से नहीं डरता]

६. मेधां धाता दधातु मे। यजु० ३२।१५

[परमात्मा मुझे मेधाबुद्धि प्रदान करें।]

७. उतो रयिः पृणतो नोपदस्यति। ऋ० १०।५७।१

[दानी का धन घटता नहीं है।]

८. ईजानाः स्वर्गं यन्ति लोकम् । अ० १८।४।२
(यज्ञ करने वाले उत्तम गति को प्राप्त करते हैं)

९. अयज्ञियो हतवर्चा भवति । अ० १२।२।३७
(यज्ञहीन का तेज नष्ट हो जाता है)

१०. श पदं मघ रयीषिणो न काममव्रतो हिनोति ।
न स्पृशद्रयिम् ॥ साम० ४४१
(यदि तुम चाहते हो कि तुम्हें शान्ति मिले, तुम सम्पन्न होवो तो विधिपूर्वक यज्ञ करो=श्रेष्ठतम यज्ञ करो)

११. यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्
यजु० ३१।१६
(देवताओं ने परमेश्वर की पूजा यज्ञ द्वारा की, इसलिए हमारा सबसे पहला धर्म यज्ञ है)

१२. प्रेता जयता नर इन्द्रो वः शर्म यच्छतु ।
ऋ० १०।१०३।१३
(हे मनुष्यो उठो, आगे बढ़ो, विजय प्राप्त करो, इन्द्र तुम्हें सुख दे)

१३. प्रेह्यभीहि धृष्णुहि न ते वज्रो नियंसते ।
ऋ० १।८०।३

(हे मष्नुय ! तू आगे बढ़, शत्रु पर वार कर, उसे प्रास्त करदे, तेरे शस्त्र को कोई नहीं रोक सकता)

१४. उत्क्रामतः पुरुष मावपत्था । अथर्व ८।१।४
(हे पुरुष ! तू उन्नति कर, नीचे मत गिर ।)

१५. उद्यानं ते पुरुष नावयानम् । अथर्व० ८।१।६
[हे मनुष्य ! देख जीवन में तेरी उन्नति होनी चाहिये, अधोगति नहीं]

१६. असन्तापं मे हृदयमूर्वी गव्यूतिः । अथर्व० १६।३।६
[मेरे हृदय में सन्ताप के लिए स्थान नहीं है, मेरी इन्द्रियों की शक्ति बड़ी विस्तृत है]

नियम

१—आश्रम में पाँच प्रकार के व्यक्ति रह सकते हैं :—
साधु, साधक, दर्शक, सत्संगी और सेवक ।

(क) साधु :—जो नाम और काम से साधु हों ।

(ख) साधक :—जो साधना के लिये रहे । जिसके आधीन वह साधना करेगा उसकी आज्ञा का पालन करना होगा । त्रुटियों को दूर करने का प्रयत्न करता रहेगा ।

(ग) दर्शक—जो दर्शनार्थ आया है वह उचित समम से अधिक नहीं ठहर सकेगा । साधु साधक की सेवा तथा वार्तालाप कर के उसे चला जाना चाहिए ।

(घ) सत्संगी :—यज्ञ के दिनों अथवा यज्ञ से पूर्व तथा सत्संग के निमित्त रह सकता है , जब तक उसकी आवश्यकया पूरी न हो ।

(ङ) सेवक—सेवा के लिए रह सकता है जब तक सेवा कार्य उसके जिम्मे हो ।

२—मादक द्रव्य का उपयोग—आश्रम के अन्दर किसी भी व्यक्ति को किसी अवस्था में मांस मदिरा तथा धूम्रपान की आज्ञा नहीं होगी ।

३—आश्रम के निवासी आश्रम के बाहर भी माद
द्रव्यों का प्रयोग नहीं कर सकेंगे।

४—स्थाई रूप से आश्रम में वही रह सकता है जिस
अपने खर्च से आश्रम में रहने के लिए अपन
कुटिया बनाई है और वह भी जब तक कि व
आश्रम के नियमों का पालन करता रहे।

५—समय विभाग तथा मौन—आश्रम में यज्ञ के दिनों
अतिरिक्त दिनों में भी यज्ञ के नियम लागू हैं, सूर्या
के आधे घंटे बाद से दो घण्टे पर्यन्त और प्रातः ह
यज्ञ के समय तक सब को मौन रहना होगा।

६—आश्रम वासियों का आश्रम के यज्ञ तथा सत्
आदि में शामिल होना अनिवार्य होगा।

७—अपने-अपने स्थान को स्वयं साफ करना होगा।

८—सेवक को अपना भाई समझकर उससे कार्य लि
जायेगा।

९—आश्रम में व्यर्थ का हल्ला गुल्ला करने की आ
नहीं होगी।

१०—आश्रम के नियम पालने में सब को अधिष्ठाता
निवेदन का विशेष ध्यान रखना चाहिए।

[अधिष्ठात

परिशिष्ट—४

विभिन्न औषधियों के यज्ञ से लाभ तथा निवारण उपचार।

(१) शुद्ध गूगल में चौथाई भाग चूरा चन्दन सफेद और १/१६ भाग घृत मिला कर एक एक या दो दो माशे की गोलियां बनाकर हवन करने से भाग्य की वृद्धि होती है।

(२) गिलोय के टुकड़ों को गोदुग्ध में भिगो कर आहुति देनें से रोग का विनाश होकर अकाल मृत्यु नहीं होती।

(३) पलाश (ढाक) के फूलों का घृत सहित हवन से इष्ट वस्तु प्राप्त होती है।

(४) शंखपुष्पी के फूलों का हवन करने से कुष्ट रोग दूर होता है।

(५) आम के पत्तों को दूध में भिगो कर हवन करने से ज्वर नाश होता है।

(६) गूलर की समिधाओं का शहद और ईख के रस को मिला कर हवन करने से सब प्रकार का प्रमेह नष्ट हो जाता है।

(७) घृत, दही और शहद का हवन कर हवन की भस्म लगाने से छाजन रोग दूर होती है ।

(८) दूर्वा को घृत, शहद या दूध में भिगो कर हवन करने अथवा शमी वा बरगद की समिधाओं को खीर और घृत के साथ सात दिन तक एक एक माला आहुति देकर हवन करने से अपघात आदि से अकाल से होने वाली मृत्यु से बच जाता है ।

हवन द्वारा विविध रोगों की चिकित्सा

(१) शीतज्वर पर– पटोल पत्र, नागर मोथा, कुटकी, नीम की छाल, गिलोय, कुड़े की छाल, करंजा, नीम के पुष्प ।

(२) उष्ण ज्वर पर– इन्द्रजौ, पटोल पत्र, नीम की गुठली, नेत्र बाला, त्रायमाण, काला जीरा, चौलाई की जड़, बड़ी इलायची ।

(३) खांसी पर– मुलहट्टी, पान हल्दी, अनार, कटेरी, बहेड़ा, उन्नाब, अंजीर की छाल ।

(४) दस्तों पर– सफेद जीरा, दालचीनी, अजमोठ, बेलगिरि, चित्रक, अतीस, सोंठ, चव्य (पान की जड़)

(५) अर्श (बवासीर) पर– नाग केसर, हाउबेर,

धमासा, हलदी दारु, नीम की गुठली, मूली के बीज, जावित्री, कमल कैशर, गूलर के फूल ।

(६) चेचक पर–महेंदी की जड़, नीम की छाल, हल्दी, करौंजी, बांस की लकड़ी, खैर की छाल श्योनाक

(७) जुकाम पर–दूब, पोस्त, कासनी, अञ्जीर, सौंफ, उन्नाव, वहेड़े की गुठली का गूदा, धनियां ।

(८) प्रमेह पर–ताल मखाना, सफेद मूसली, बड़ा गोखरु, कौंच के बीज, सुपारी ।

(६) वातव्याधि पर–गवारपाठे की जड़, रास्ना बाल छड़, सुहाञ्जने की छाल, मैंदी के बीज, पुनर्नवा, तैज पत्रज ।

(१०) मन्द बुद्धि पर–शतावर, ब्रह्मी, ब्रह्मडण्डी, गोरखमण्डी, शंखपुष्पी, मण्डूकपर्णी, वच मालकंगनी ।

(११) विष निवारण पर–वन तुलसी के बीज, अपामार्ग इन्द्रायण की जड़, करंजा की गिरि, दारु हल्दी, चौलाई के पत्ते, बिनौले की गिरी, लाल चन्दन ।

(१२) मस्तिष्क रोग पर–बेर की गुठली का गूदा,

मोलसिरी की छाल, पीपल की कौंपलें, इमली के बीजों का गूदा, काकजंघा, बरगद के फल, गिलोय, अखरोट, ब्रह्मी, मालकंगनी, खरैंटी का पञ्चांग, शंखपुष्पी।

(१३) रक्त विकार पर—धमासा, सार वा कूड़े की छाल, अडूसा, सरफोका, मजीठ, कुटकी, रास्ना।

(१४) चर्म रोग पर—शीतल चीनी, चोब चीनी, नीम के फूल, चमेली के पत्ते, दारुहल्दी कपूर, मेंदी के बीज, पद्माख।

(१५) बच्चों की अस्वस्थता पर—अतीस, काकड़ासिंगी नागरमोथा छोटी पीपल, धनियां धाय के फूल, मुलहट्टी,

(१६) गर्भ पुष्टि पर-सौंफ, कासनी, धनियाँ, गुलाब के फूल, ख़स, पोस्त के बीज, दाख, इन्द्र जौ॥

हवन में सब दवाइयां सम भाग लेकर घृत मिला कर गायत्री से आहुति दें। हवन के बाद रोगी पर जल पात्र में रखे कुश द्वारा या पुष्प डुबोकर गायत्री मन्त्र से मार्जन करें। यज्ञ की भस्म रोगी के मस्तिष्क, हृदय, कण्ठ, पीठ और दोनों भुजाओं में लगावें। घृत पात्र

का बचा घी से कुछ बूंदें रोगी के माथे और हृदय पर लगावें। (नन्द किशोर शर्मा)

१. हृदय रोग और पीलिया के लिये सूर्य की लाल किरणें अथवा लाल गौ का दूध लाभकारी है।

अथर्व० १-२२-१-३

२. कुष्ठ रोग के लिये भारंगी, गूगल, कृष्णा तुलसी, कृष्णामूली आदि लाभकारी है।

अ—१-२३-१-३

३. आसुरी=राई, लाल सरसों, कृमी व्रण=कुष्ठ की बढ़िया दवाई ॥ अ० १-२४-१

४. सरूपा=हल्दी, भांगी, वार्षिकी और लारवा एक ही नाम है—यह शरीर को एक समान बना देती है। अ० १-२४-२

५. पृश्निपर्णी— कुष्ट की मूल को भी काट देती है। अथर्व २-२४-२

बांझपन को दूर करती है, गर्भ के विनाशक जीवन को मिटा देती है। अ० २-२४-२

६. हिरण के सींग से या मृगछाला से हृदरोग अपस्मार, कास्द आदि बूर होते हैं। अ० ३-७-१०

हिरण के सींग के स्पर्श से त्वचा का दोष, प्रलेप से व्रण और भस्म ले क्षय, कास, श्वास और अस्मार की व्याधि दूर होती है। अ० २-७-२

मृगछाला के प्रयोग से रक्त, पित्त वात आदि का नाष होता है, उस पर बैठने, ओढ़ने से बवासीर कण्डू, खाज़ आदि दूर होती हैं।

विष से बुझे शस्त्र के घाव की चिकित्सा

(१) सेहे के कांटें, लाध्र वृक्ष के प्रलेप से, अज-श्रृगीं औषधि से या पदम् औषधि से दूर हो सकता है,

(२) काकमाची, काकजंघा, इनके अंश से युक्त जल से विष का नाश हो सकता है।

मिट्टी के प्रलेप से भी सर्प वृश्चिक, ततैया आदि विष दूर होते हैं। अ० ४-७-१

(३) वाणी के प्रताप से, जोर से उच्चारण किये गये शब्द (हे विष ! तू यहां से भाग जा) विष दूर किये जा सकते हैं। मंत्र के द्वारा अ० ४-७-४

(४) कुदाले से खोदे हुए गढ़े में वृक्ष के समान

गढ़ कर खड़ा हो जाने से विष का प्रभाव नष्ट हो जाता है। पृथिवी चूस लेती है। अ० ४-७-५

(५) कटी फटी अंगों को जोड़ने वाली रोहणी नाम की औषधि है। अ०४-१२-१

(६) अञ्जन से ज्वर, अतिसार दूर होते हैं। अ० ४-९-८

(७) अनाहत नाद से कुवासनायें नष्ट होती हैं और अन्तर्वृत्ति होकर इन्द्रियां वश में आती हैं। अ० ४-१०-१

(८) अजश्रृङ्गी, चक्षुर्दोष, हृदरोग, अर्ष शोष अतिकुष्ठ आदि का और वातहर,कास, श्वास, राजयक्ष्मा वमन, तृष्णा, अरुचि, अतिसार का नाश करती है। इसके जलाने से तीक्ष्ण गन्ध होता है, मच्छर आदि भाग जाते हैं। अ० ४-३७-२

(९) गूगल–पीला, पीलु, विषनाशक मांसी, गंध-मांसी, जटामांसी, तीनों विष भूत, दाह और ज्वर नाशक है। मकड़ी आदि जन्तुओं के भी नाशक हैं।

(१०) जहां पीपल वट ग्रादि महावृक्ष ग्रौर मोर, मुरगा ग्रादि पक्षी, चूड़ामणि, तुलसी, काकमाछी के पौधे हैं वहां से व्याधियाँ दूर भाग जाती हैं।

ग्रर्जुन वृक्ष ग्रौर नक्कारे के जोर से भी भाग जाती हैं। काकड़ा सिंगी-तीक्षण स्वभाव से रोग जन्तुग्रों का नाश करती है। ग्र० ४-३७-४

(११) ग्रमरबेल-सिलाची, लाखा ग्रौषधि, ग्रमर-बेल (लूत जो पीली-पीली बेल वृक्षों पर पड़ी रहती है) से दीर्घ जीवन मिलता है। रोगों को दबाने वाली ग्रौर समस्त शरीर में सुगमता से व्याप्त जाने वाली है।

ग्र० ५-५-२

डण्डे की चोट अथवा बाण के लगने या रगड़ से होने वाले घाव को दूर करने में ग्रचूक ग्रौषध है।

ग्र० ५-५-४

परिशिष्ट नं०--४

❋ यज्ञ से योग की प्राप्ति ❋

यज्ञ से योग की प्राप्ति अनायास ही होती है कैसे? लो सुनिये :— यज्ञ के तीन स्तम्भ हैं देव पूजा, संगीत करण और दान। बड़ों की सेवा सन्मान करने से वह अपने आप तुम पर दया करेंगे, तुम्हारा सेवा सन्मान के लिए झुकना उनको तुम से प्यार करने पर बाधित करेगा।

संगति करण में मिलकर प्रेम पूर्वक पारस्परिक व्यवहार शांति और प्रेम का बीज आरोपित कर देगा। घृणा आदि को समीप नहीं भटकने देगा।

दान से तो लेने वाला दाता का कृतज्ञ बन जायेगा अतः संक्षेप में यों समझो—बड़ों केसम्मुख अहंकार का त्याग, छोटों के लिए घृणा का त्याग, बराबर वालों के लिए ईर्ष्या, कठोरता वैर आदि त्याग—अन्तःकरण को शुद्ध और पवित्र कर देगा—यही योग का फल है अतः यज्ञ को यज्ञ की भावना से—त्याग भाव से करो।

यजुर्वेद अध्याय ५ मन्त्र १ के भाव में किसी विद्वान् ने लिखा है कि यज्ञ की हवि से अन्नमय कोष, समिधा से प्राणमय कोष, अग्नि की प्रचण्डता से मनोमय कोष और अग्नि की संयोजक विभाजक शक्ति से विज्ञान

मय कोष सिद्ध होता है और परिणामस्वरूप आनन्द आह्लाद से रंगों के दर्शन से प्रभावित होकर आनन्दमय कोष शुद्ध हो जाता है।

अतः यज्ञ अन्तःकरण को शुद्ध करने का साधन है, यज्ञ निष्काम कर्म है। यज्ञ भावना से किया निष्काम यज्ञ हृदय को पवित्र करता है। यज्ञ में आज्ञा पालन, सहयोग और दया अवश्यंभावी है। आज्ञा बड़ों की होती है, आज्ञा पालन देव पूजा हुई। सहयोग संगति करण है दया से त्याग भाव जागता है जो यज्ञ प्राण है। यज्ञ बिना त्याग के हो नहीं सकता। आहुति छोड़ना संसार के प्राणियों पर दया करनी है।

* यज्ञाग्नि का चित्त पर प्रभाव *

यज्ञ अग्नि से भिन्न-२ प्रकार के रंग निकलते हैं उन रंगों का चित्त पर प्रभाव पड़ता है। जैसे सूर्य की रश्मियां हरि, नीली, पीली, संसार की रक्षा करती हैं वैसे अग्नि से निकले रंग भी वैसे ही रक्षा करते हैं।

याजक गण यज्ञ कुण्ड की अग्नि को निहारते रहें तो उससे निकली रंगीन रश्मियां आपकी कुवृत्तियों,

कुवासनाओं को दूर कर देगी। रंगों में चित्त के आकर्षण की शक्ति स्वाभाविक है। बच्चा जब किसी रंगदार वस्तु को देखता है, झट उस ओर खिचा जाता है, वीर योद्धाओं को अपनी यूनीफार्म (रंगदार पोषाक) प्रिय लगता है। यजुर्वेद अध्याय १७ मन्त्र ८८ इस विचार की पुष्टि करता है।

सूर्य रश्मि हरिकेशः पुरस्तात् सविता ज्योतिरुदयां अजस्रम।
तस्य पूषा प्रसवे याति विद्वान्तं सम्पश्यन् विश्वाभुवनानिगोपा॥

भा०— जो यह सूर्य लोक है उसके प्रकाश में श्वेत और हरि रंग-बिरंगी अनेक किरणें हैं जो सब लोकों की रक्षा करती हैं। इसी से सबकी सब प्रकार से सदा रक्षा होती है, यह जानने योग्य है। [दयानन्द भाष्य]

इसी विषय का समर्थन "अखण्ड ज्योति" मथुरा का मासिक पत्र १९५८ अगस्त में एक लेख निकला,

"किस किस पदार्थ से निकले रंग किस वृत्ति को बदल देते हैं ?

१— जटामांसी, मांश, तिल की आहुति से जो रंग पैदा होते हैं, वह कामवासना को बदल देते हैं।

२— चावल, जौ— क्रोध की वृत्तियों को और शरीर की

अग्नि को बदल देते हैं।

३- मूंग और छोटे अन्न लोभ वृत्तियों को बदल हैं जो

औषधियां जिस रोग को दूर करने में प्रयुक्त होती हैं, उनके जलाने से सूक्ष्म परमाणु उत्पन्न होकर उन रोगों को दूर करते हैं, (इसका कुछ विस्तार पूर्व परिशिष्ट में आ चुका है।) वह सूक्ष्म परमाणु उस आध्यात्मिक वासना को भी बदल देते हैं जिससे वह रोग पैदा हुआ है।

वैज्ञानिकों ने सूर्य रश्मि का विश्लेषण कर सात रंग उसमें दिखाए हैं। VIBGYOR – अर्थात् Violet= बिनफर्शी, Indigo=नीलमू, Blue=नीला, Green=हर Yellow=पीला, Orange=सन्तरा, Red=लाल।
यह सब रंग मिलकर श्वेत रंग बनता है।

एक अमेरिकन डाक्टर गैटिस का कहना है कि एक व्यक्ति क्रोधित हो गया, वह उसके श्वासों को एक बोतल में बन्द करता गया, तो देखा कि परमाणुओं का रंग लाल गुलाबी बन गया, उससे उसने एक शूकरनी पर इन्जेक्शन किया वह तुरन्त मर गई। उनका कहना है कि यदि एक घण्टा के क्रोधित श्वास बोतल में लिए जायें और फिर उनसे इन्जेक्शन किया जाए तो २०

आदमी मर जाएंगे, ऐसे ही दुःख, घृणा आदि के समय जो श्वास निकलते हैं उनमें इतनी विषैली रंगीन(भिन्न-भिन्न प्रकार के रंग वाली) गैस होती है कि मनुष्यों को बहुत हानि पहुँचाती है, क्रोध का रंग लाल है। क्रोधित आदमी का मुख तमता जाता है।

स्मरण रखो कि यज्ञ विध्वंश करने वाला "क्रोध" है, अपमान करने वाला 'लोभ', निष्प्राण करने वाला 'मोह है, निर्जीव करने वाला 'असत्य' है। इसलिए यज्ञनिष्ठ बनना चाहो तो इनसे बचो और अग्नि के रंगों को देखते हुए अन्तःकरण को पवित्र और निष्ठावान बनाओ।

(काम का रंग सफेद, लोभ का हरा, मोह का पीला और अहंकार का नीला है।

यह सब रंग यज्ञग्नि में निकलते हैं विशेषकर जब सोमरस से यज्ञ किया जाता है तो वह रंग निकल कर ध्यानी याजक की उसी रंग की कुवासना को काट देते हैं। Diamond cuts diamond लोहा लोहे को काटता है, सजातीय परमाणु सजातीय को आकर्षण करते हैं, वैं इन पाँच आन्तरिक शत्रुओं पर अधिकार करा बड़ी कठि

नता और परिश्रम का काम है, परन्तु यज्ञ में केवल ध्यान मात्र से सहसा यह लाभ उठाकर सूक्ष्म शरीर को जगाने और अन्तःकरण को इन मूंजियों से मुक्ति दिलाने में बड़ा योगदान मिलता है। आजमा कर देखिए

वेद कहता है "इयं यज्ञो देवया"। यह यज्ञ मुक्ति दिलाने वाला है। मुक्ति योग की अन्तिम सिद्धि है अतः यज्ञ से योग की प्राप्ति सुगम है। यजुर्वेद अध्याय १, मन्त्र १९ भी इस विचार की पुष्टि करता है।

—:o:—

हवन यज्ञ में आध्यात्मिक ज्योतिष

ज्योतिष का अभिप्राय कारण को देखकर कार्य था या कार्य को देखकर कारण था अनुमान करना है और यह अनुमान प्रायः उन लोगों का सत्य होता है जिन्होंने इस कार्य को अपना व्यवसाय बना लिया है यां खोज में लगे हैं। यहां हम कई वर्षों के परीक्षण अनुमान तथा अनुभव के आधार पर आपको यह बतलाना चाहते हैं कि यज्ञाग्नि में अनेकों प्रकार की तबदिलियां किन २ कारणों से होती हैं, लो सुनिये :—

(१) जब याजक हवन करते समय अपनी पूरी-२ सावधानी बर्तता है और सामान भी सब ठीक ठाक है फिर भी अग्नि में बार-बार मन्दता आ जाती है समिधाओं को हेर-फेर करने पर भी प्रचण्ड नहीं होती तो समझो कि याजकों में अहंकार वृत्ति का उद्भव हो रहा है।

(२) जब अग्नि धूवां करने लगे और याजकों के नेत्रों में कष्ट हो तो समझो क्रोध द्वेष और ईर्षा की तरंगें उठ रही हैं।

(३) जब समिधायें कड़-कड़ करें या तिड़-तिड़ हों तो कामवृत्ति उत्पन्न हो रही समझें।

(४) जब चिंगारियां उड़कर वस्त्रों में पड़ने लगें तो लोभवृत्ति उपज रही जानो।

(५) जब अग्नि समिधाओं में प्रवेश ही न करे तो मोह वृत्ति जग रही समझो।

चुनाँचि ऋग्वेद ८–११–४ इसका समर्थन करता है—ओ३म् अन्ति चित् सन्तमह यज्ञं मर्तस्य रिपोः। नोपवेषि जात वेदः ॥

भावार्थ—हे (जातवेदः) समस्त पदार्थों के ज्ञाता प्रभो ! (रिपो मर्तस्य) पापी पुरुष के (अन्तिचित् सन्तं यज्ञं) अतिसमीप विद्यमान् यज्ञ को (न उपवेषि) प्राप्त नहीं होता, नहीं स्वीकार करता तू शत्रुता के भाव को रखने वाले मनुष्य के यज्ञ, पूजा, आदर भाव को वा दान को स्वीकार नहीं करता ॥ [जयदेव भाष्य–7]

इसलिये अपवित्रता के कारण यज्ञाग्नि शान्त हो जाती है।

❋ अपवित्रता के कारण ❋

१. प्रमाद, जब समिधा सामग्री अथवा घृत की आहुति चढ़ाते मन दूसरे विषयों में चला जाए, अग्नि बुझ जाती है।

२. कोई रजस्वला स्त्री मासिक धर्म के समय यज्ञ में आ जाए और उसकी दृष्टि पड़ जाये या स्पर्श हो जाये

३. याजक के मन में किसी वयोवृद्ध पूज्य देव का निरादर या अपमान के विचार उठें या किसी से कलह किया हो।

आया पटना से एक बार हमारे पास किसी मित्र का पत्र कि ६१ लाख गायत्री अनुष्ठान के बाद जब वह १२५ आहुति देने के लिए दीपक और यज्ञाग्नि जला चुका और आहुतियां दे रहा था कि सहसा उसके मन में एक शत्रु के प्रति अनिष्ट चिन्तन होनें लगा और वह आहुति देता रहा तो देखा कि सहसा अग्नि और दीपक दोनों बुझ गये।

ऋतुमति स्त्री को इन दिनों एकांत में रहकर ईश्वर चिन्तन करना और किसी पारिवारिक या सामाजिक काम में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिये, उसकी दृष्टि का बुरा प्रभाव पड़ता है, अथर्ववेद ५–१३–४ इसका समर्थन करता है—

चक्षुषा ते चक्षुर्हन्मि विषेण हन्मि ते विषम् ।
अहो म्रियस्व मा जीवीः प्रत्यगम्येतु त्वा विषम् ॥

भावार्थ—हे तक्षक नाग। आंखों के बल से तेरी आँख की शक्ति का नाश करता हूं और विष के बल से तेरे विष के बल को विनष्ट करता हूँ। हे (अहे) सर्प ! तू म्रियस्व। मर जा, (माजीवीः) अब तू जीता नहीं रह सकता, यह विष लौट कर तेरे पास ही आ जावे।

अब प्रश्न होता है कि असफलता क्यों ?

इसका उत्तर पृष्ठ १४६, १४७ पर आ चुका है।

यज्ञ तो अन्तकरण की शुद्धि का साधन है और इन्द्र की प्रसन्नता का एकमात्र साधन है।

अतः तिल में घृत तथा शहद मिलाकर हवन करने वाले के शहद वाणी को और गोघृत बुद्धि को पवित्र करता है ; देखिए ऋग्वेद १०–४२–१०

गोभिष्टरेमामतिं दरेवां क्षुधं पुरुहूत विश्वाम् ॥

गोदुग्ध पीने वाले की कभी अमति दुर्मेति नहीं होती।

प्रत्येक वेद के यज्ञ की समिधायें भी जुदा जुदा हैं

ऋग्वेद के यज्ञ में ब्राह्मण वर्ण पीपल, पलाश, बड़ आदि की। यजुर्वेद के यज्ञ में आम, गूलर, बेर, अथवा जण्डी, कैर, बेद। साम वेद के यज्ञ में शूद्र वर्ण अर्थात् कीकर, सरस आदि को छोड़ कर सब प्रकार की पड़ती है।

❋ ज्योतिष ❋

यज्ञ में श्वेत रजित (चाँदी) रूप उषा पैदा होती है। उसको याजक ध्यान में रखे। यदि उस समय उसकी

सुषुम्णा नाड़ी चल रही होगी तो तुरन्त मस्तिष्क में प्रभाव कर जायेगी। उसकी बुद्धि यौगिक भाषा में ज्योतिष्मती प्रज्ञा बन जायेगी।

यदि दाईं नासिका चल रही हो तो प्रभाव न पड़ेगा। यदि बाईं चल रही हो तो 'सचेत याजक' उसे ग्रहण कर सकता है अर्थात् जो क्रिया में सावधान है॥

यह उषा आलस्य दूर करती उत्साह बढ़ाती है और शुभ कर्मों में जाग्रत करती है। आध्यात्मिक मार्ग के लिये प्रकाश पवित्रता देती, अज्ञान आदि का नाश करती है।

यज्ञ तामसिक बन जाता है :—

(१) विधिहीन हो (२) मन्त्र रहित हो (३) कुसमय हो (४) असावधानी वर्ती जावे (५) यज्ञ में ठट्टा और विनोद की बातें चल पड़ें (६) हिंसा का भाव पैदा हो जाए (७) यजमान पुरोहित, ऋत्विज आदि यज्ञ मन्त्रों के अर्थ न जानते हों (८) यजमान में कृपणता वा पुरोहित में स्वार्थ पैदा हो जाये (९) यजमान चञ्चल वृति मन्त्रों को नहीं सुनता।

यज्ञ राजसिक बन जाता है, जब :—

(१) यजमान का चित्त और विचार ऋत्विक् के अधीन न हो।

(२) ऋत्विज क्रिया कराना जानता है अर्थ नहीं जानता।

(३) यजमान में अपने दान का वा पुरोहित में अपने पाठ उपदेश का अहंकार आ जाए।

यज्ञ सात्विक है जब यजमान अपने चित्त को अन्य वृत्तियों से हटा कर ऋत्विज के आधीन कर दे और एकाग्रचित होकर कार्य करे।

* ३—रोगों के उपयोगी संकेत *

१. खाँसी—नाक की एक ओर या होठों के ऊपर नाक के पास या कान को जोर से दबाने से खांसी बन्द हो जाती है अथवा बार-२ दर्पण देखने से दूर होती है।
२. सिर दर्द—जो दर्द प्रातःकाल हुआ करता है दोनों हाथ कुछ देर ऊपर उठाकर रखने से अच्छा हो जाता है।

३. नाक में कोई वस्तु घुसना—यदि कोई वस्तु नाक में घुस जावे तो दूसरे नथने को बन्द करके उस मनुष्य

के मुंह से मुंह लगाकर जोर से फूंक देवे ऐसा दो तीन बार करने से वह चीज निकल जाती है।

४. छाती का दर्द–एक पट्टी तीन ईंच चौड़ी दर्द के स्थान से लेकर छाती तक बांधे, कई बार अदल बदल करते रहें या बगल से आरम्भ करके चंद लपेट छाती के गिर्द लगाएं और दूसरी ओर पिन से टाँग देने से दर्द को शान्ति मिलेगी।

५. वमन (कै)–बाजू के बांधने से कै रुक जाती है।

६. छींक–चिन्ता करने और नाक कान मलने से बन्द हो जाती है।

७ कान में पानी पड़ना–जिधर के कान में पानी पड़ गया है उसके विरुद्ध एक पांव पर कूदने से निकल जाता है।

८. नकसीर फूटना–मुंह पर ठण्डा पानी डालना और दोनों हाथ ऊपर को ऊठाने से बन्द होती है।

९. हिचकी–किसी बात को अचानक चिन्ता में लगा देने से अथवा भौहों के स्थान पर ३ मिनट तक अंगूठे से दबाने से हिचकी बन्द हो जाती है। गर्भ-

वती स्त्री की हिचकी आमाशय के स्थान पर एक छोटी गद्दी रखकर चौड़ी पट्टी बांधने से दूर हो जाती है।

१०. अजीर्ण—बाजू आगे बढ़ाकर हाथ जोड़कर दाहिने बांये को दस बार इस प्रकार मोड़ने से अजीर्ण लाभदायक है।

११. नकसीर—गर्दन की मालिश से नकसीर अच्छी होती है

१२. बिवाई फटना—प्रातः सायं मालिश किनारों से ऊपर की ओर की जावे तो आराम शीघ्र होता है।

१३. चेचक—रोगी को सूर्य की रोशनी से पृथक रखकर अंधेरे में रखें तो दानों में न पीप पड़ेगा न दाग अधिक प्रकट होंगे।

१४. आतशक गर्मी—सूर्य निकलने से पूर्व ताजा पानी प्रतिदिन पिया करें तो कभी नहीं होगा।

१५. सिरदर्द—बार-बार सिर में कंघी करने से अथवा मजीठ का टुकड़ा बांधने से जाता रहता है।

१६. सोजाक (मूत्र कृच्छ्र)—प्रारम्भ में तीन दिन न खावे तो स्वयं आराम आ जाता है।

१७. दर्द कमर—भोजन के पश्चात्त मूत्र करने का स्वभाव डालें, कभी नहीं होगा।

१८. दर्द दांत—शौच समय दांतों को दबाकर बैठें, कभी नहीं होगा।

१९. बवासीर—बोझदार वस्तुओं को उठाकर ले जाने का कुछ दिन अभ्यास करने से अच्छी हो जाती है या उत्पन्न नहीं होती।

२०. बिच्छू का काटा—इमली का बीज पानी में घिसकर काटे की जगह जोर से चिपका दें।

२१. सोते समय सीधे लेटकर पैरों के पंजों की ओर या कण्ठ में मानसिक ध्यान लगाने से तुरन्त नींद आ जाती है।

२२. ज्वर या किसी तरह का दर्द फोड़ा, घाव आदि हो और बहुत दुख दे रहा हो तो उस समय जिस नथने से श्वास चल रहा हो उसे अति शीघ्र बन्द कर दें। जितनी देर या जितने दिन शरीर पूर्व अवस्था पर न आये उतनी देर या दिन नथना बन्द रखें। ऐसा करने से शीघ्र आराम आ जायेगा।

२३. अस्थि भंग की दवा—मजीठ, महुए की छाल और इमली के पत्ते पीसकर गरम करके बांधने से हड्डी जुड़ जाती है।

२४ रक्त स्राव बन्द करने अथवा चोट लगने व नाड़ी

कटने पर मिश्री बारीक पीसकर या चीनी लगा दें, रक्त का बहना तुरन्त बन्द हो जाएगा ।

२५. गूगल की धूनी से क्षेय रोग, श्वांस, कास, विषम ज्वर, जीर्ण ज्वर, सन्निपात को लाभ होता है ।

२६. प्रमेह—पलाशफल एक तोला, चीनी आधा तोला एक साथ ठण्डे बासी पानी के साथ पीने से सब प्रकार का प्रमेह दूर हो जाता है ।

२७. प्रदर—गूलर के पत्ते का रस एक तोला, चीनी १/२ तोला लाख दानेदार बारीक पीसकर छान कर प्रातः काल ४ माशा के साथ ग्रहण करने से खून का अधिक आना एक सप्ताह में अवश्य दूर हो जाता है ।

२८. बन्ध्या दोष—आसगन्ध का काढ़ा दूध में ओटाना फिर घी १ तोला मिलाकर ऋतुस्नान के पश्चात पीने से बन्ध्या दोष दूर हो जाता है ।

२९. प्रसव विलम्ब चिकित्सा — अपामार्ग की जड़ पीस कर चवन्नी भर खिलाने से शीघ्र प्रसव होता है ।

३०. रजौदर्शन का उपाय—जिस स्त्री का रजोदर्शन बन्द हो गया हो वह कुछ दिन अजवायन अथवा काले तिल प्रातः सायं १, १ तोला खावे, रजोदर्शन खुल जायेगा ।।

—स्वामी अभयानन्द सरस्वती (अनुभूत)

॥ ओ३म् ॥

श्री पूज्य महात्मा प्रभुआश्रित जी द्वारा लिखित पुस्तकें

नाम पुस्तकें		मूल्य
गायत्री रहस्य (हिन्दी)	—	५-००
गृहस्थाश्रम प्रवेशिका	—	१-७०
गृहस्थ सुधार	—	५-००
जीवन-चरित्र श्री महात्मा जी पहला भाग	—	१-५०
,, ,, चतुर्थ भाग	—	३-००
आत्म-चरित्र	—	२-५०
प्रभु का स्वरूप	—	२-५०
मन्त्र योग १, २ भाग	—	२-५०
,, ,, ३, ४ भाग	—	३-५०
योगिक प्रेरणाएं	—	१-५०
सप्त सरोवर	—	०-५०

श्रेष्ठ जीवन	—	
सौम्य सन्त	—	
अमृत के तीन घूंट	—	
गायत्री कुसुमाञ्जलि (हिन्दी)	—	
,, ,, (अंग्रेजी)	—	
भाग्यवान आदर्श गृहस्थी	—	
स्वामी विज्ञानानन्द लिखित पुस्तकें	—	—
अध्यात्म-सुधा नं० ४	—	७–५०
यज्ञों की प्रमाणिक पुस्तकें—७वां संस्करण—		—
सन्ध्या प्रभाकर	—	२–५०
अध्यात्म-सुधा नं० ५	—	१–५०
गृहस्थ दुःख निवारण काया कल्प यज्ञ	—	१–२५
मेरी माँ	—	२–००
दुर्लभ वस्तु	—	०–२५

इत्यादि पुस्तकें हर समय तैयार मिलती हैं।

पुस्तकें मिलने का पता :—

जवाहर लाल 'सोनी'

वैदिक भक्ति साधन आश्रम, रोहतक।